विभिन्न भारतीय भाषाओं के बीच पारस्परिक आदान प्रदान योजना के अंतर्गत
प्रकाशित कन्नड़ की महान औपन्यासिक कृति

आद्य रंगाचार्य

अनुवाद
बी० आर० नारायण

## प्रकृति-पुरुष

मूलप्रकृति रविकृति, महदाद्या प्रकृति क्तिय सप्त।
पोड्शकस्तु वितारो, न प्रकृतिर्न विकृति पुरुष ॥

—सारयकारिका

# प्रकृति-पुरुष

# प्रक्रांत

रागण्णा ने फिर से घड़ी देखी। दोपहर के साढे बारह बजे थे। उसे वहाँ आकर बठे डेढ़ घंटा हो गया था। सदेह होने पर उसने घड़ी कान से लगा कर देखी, वह चल रही थी। साढे बारह हो चुके थे। साहब के कमरे की ओर देखते देखते, उनकी आवाज की प्रतीक्षा मे डेढ घंटा हो चुका था। रागण्णा को भीतर-ही भीतर हँसी आई। काम पर हाजिर होने का उसका यह पहला दिन था। रोजाना साहब के कमरे के सामने घंटा प्रतीक्षा करनी हो तो उसके काम का क्या होगा, उसने सोचा। इधर उधर चक्कर काटने वालो को देखने मे उसने कुछ और मिनट बिताये, फिर वह सोच मे डूब गया। हाज़िर होते ही उसे बुलाने वाला यह साहब कौन है ? नाम तो बी० राम लिखा है। इस विभाग का मुख्य अधिकारी है। लेकिन इससे क्या ? बी० राम कहने से किसी प्रकार का चित्र रागण्णा के सामने नही उभरा। इसके अलावा उसने कहलाया है, 'हाजिर होते ही मेरे पास भेजना।' मेरा कोई विशेष परिचय नही, मेरा कोई बडा ओहदा नही फिर भी मेरी ओर ही खास रुचि क्यो ? जब उसके पास यह सदेश आया, मिस्टर आर० जी० बिट्टूर, आपको साहब बुला रहे है।' तो एक मिनट के लिए वह हैरान हुआ। वह अब तक रागण्णा नाम से पुकारा जाता रहा था। इसलिए आर० जी० बिट्टूर सुनकर उसकी समझ मे नही आया कि उसी का बुलाया जा रहा है। वह भी बडे साहब से मुलाकात के लिए। पता नहीं कि साहब कितने बडे होगे, वह सोचता रहा।

आर० जी० बिट्टूर आप ही है ? आपको भीतर बुलाया गया है।"

उसका विचार-क्रम भग हो गया और वह उठ खडा हुआ। घबराहट मे खाने के बाद उसने पानी भी नही पिया था, यह बात अब उसे याद आई।

साहब के सामने मुह खोलते ही हिचकियाँ आ जायें तो ? यह सोचकर उसे और भी घबराहट हुई थी। इतने में वह कमरे में दाखिल हो चुका था। मुह तो खुला पर गनीमत यह हुई कि हिचकियाँ नहीं आयी।

सामने आराम से बैठे साहब को देखते ही रागण्णा का मुह खुला-का खुला ही रह गया। क्या यही बडे साहब हैं ? उसने सोचा।

ज्यादा से ज्यादा उससे चार-पाँच साल बडे होंगे। कहीं यह भी बडे साहब हो सकते है उसे विश्वास न हुआ। इस आश्चर्य के कारण खुले मुँह को बद करने का भी उसे ध्यान न आया और इतने में एक और आश्चर्य ने उसे जहाँ खडा था वही स्तभित कर दिया।

"बठिए।"

साहब की ध्वनि ! कन्नड के शब्द ! रागण्णा हैरान हुआ। नाम देखने पर यह सदेह नही होता है कि वे कन्नड भाषी हैं। फिर भी वे कन्नड भाषी ही निकले।

'बिट्टूर से ही आये है क्या ?"

रागण्णा ने मुह खोला। उसे इस बात का बोध ही नहीं हुआ कि उसके मुह से शब्द नही निकले फिर भी होठ हिले।

"आप किस परिवार के हैं ?"

बे-ब-नही दे-देशपाडे '

' रघुनाथराव से क्या रिश्ता है ?"

रागण्णा ने थूक निगला "उनका पोता हूँ मैं।" और हाथ में रूमाल न होने की बात भूलकर चेहरे के पसीने को पोछने के लिए हाथ उठाया।

साहब बडप्पन की हँसी हँसे। पता नहीं, वह कैसी हँसी थी। रागण्णा को ऐसा लगा कि किसी ने उसे छुरा भोक दिया हो। उसकी घबराहट पर हँसे होंगे ? वह भी कैसा मूर्ख है। सब तयारी करके आने पर रूमाल ही भूल आया था। या रास्ते में गिर गया होगा। उसने निश्चय किया कि दफ्तर आते समय जेब में रूमाल रखना नही भूलना चाहिए।

"रघुनाथरावजी को तो मैं जानता हूँ। तो आप गुडेराव के बेटे है।

'जी हा।' निगलने के लिए थूक काफी न होने से उसकी सास रुकने लगी।

"बिटटूर को मैं अच्छी तरह जानता हूँ।" वह कर साहब ने सामने पडे कागज उठा लिए।

कुछ देर तक दोना बोले नही। रागण्णा को सदेह हुआ कि शायद उसको उत्तर देना चाहिए था। पर खामोशी की अवधि बढते देखकर उसे इस बात का डर हुआ कि अब जवाब देना ठीक नही है।

साहब कागज देखते हुए बाले, 'बिटटूर को मैं अच्छी जानता हू।" रागण्णा साच ही रहा था कि अब ता जवाब देना ही चाहिए। पर तभी साहब बोले, 'अच्छी बात है, फिर मिलेंग।"

रागण्णा की स्थिति ऐसी हुई मानो दगल म हजारा प्रेक्षका के सामने वह चित हा गया हो। वह निर्जीव प्राणी के समान पाव घसीटता अपने कमरे की ओर चल पडा।

रागण्णा के बाहर निकलते ही साहब का साहबीपन उतरा। बी० राम० अपने आप हँस पडा। बेचारा। लडका कितना घबरा गया? साहब के यह कहने पर कि बिटटूर को मैं अच्छी तरह जानता हूँ उसके चेहरे पर पसीना उभर आया न? रागण्णा को इस बात का शक नही हुआ होगा कि यह कौन है? 'बिटटूर' शब्द से उस तो कुतूहल उत्पन्न हुआ था। देशपाडे रघुनाथराय कहते ही इस एकदम सूझ गया कि वह रागण्णा ही है। पर रागण्णा का इसके बारे मे सदेह नही हुआ। बी० राम को तो यह आश्चय हुआ कि चौदह सालो म वह स्वय कितना बदल चुका है। यदि वह बिटटूर' न कहता तो स्वय उसे भी रागण्णा का परिचय कसे मिलता? उसने सोचा कि यदि अपना परिचय दूसर को न दिया जाय और दूसरे का परिचय अपने को न मिले ता कितना मजा आता है। बेचारा! रागण्णा के नाम के साथ 'बिटटूर' लगे रहने से उसे पहचानने मे सुविधा हुई, पर उसक नाम के साथ एसा कुछ न लगे रहने से रागण्णा को सुविधा नही हुई। बी० राम भी कसा नाम ह! अब तक उस इतना ही पता था कि नाम मे चमत्कार होता है। पर अब पता चला कि नाम ही चमत्कारी होता है।

यह कह सकते हैं कि बी० राम नाम मे वास्तव म चमत्कार है। उसे मालूम था कि यह अनेक रूपातरा का अतिम फल है। उससे भी पहले

वह एच० क० राम था। वह भी एच० के० भरमा का रूपांतर था। गुरु म इसका मूल रूप भरमा य० होलय था। पता नहीं कब—अब उसकी याद तक नहीं है—भरमण्णा कालप्पा हालय था। भरमण्णा कालप्पा होलय का बी० राम बनना चमत्कार ही तो था। रागण्णा शायद जिस व्यक्ति स परिचित हो सकता था वह चौदह वष पहले का भरमप्पा था। बचारे के लिए यह कैसे सभव हो सकता था कि वह बी० राम के नाम स परिचित हो।

इधर साहब के कमर से बाहर निकले रागण्णा को भी डर लगा। बी० राम कौन हो सकता है ? कन्नड बोलने वाला यह बी० राम कहाँ का हो सकता है ? रघुनाथराय का परिचित है, उसके दादा का परिचित है पर वह तो बहुत छोटी उम्र का है। यह कैसे ? कहता है, बिट्टूर को अच्छी तरह से जानता हूँ। यही अचरज की बात है ! अगर बिट्टूर को जानता है तो उसने अपना नाम बी० राम क्या रखा ? यह नाम दखने स ऐसा नहीं लगता कि वह बिट्टूर के सौ मील आस-पास का भी हो। फिर भी बडा परिचित सा लगता है। कौन हो सकता है ? रागण्णा को डर लगा। शाम को कमरे म पहुँचने पर भी यह उलझन उसके दिमाग को घेरे हुए थी। बी० राम ! बी० राम कौन है ? उसे कहाँ देखा होगा ? कितने वष पहले की कहानी होगी ? बिट्टूर को मैं अच्छी तरह जानता हूँ, कहा था साहब ने। यह कैसे ?

जब बी० राम न कहा कि मैं 'बिट्टूर को अच्छी तरह जानता हूँ' तब उसे यह मालूम न था कि यह चौदह वष पुरानी बात है।

चौदह वष पुरानी बात !

तब वह बारह वष का था।

रागण्णा आठ वष का।

चौदह वष पहले 1930 का अंत या 1931 के शुरू का समय रहा होगा।

उस दिन की बात वह कभी भूल नहीं सकता। उस एक बात की याद ! पर क्या बी० राम का यही अभिप्राय था कि वह सब जानता है।

ऐसी महत्त्वपूर्ण घटना थी वह।

उसके दादा परशुराम को इतनी मार पडी थी कि वह जमीन पर लोट-लोट गया था न ? उसके पिता कालप्पा को, तीस वर्ष के मर्द को, पीछे हाथ बाँधकर इतनी धुनाई की गई थी कि उसकी धोती तक साबुत नही बची थी। उस पिटाई के पीछे रागण्णा के बाप गुडेराय का ही हाथ था। उसकी ही दुष्टता थी। वह बात कभी भूल नही सकता।

साहूकार रघुनाथराय, उसका बेटा 'गवनर' गुडेराय।

पर उसके दादा, परस्या उसका बाप कालिया। वह भूलने लायक कहानी ही नही। सब याद है। अच्छी तरह याद है।

इसीलिए तो वह यह कहते समय कि 'बिटटूर को अच्छी तरह जानता हूँ' भीतर ही भीतर दात पीस रहा था। बी० राम के उस बडबडाने की ध्वनि मे जो द्वेष भरा था वह रागण्णा को सुनाई नही द रहा था।

'बिटटूर को मैं अच्छी तरह जानता हूँ ?' यह उसन इतने बदले की भावना से क्यो कहा ? यह बात रागण्णा के दिमाग को साल रही थी। उससे केवल तीन चार साल बडा होगा पर इसका अनुभव उसे क्यो ? ऐसी कौन सी घटना है जिसने बी० राम के मन म द्वेष पदा किया होगा ?

उसे भी याद हो सकता है न ?

वसे देखा जाय तो ऐसा कोई अनुभव उसे याद नही आता। मुख्य बात है कि बी० राम जैसा व्यक्ति अब तक उसके जीवन मे कब और कहाँ आया होगा ? यह रागण्णा को सूझा नही। उसकी परिस्थिति ही ऐसी थी। शुरू मे दादा की अवनति का जमाना था। बाद मे गुडेराय की 'गवनरी,' उसके बाद धीरे-धीरे गरीबी का आक्रमण। इसलिए पेट पालने के लिए रागण्णा को नौकरी ढूढनी पडी। सभी परीक्षाओं म प्रथम श्रेणी मे उत्तीण होन पर भी नौकरी के बिना भटकना पडा। साहित्य म विशेष योग्यता प्राप्त करने पर भी आपूर्ति विभाग म क्लर्की मिली। बेकार मे साहित्य-सेवा करने की अपक्षा यह अच्छा ही रहा।

चौदह वर्षों म साहूकारी के वैभव से लुढककर नौकरी जैसे निरभिमान जीवन पर उतर आई थी।

ऐसी स्थिति मे बी० राम को उससे द्वेष होने का क्या कारण होगा ?

बी० राम म द्वेष था बहुत था। 'बिट्टूर को अच्छी तरह जानता हूँ' कहते समय उसने दाँत ऐसे कटकटाये मानो बिट्टूर को पीस देना चाहता हो। पर रागण्णा को इसके कारण का आभास हो पाना संभव नहीं था। बी० राम के जबड़े मे चकनाचूर होने वाला बिट्टूर कोई और था और रागण्णा का परिचित बिट्टूर कोई और।

उसम स किसी भी बात से अपरिचित चौदह वर्षों के उसके सुख-दुख का साथी बिट्टूर रागण्णा का था।

'मैं अच्छी तरह जानता हूँ' कहते समय बी० राम केवल एक चित्र ही याद कर रहा था। आज भी उसके हिस्से म बिट्टूर का वही चित्र था।

वह कैसा चित्र! बारह वर्ष के भरमा को (तब यह बी० राम नहीं बना था) कभी भी न भूल पाने वाला चित्र। पता नहीं क्या? गांधी नाम के किसी व्यक्ति ने होलेय आदि अस्पृश्यो के उद्धार के लिए कमर कस रखी थी। भरमा को यह कल्पना तक न थी कि उसके माने क्या होते है। पर भरमा इतना जानता था कि उस बात पर उसके दादा ने बार-बार विवाद से सिर हिलाया था। एक बार उसने हठपूर्वक सिर हिलाया था।

भरमा ने पूछा था 'क्या बात है, दादा?'

दादा ने कहा था, 'जमाना उलट पुलट हो रहा है बेटे।' भरमा को कुछ समझ म नहीं आया था। दादा परशुराम अपने आप बडबडा रहा था 'सवर्णों के साथ चलना हमारे कुल का धर्म नहीं है।" यह परशुराम का अपना विचार था। वह डरता था, "उन लोगो के मंदिर में पाँव रखने से *टाँगें टूटकर गिर नहीं जाएँगी?' पर लोग कुछ और ही कहते थे।*

लोग ही क्यो? उसका बेटा कालप्पा ही कह रहा है हम भी सवर्णों के समान ही हैं।'

दादा ने कहा जमाना उलट-पुलट हो रहा है, बेटे।" भरमा की समझ म नहीं आया। पर उसके पिता कालप्पा को देखने पर ऐसा लगता था कि किसी काम म वह सदा जुटा रहता है। वह शाम के समय कई लोगों को साथ लेकर बैठता था। वे लोग पहले की तरह शराब नहीं पीते थे। उसका कुछ अजीब सा सम्मान था। इसलिए भरमा भी पिता से

डरता था। ऐसे ही एक दिन हाथ बाधकर उसका कसा अपमान किया गया। उसने देखा तो नहीं था पर मालूम था। और एक रात बेचारे कालप्पा की इतनी धुनाई हुई थी कि वह मरते मरते बचा था।

क्या ?

ऐसा क्या हुआ था ?

उसके पिता की ऐसी हालत क्यो हुई ? इसकी कल्पना तक भरमा नही कर पाया। एक दिन रात के समय उसे जगाकर कालप्पा गाव छोडकर चला आया था। उसे केवल यही एक बात याद है। यह सब उसकी आखो के सामने हुआ था। बारह वष के छोटी उम्र के मन पर घटना का गहरा प्रभाव था। उसका भूलना कभी सभव नही था।

बी० राम ने मन-ही मन उसे याद करके कहा था, 'बिट्टूर को अच्छी तरह जानता हूँ।' उसने सोचा वही बिट्टूर है न, जिसने उसके पिता को बेसहारा बनाकर भगा दिया था ? बी०राम मन मे कह रहा था, 'जानता हूँ उसके रहस्य का।'

पर उसका रहस्य भरमा को मालूम न था। यह सच है कि उसने अपनी आखो से देखा था। यदि वही बारह साल के लडके को रहस्य लगे तो इसम आश्चय क्या है ? आयु ने उस रहस्य को भरमा से छिपा रखा था। साथ ही पिता न भी बेट से उसे छिपाकर रखने का प्रयास किया था। एक दृष्टिकोण से कालप्पा सुधर चुका था। महात्मा गाधी म विश्वास रख कर आत्मोद्धार के लिए सगठन करना चाहता था। यह सब कालप्पा की भी ठीक तरह स समय मे नही आता था। तो भरमा की समझ मे आना कसे सभव था ? कालप्पा किसी वडे तक के आधार पर सगठन के काम मे नही जुटा था। अपने लोगो म अपने लिए गौरव प्राप्त करना कालप्पा का उद्देश्य था पर रोज उसकी इज्जत घटती जा रही थी। और उसके अपने लोग ही उस पर हँसते थे। उसकी ऐसी स्थिति हो गयी थी और उसे वह जानता था। उसका कारण भी उस मालूम था। पर क्या किया जाय ? वह कारण उनके काबू मे न था जो सदा से उसे मालूम था। गगी का स्वभाव ही ऐसा था। उसकी पत्नी गगी ऐसी होगी इसकी कल्पना कालप्पा को स्वप्न मे भी न थी। वैसे देखा जाय तो कालप्पा को इन दिनो

उसकी चिंता भी नहीं। बेटा बारह वर्ष का है। गगी के छोटे मालिक गुंडेराय की रखैल बनने से पहले ही वह पैदा हुआ था। वह उसका अपना बेटा है। अपने कुल का दीपक। यह सोचकर कालप्पा बेटे के बारे में गर्व अनुभव करता था। गगी तो खुल्लमखुल्ला सब कर रही थी जिससे कालप्पा को अपने लोगों के सामने सिर उठाकर चलना मुश्किल हो गया।

परिस्थिति को सुधारने के लिए कालप्पा अपने लोगों का सुधारक बना। पर उस घर की पत्नी ही दूसरे की रखैल बन जाय तो लोगों को सुधारने में जगहँसाई ही होगी। इसलिए ज्यों-ज्यों समाज में उसका सम्मान बढ़ता गया त्यों-त्यों वह गगी को डराने धमकाने लगा। पर गगी को गवर्नर' गुंडेराय का आश्रय नहीं था क्या? अतः बल का प्रयोग कालप्पा पर हुआ। ऐसा ही रहे तो एक न एक दिन उसकी नपुंसकता और गगी की बदचलन जग जाहिर हो जायगी और भरमा को पता चल जाएगा। यह सोचकर एक रात कालप्पा अपने बेटे के साथ बिट्टूर से भाग निकला था। यह सोचकर कि उसके बिट्टूर से पलायन का रहस्य उसके बेटे को मालूम न हुआ होगा वह कभी-कभी निश्चितता की साँस छोड़ता था। कालप्पा का दृढ़ मत था कि ऐसी बातें बच्चे को मालूम नहीं होनी चाहिएँ।

फिर भी छोटे से रागण्णा को कई बातें मालूम थीं। चौदह वर्ष पहले की कहानी है। आज उसे उसकी याद नहीं और यह कल्पना भी नहीं है। बी० राम भरमा था। रागण्णा के दिमाग में यही बात बार-बार चक्कर काटे जा रही थी। उस साहब ने 'सब मालूम है' कहा था। क्योंकि रागण्णा ने भी कई बार सब मालूम है शब्दों को इस्तेमाल किया था। ऐसा प्रयोग दूसरों को डराने के लिए किया जाता था। 'मुझे मालूम है।' कहने का अर्थ होता था खबरदार मैं सब जानता हूँ। रागण्णा का ऐसा ही अनुभव था। अब उस बी० राम ने लगभग उसी ढंग से उन शब्दों का प्रयोग किया था। अनेक वर्षों के अभ्यास के कारण यह सुनकर रागण्णा को डर सा लगा। यही क्यों? उसके बचपन में एक बार मुझे सब मालूम है कहने पर कैसा अनर्थ हुआ था। किसी प्रसंग में माँ के साथ बात करते समय माँ ने कहा था लड़कों को ऐसी बातें मालूम नहीं होनी

चाहिएँ ।" तब उसी ने कहा था, "मुझे सब मालूम है ।"

माँ ने पूछा, "सब माने क्या ?" तब उसी ने सवाल किया था, "बापू की बातें हैं कि नहीं ?"

"पागल ! उनकी क्या बात है ?"

"मुझे सब मालूम है। उनकी और गगी की ।" उसकी बातें वहीं रुक गयी थी। उसकी माँ ने उसके गाल पर ज़ोर का एक तमाचा जड दिया था, जिसकी कल्पना तक उसे नहीं थी। क्योंकि उसकी माँ ने उसे कभी ऐसे नहीं मारा था।

उस दिन रागण्णा को आश्चर्य हुआ। जो बात जैसी है उसे वैसे ही सच सच बता देने पर बड़ो को पसद नहीं आती।

रागण्णा की समझ मे नहीं आया कि उसने जो कहा और जो कुछ और भी कहना चाहता था उसका परिणाम इतना बुरा हो सकता है। लोग बातें करते थे। अछूतों को छूना अच्छा काम है। उसके पिता गुडराय ने घर के कमेर की बीवी गगी को छूकर उद्धार किया था, फिर भी उसके दादा और पिता के बीच झगडा हो गया था। कालिया रातो रात गाँव छोड़कर भाग गया था। बाद में कई तरह के झझट हुए। पर यह सब अब क्यो याद आ रहा है। 'हूँ, मुझे सब मालूम है' कहा था बी० राम ने। क्या उसे भी इसी प्रकार का भय पैदा करने वाला कोई विषय मालूम है ? धत् ! बिट्टूर और बी० राम म स्वप्न मे भी सबध होना सभव नहीं है।

फिर भला उसने 'रघुनाथराय को जानता हूँ' क्यों कहा था ?

'गुडेराय के बेटे हू क्या आप ?' कहकर हम दोनों बाप-बेटे को उसने कैसे पहचान लिया था ?

'बिट्टूर को अच्छी तरह जानता हूँ', कहा है बी० राम साहब ने।

रागण्णा को डर लगा।

शाम को अपने कमरे मे आने के बाद भी वे बातें उसके दिमाग मे गूज रही थीं।

और एक विषय था जो दोनों युवकों को मालूम न था। बी० राम ने कहा था न, 'मैं बिट्टूर को अच्छी तरह जानता हूँ।' पर उस बिट्टूर

म उस अकेले की ही नही, समस्त मनुष्य जाति की कहानी छुपी है, यह उस मालूम न था । रागण्णा को भी मालूम न था ।

मुझ सब मालूम है ऐसा कहने पर दूसरे डरते हैं । रागण्णा को केवल यही मालूम था । पर उसे यह मालूम नही था कि वह समस्त मानव जाति की प्रकृति का मूल है ।

कौन किसे जानता है ?

चार पांच फुट ऊँची लहरा को देखकर 'असीम गहरे समुद्र को जानता हूँ' कहन वाल से कौन डरता है ?

बिट्टूर को जानता हूँ कहने वाले बी० राम का बिट्टूर माने कौन-सा है यह वास्तव में मालूम न था ।

उससे पहले बिट्टूर था ।

उसके समय मे बिट्टूर था ।

जब वह नही था तब भी बिट्टूर था ।

जब नही रहेगा, तब भी बिट्टूर रहेगा ।

एसी स्थिति मे बी० राम हो या भरमा हो, बिट्टूर को कैसे जान सकते ह ? एक क्षण भर जीकर, दूसरे ही क्षण मुरझा जाने वाला प्राणी निरतर चलने वाली सृष्टि को कसे समझ सकता है ?

बिट्टूर निरतर चल रहा है, बिट्टूर प्रवहमान है ।

बी० राम को जो मालूम था वह चौदह वप पहले के उस प्रवाह मे मिलन वाली हाथ के पसीने से निकली एक बूद के समान है । पता नही, एसी कितनी बूदो के नाले मिलकर प्रवाहित हो चुके हैं । रागण्णा बी० राम का कसे पहचान पाएगा ?

उसने कहा था रघुनाथराय को मैं जानता हूँ ।

हो सकता है ।

उसने यह भी पूछा था, 'आप गुडेराय के बेटे है ?'

हा ।

उसने कहा था, मैं बिट्टूर को जानता हू ।'

क्या पागलपन ! बिट्टूर का अथ रघुनाथराय नही है, गुडेराय भी नही ह । इतना ही क्यो ? वे दोनो भी प्रवाह की बूदें है । बारह वप के लडके राम ने चौदह वप पहले बिट्टूर का रघुनाथराय का गाव समझा

था। पर वस्तुस्थिति इससे सर्वथा भिन्न थी। बिट्टूर को रघुनाथराय ने रूप नहीं दिया था। वस्तुस्थिति एकदम उल्टी है।

# 2

'यथा काष्ठ च काष्ठ' कहना रघुनाथराय की आदत सी हो गयी थी। उनकी दृष्टि मे चाहे पति पत्नी हो, चाहे सगे संबंधी हो, चाहे बाहर के हो, सभी 'काष्ठ' की श्रेणी म आते थे। उनसे मिलने जो भी आते उन सब को व यही उपदेश देते, 'तुम तो पागल हो, दो लकडियो के टुकडे तैरते हुए आकर मिल जाते है, और तैरते हुए ही एक-दूसरे से अलग हो जाते है।'

पर रघुनाथराय ने जब अपने मन मे सोचा तो एक बात का समाधान नही हुआ था। दो लकडियो के टुकडे तैरते हुए आकर मिल सकते है, पर क्या ऐसा कोई पूर्वसंकेत होता है कि अमुक दो टुकडे ही आकर मिलेंगे? रघुनाथराय को इस प्रश्न का स्पष्ट उत्तर नही मिला। कभी-कभी ऐसा लगता कि इसमे कोई पूर्वसंकेत हो सकता है। अमुक को अमुक का बेटा बन कर ही पैदा होना चाहिए। अमुक को अमुक की पत्नी ही बनना चाहिए। तो यह भी भगवान की सृष्टि मे कोई नियम हो सकता है न! नहीं तो उनके घर मे प्रत्येक पीढी मे सब बच्चे गुजर जाते हैं और अंतिम लडका-लडकी क्या बच जाते हैं? ऐसा क्यो? उसके पिता, उसकी बुआ, उसका दादा और दादा की बहिन, अब वह और उसकी बहिन सरस्वती, अब मे उनका बेटा गुंडेराय बेटी शांता—यह एक बद्ध क्रम से चला नही आया?

पर कभी कभी लगता है कि इतना लंबा चौडा पूर्वसंकेत नही रहता होगा। क्योंकि यदि वैसा कोई पूर्वसंकेत होता तो कहना चाहिए कि सृष्टि का क्रम निरर्थक और क्रूर है। नही तो और क्या? घराने का प्राचीन वैभव समाप्त हो गया है। पोता रामण्णा ब्राह्मणत्व के गौरव को तिला- देकर, सम्मान को धक्का देने वाली नौकरी ढूँढने लगा है। क्या ? पूर्वसंकेत है? तो इसका मन बड़ा कठोर होगा। कभी कभी [illegible] सोचते—वर्तमान की बात का भूल जायें तो इस दुनिया [illegible]

है वह सब भलाई के लिए ही हो रहा है। और क्या न हो ? रागण्णा क प
छोडकर जान स वतमान म ता दुख हा रहा है पर भविष्य का परिणाम
अच्छा हो सकता है न ?

रघुनाथराय को अपन आप साचन की एक आदत-सी हो गयी थी।
अठारह वप की उम्र म जब उनक पिता की मत्यु हो गयी तो व गाव
क मुखिया बन गय थ। तब उनक बराबर म बठकर बात करन वाला उस
गाव म कोई नही था। और धीरे धीर रघुनाथराय न अपने साथ आप ही
सपक स्थापित करन का रास्ता अपना लिया था। अपन साथ अपन आप
बातें करने की भी लत-सी पड गयी थी। कई बार अपन आपस जार-जार
से प्रश्न पूछते तब वहाँ खडा कोई उनकी ओर दखता तो व उस घूरन और
बिना कुछ कहे चले जात। लोग उनके इस स्वभाव स परिचित थ। पर राय
साहब ऐसा व्यवहार करत मानो व स्वय अपने से ही परिचित न हा।
वे अपन आप स पूछत मैं कौन हूँ ?"
उनको सदेह भी होता—यह सब इसी प्रकार होना चाहिए एसा कोई
पूवसकेत हो सकता है ?
व सोचकर हरान होत 'क्या मनुष्य ससार रूपी शृखला की एक कडी
है।

कभी कभी यह सब सोचकर व लबी-सी सास छोडते।

जब यथा काष्ठ च काष्ठ कहते तब रघुनाथराय अपने को लकडी का
एक टुकडा ही समझत। सदभ क अनुसार दूसरा टुकडा बदलता रहता था।
पता नही कितने लोगा का उनक साथ क्षणिक सयोग हाता था। कभी-कभी
तो रायसाहब को उस लोगो की याद तक नही रहती थी। पर रायसाहब को
यह पक्का विश्वास हो गया था कि कुछ लोगा का सयोग तो पूवसकेत स
होता है। ऐसे लोगो म एक परस्या भी था। उन दिना वह कई बार और
एक टुकडा बनकर राय साहब के सामन खडा हो जाता था। जब रागण्णा
पढने चला गया ता उसस रघुनाथराय का बडा विचित्र सा अनुभव हुआ।
पर पता नही क्या परस्या को देखते ही उनको तसल्ली सी हुई इस बात स
उनको आश्चय भी हुआ। परस्या को देखने पर उन्हे तसल्ली क्या हुई वह
कौन ? वे कौन ? दोना का कोई सबध है ?

छि ! मवध क्या खाक है !

परस्या होलेय[1] है, अस्पृश्य है। उससे भला सवध हो सकता है ?

फिर भी उसे देखते ही मन को तसल्ली क्या होती है ?

'यथा काष्ठ च काष्ठ ।' पर क्या इतने निसगत टुकडे मिल सकते हैं ?

मिलते क्या है ?

किसी एक क्षण म माता पिता द्वारा दिया गया 'परशुराम नाम उसी समय अदृश्य हो गया मानो यह सिद्धात सिद्ध करता हो कि सब कुछ क्षणिक है। उस एक क्षण के परशुराम को समस्त जीवन परस्या नाम का सकेत धारण करके जीना पडा। परस्या होलेय था। रघुनाथराय के घर का कमरा जो केवल रायसाहब के घर की झूठी पत्तलो पर पला था। रायसाहब बचपन से उसे परस्या के नाम से ही जानते थे, केवल जानते क्या, बचपन से परस्या नाम का लडका उनके साथ खेलता न था ?

रघुनाथराय के लिए यह एक आश्चय था। कभी-कभी वह किसी पूव-सकेत का एक दृष्टात सा लगता था। परस्या रायसाहब से चार साल बडा था। यह उन्होंने बचपन से सुन रखा था। रायसाहब छह साल के थे और परस्या दस साल का था। बालक रघुनाथराय के लिए परस्या एक दूसरा लडका मात्र था जो रोज उसके घर आया करता था। वह बडा होने पर भी दूर खडे होकर हुक्म बजा लाया करता था। दोनो एक साथ खेलते भी थ। एक दिन खेल-खेल म पास के कुड मे मछली पकड रहे थे। तब रघुनाथराय के पिता को कही से आते देखकर परस्या भाग निकला था। पिता न रघुनाथ को डाटा और परस्या के साथ कभी न खेलने की ताकीद की। पर बडा का बडप्पन वही खत्म नही हुआ। दोपहर तक परस्या पकडकर बुलवाया गया। लडका डरकर पता नही कहाँ भाग गया था उसने खाना तक नही खाया था। उसका मुह उतरा हुआ था और आखो से आसू बह रहे थे। छोटे रघु की समझ में नही आया था कि परस्या इतना क्या डर गया ? उसे खुद को डाट पडी थी न ? अब पकड कर लाये हैं। उसे भी डाट पडेगी।

1 हालय अस्पृश्य समझी जाने वाली एक जाति

तभी रघु के विचार का दो टुकडो म काटने वाले खडग के समान परस्या की चीत्कार सुनाई दी। रघु ने हरान होकर देखा। घर का नौकर मुद्दप्पा परस्या को धुन रहा है। यह क्या ? मुद्दप्पा क्या मार रहा है ? रघु की समझ मे नही आया, हैरान होकर खडा रहा। उसका शरीर काप उठा, पसीना छूट आया, आखा के सामने अँधेरा छा गया। उस कुछ समझ म नही आया। वह परस्या की ओर भागना ही चाहता था कि उसके पिता ने, 'ए, उसे छूना मत" कहते हुए उसे पकड लिया। और पास खडे दूसर व्यक्ति से कहा, 'ले जाओ इसे भीतर।' 'परस्या की चीत्कार सुनाई दे रही थी, उसे बचाना असभव था। कोई आकर उसे भीतर ले जाये इससे पहले ही वह भीतर भाग गया। परस्या की ध्वनि शात हो गई। उसका कारण दूसरे दिन पता चला। परस्या मूच्छित हो गया था। उसका हाथ टूट गया था। पर आज भी जब परस्या टूट हाथ को आग करके नमस्कार करता है, उसके मुह पर भक्ति के अलावा और कोई भाव नही दिखता है। रघुनाथराय आज भी यह भूले नही कि उनकी वजह से परस्या की वह हालत हुई। महनत करन वाले के हाथ म चोट लगन से उसके पालने पासने का भार उन्ही पर है। भविष्य म घर के मालिक बनने वाल रघुनाथराय न मन ही मन मान लिया था। यदि कुछ खान को मिलता तो रघु उसे छिपाकर उसक लिए रखता था। आज भी वह परस्पर प्रेम चला आ रहा है।

उनके और परस्या के जीवन के रास्त आकर कही न कही मिल ही गय एक दूसरे को काटते हुए और फिर आग चल पडे।

आग एक न एक ढग से उनक बेटे गुडेराय और परस्या के बेटे कालिया के जीवन भी एक-दूसरे को काटेग न ?

कौन जानता है ?

कालिया का बेटा यानी परस्या का पोता कही जीवित हो ता उसके और उनके पोते रागण्णा के जीवन भी एक दूसर का काट सकत ह न ? यह कसा पूवसकत ?

अकेलेपन म अधिक से अधिक समय विताने वाले रघुनाथराय को चालीस-पचास वप पूव के अनुभव यदाकदा याद आया करत थ। उस

दिन परस्या को पिटवाकर हाथ तुडवाने से रघुनाथराय के मन में अपने पिता के प्रति अनादर और जुगुप्सा की भावना उत्पन्न हुई थी। परस्या होलेय था, अस्पृश्य था। इसलिए उसके पिता ने उसे दूसरो से पिटवाया था। यह सब आगे कुछ दिनो मे ही रघुनाथराय को मालूम हो गया था। पर उस दिन की घटना! उसके कारण ही परस्या का हाथ टूटा था और उसका कारण परस्या का अस्पृश्य होना था। यह बात रघुनाथराय के ध्यान म तब नही आई थी। परतु ज्यो ज्यो वे बडे होने लगे और पिता के बाद अधिकार हाथ म आने लगा त्यो-त्यो रघुनाथराय को उन रूढियो को अपनाना पडा। आत्मीयता होने पर भी व्यावहारिक दृष्टि-कोण से परस्या को दूर ही रखना पडा। रघुनाथराय के स्नान करने के बाद कोई भी कारण क्यो न हो, परस्या की ध्वनि तक उनके कान म नही पडनी चाहिए थी। इस व्यवहार को वे अनिवार्य रूप से मानते थे। इसीलिए दोपहर ढलने पर, नीद से उठने के बाद, बाहर पेड के नीचे जगत पर बैठ कर, उससे आवश्यक बातें करते थे। वैसे वे महसूस करते थे कि उसको दूर रखना गलत है। शायद इसी का प्रायश्चित्त करने के लिए वे अपनी घर गृहस्थी के बारे मे भी उससे चर्चा करते थे। कई बार परस्या के बेटे के साथ अपने बेटे को खेलते देखकर कोई बात याद आने पर वे लबी सास लेते थे और परस्या के साथ दिल खोलकर बाते करने।

"तुझे याद है परस्या ?"

बिना सदर्भ के भी रायसाहब कभी ऐसे प्रश्न पूछते और परस्या ऐसा सटीक उत्तर देता मानो उसे सारा प्रसग मालूम हो।

"है, मालिक !"

यह बात कहते समय परस्या के मुह पर हँसी छा जाती। रायसाहब को आश्चर्य होता और वे सोचते, उस बार म इस प्राणी का खेद द्वेष कुछ भी नही क्या? या उसमे इतनी सहनशीलता है?" वे छेडने के स्वर म कहते, "बेटा! अब हँस रहा है, उस दिन कहाँ गयी थी तेरी हँसी?"

"तब अक्ल जरा कम थी।"

"वाह बेटे! तो अब जैसे अक्ल आ गई है। उस दिन जमे चाबुक जमाऊँ तो, हँसेगा ?"

मुझे कहा अक्ल आएगी मालिक ? आपके जैसे मालिक वैसा नहीं

करेंगे ।

यह बात झूठ नहीं। तेरा परस्या जैसा तू मूर्ख ता नहीं है, पर कभी-कभी तेरी मूर्खता देखकर इतना गुस्सा आता है कि तेरी चमड़ी उधेड़कर रख दूँ।

'असली गुस्सा तो बड़े मालिक करते थे।" यह कहकर परस्या बात उड़ा देता।

उधर क्या। उस हमारे गुड्या को तो देखा।' कहकर रायसाहब दूसरा ही प्रसंग उठाते।

अरे! ए कालिया? धत तेरे की! कहते हुए परस्या एकदम उठने लगता।

ए जाने दे मूर्ख कहीं का! बच्चे गलत हैं तो तू अपना स्यानापन न छोड़िया! कहते हुए रायसाहब उसे रोक देते।

गलना तो ठीक है। पर यह कालिया जान-बूझकर छूने जाता है। इसलिए ।

नग बदन रहने पर कोई छुआछूत नहीं होती, परस्या।"

वह सब ठीक है पर हम तो अपनी जगह मालूम रहनी चाहिए मालिक!

नहा तो तेरे कालिया के साथ भी वही होगा जो तेरे साथ हुआ था।' बाद में रायसाहब हँसकर कहते, 'फिर भी परस्या, दिन बदले जा रहे हैं कि नहीं?'

नहीं कह सकते है क्या? आखिर तक हमारे दिन ऐसे ही बने रहेंगे ऐसा कहे तो कैसे निभेगा, मालिक?

अरे बेवकूफ कहीं का! मैं कुछ कहता हूँ तो तू कुछ और कहता है। यह बात रहने दे। घर में से लकड़ी चीरने की बात कह रहे थे, जा देख जरा। मेरे भी मंदिर जाने का समय हो गया।" कहते हुए वे बात खत्म करते।

इस बात का अनुभव धीरे धीरे सरस्वती को कुछ ज्यादा ही होने लगा कि जमाना बदल रहा है। सरस्वती रघुनाथराय की बहिन है। वह उनसे चार साल छोटी है। तेरहवें साल मे उसकी शादी हुई। शादी के दूसरे साल

ही सरस्वती के पिता गुजर गये। उसी वर्ष भाई के यहाँ लडका पदा हुआ। (उस घराने म सदा बच्चे अल्पायु मे ही गुजर जाते थे। इसलिए प्रथा के अनुसार उस बच्चे का नाम 'गुड्डु' (पत्थर का गोल टुकडा) रखा गया। शादी के तीसरे साल मे सरस्वती को लडकी पदा हुई। पहलौठी की प्रसूति के लिए वह भाई के यहाँ आई थी, पर तभी अकस्मात उसके पति के गुजर जाने की खबर आई। तब से विधवा सरस्वती और उसकी बेटी सुब्बा रघुनाथराय के घर मे रह गये। इस बात को पद्रह साल हो गये। गुड्डु अब अठारह साल का है और सुब्बी पद्रह की। इसीलिए सरस्वती सदा बडबडाती है कि जमाना बदल गया है। गुड्डु अठारह का हो गया है। इस आयु म उसके भाई की न केवल शादी हो चुकी थी, बल्कि यह 'गुड्डु' भी पदा हो गया था। इसकी भी बेटी सुब्बी पद्रह की हो चुकी है। उस उम्र म स्वय उसकी भी शादी हुए दो साल हो चुके थे। अब सुब्बी के लिए लडका कौन देखे? लडकी इतनी बडी हो गयी। मा क्या करें? यह सरस्वती के रोने कलपने का कारण है। सरस्वती को रोते देखकर रघुनाथराय के दिल म शूल सा गड जाता। सुब्बी के लिए वर देखने के बारे मे व उदासीन न थे। उनका भी अकेला लडका है, बहिन के लिए भी बेटी क अलावा कोई और सहारा नही है। इसलिए उनका विचार था कि सुब्बी को ही बहू बनाया जा सकता है। पर बेटा कही इनकार कर दे तो? इसलिए वे अपने निणय को स्थगित करते जा रहे थे। वैसे देखा जाय तो बचपन से एक साथ रहने से दोनो का एक दूसरे के प्रति झुकाव हो सकता है। रायसाहब के लिए यह कोई महत्त्व का प्रश्न न था। इस प्रकार क परिचय और सहवास न होने पर भी विवाह के बाद, अवकाश मिल जाता है, आकर्षण बढ जाता है, और मिल जाते है। यही उनका तक था। पर मुख्य बात यह थी कि व अपने बेटे के सामने बात उठाने से हिचकिचाते थे। कसा विचित्र अनुभव! जब व छोटे थ तब उनक पिता अपनी बात को अधिकार से कहते थे। पर अब उनके लिए? 'जो भी हो, जमाना बदल रहा है यही सोचकर व अपने को तसल्ली देते और चुप हो जाते।

जमाना केवल राय साहब या सरस्वती के लिए बदला हुआ

नहीं आ रहा था। गुडण्णा भी यही बात कहता था। पर गुडण्णा इस बात पर गव महसूस करता कि वह भी बदल रहा है। बचपन का गुड्या अब गुडण्णा बन गया है। अठारह साल का हान-होने वह गुडण्णा स गुडराय बन गया है। उसके साथियों ने उसे 'गवनर' की उपाधि दे दी थी। राव साहब के इकलौते पुत्र 'गवनर गुडेराय' का ज़माना बदल रहा था, यह तो सच है। उसका विचार था कि ज़माना उसके विरुद्ध षड्यन्त्र कर रहा है। गुडेराय जब अठारह साल का हुआ तब प्रथम महायुद्ध का चौथा वर्ष चल रहा था। कुल फ़ौज जवानों को कमाने का अवसर मिला था। पर गुडेराय का सूखी गवनरी के अलावा और कुछ नहीं मिला था। इसलिए उसे अपने पिता पर क्रोध आता था। उस गुस्से के कारण वह मनमानी करने लगा था जिसके कारण उसे 'गवनर' पद मिला। फिर भी क्या? शुरू से पिता अपना हठ पूरा करते चले आ रहे हैं। बचपन में बिट्टूर में स्कूल न था। रघुनाथराय ने बेटे को कामचलाऊ लिखना पढ़ना और हिसाब सिखाने के लिए एक गरीब ब्राह्मण को लाकर रखा था। धीरे धीरे उस ब्राह्मण के शिष्यों की संख्या बढ़ी। उसने एक स्कूल का रूप ही धारण कर लिया। तब तक गुडण्णा बालिग हो गया। उसने स्कूल भी छोड़ दिया। उसे पहली बार 'लीविंग सार्टिफिकेट' देने वाली उसकी बुआ थी। एक दिन वह तालाब से लौटी तो अपने गुडेराय को गोद में कोई कुकम करते देखा। उसने जो देखा वह कितना महान पाप था यह आखिर तक स्पष्ट न हुआ। यह भी स्पष्ट नहीं हो पाया कि उस काम में वह अकेला ही था। "आगे तुम कभी अकेली गुडेराय के साथ न रहना।" यह आज्ञा सुब्बक्का को मिली। इसलिए अनुमान था कि उसमें और भी कोई था। कोई ज़ोर देकर पूछता तो उसकी मूखता पर तरस खाती हुई वह कहती लड़का है, एक न एक दिन बड़ा होगा ही।" इस सबके परिणाम-स्वरूप गुडण्णा को स्कूल से अवकाश लेना पड़ा।

अब गुडण्णा का असंतोष और बढ़ गया। घर में उसकी मर्ज़ी नहीं चलेगी, यह सोचकर उसने एक तरकीब की।

एक दिन उसने पिताजी से कहा, मैं अंग्रेज़ी सीखना चाहता हूँ।'

रघुनाथराय पर जैसे कहीं से बिजली टूट पड़ी हो। उन्होंने उसकी ओर मुँह उठाकर देखा। एक ओर उनकी बहिन बैठी सब्ज़ी काट रही थी

और दूसरी ओर बेटा गुडण्णा तन पर पहनी धोती का किनारा चबाता हुआ खडा था।

सरस्वती ने गुडण्णा को देखा। उसने एक लम्बी सास खीचकर कहा, "अब तक काफी सत्यानाश तो हो चुका। अब अग्रेजी पढकर ।"

चिढकर गुडण्णा बोला, 'तुम हर बात के बीच मे क्या टाग अडाती हो ?" गाठ के प्रसग के कारण गुडण्णा का उस पर बडा गुस्सा था।

"जाने दो भइया, मैं तो यही कहती हूँ तुम घर के बडे बेटे हो, तुम्हे तो शादी करके घर सम्भालना चाहिए।"

तब सरस्वती का गला भर आया था। उसी लहजे मे उसने अपनी बात आगे बढाइ "मैं ही बेशम हूँ। वे मा का बेटा है यह, और यही सोचने पर कलेजा मुह को आता है, इसलिए कहती हूँ। इस घर म मेरी किसी को भी ज़रूरत नही है ।"

"जाने दो एक ही बात को कितनी बार दोहराओगी !" कहकर रघुनाथराय ने बहिन के वाक् प्रवाह को रोका। अनेक वर्षो से सुनते रहने के कारण बहिन का यह प्रलाप उन्हे सध्यावदन के समान कठस्थ हो गया था। वे यह जानते थे कि सरस्वती आगे 'यह घर मेरा नही। हाय, वे मुझे क्यो छोडकर चले गये ?' इत्यादि कहने वाली है। इसलिए उसे तसल्ली देते हुए उन्होने कहा, "घर मे तुम सबसे बडी हो, बच्चो की बात का बुरा नही मानना चाहिए।"

गुडु को घबराहट हुई। बुआ के व्यवहार से रायसाहब को गुस्सा आ गया है। यह समझने मे उसे देर न लगी। उसे ऐसे प्रसगो का अनुभव था। वह जानता था, पिता सारा गुस्सा उसी पर उतारेंगे।

उन्होने तिरस्कार से कहा, "उम्र तो बढती जा रही है। पर उसकी अक्ल अब भी बच्चो जितनी ही है।"

बेटा अब भी मुँह नही खोल रहा था। इससे वे उबल पडे।

"क्या करना चाहते हो ?"

गुडण्णा कुछ भी नहीं बोला। पिता ने और भी तिरस्कार से कहा, "हूँ, अविवेकी ! अग्रेजी सीखना चाहता है।" गुडण्णा फिर भी एकदम पत्थर की तरह खडा रहा।

"एकदम अविवेकी है। अग्रेजी सीखकर अब नौकरी करोगे ?'

"अरे ! यह नौकरी क्या करेगा ? घर में किस बात की कमी है ?" बीच ही में सरस्वती बोल पड़ी।

'तुम चुपचाप बैठो ! बिना समझे बीच में मत बोला करो। नौकरी नहीं करेगा तो अंग्रेजी किसलिए सीखना चाहता है ?"

गुडण्णा मौनव्रती के समान फिर भी चुप रहा।

रायसाहब के गुस्से का बाँध टूट गया। वे बोले, "क्या ? कुछ बको भी ! अंग्रेजी सीखकर नौकरी करके, घर की इज्जत खत्म कर देना चाहते हो क्या ? जाना है तो जा, तेरा सत्यानाश हो ! उस कालिया के रास्ते पर, तू भी चला जा।

अरे ! बस करो। तुम भी बेकार में बुरी-बुरी बातें मुंह से न निकालो लड़के पर तरस खाकर सरस्वती ने सचमुच दिल से यह बात कही। उसका कोई कारण नहीं रहा हो, यह बात नहीं। परय्या का बेटा कालिया एक दिन रातों रात बिना किसी को खबर दिये सेना में भर्ती होने चला गया था। युद्ध में वह मर भी सकता है इस विचार की अपेक्षा रायसाहब को इस बात की नाराजगी ज्यादा थी कि वह उनसे बिना कहे चला गया था। इसलिए कालिया के साथ उसकी तुलना सरस्वती के लिए एक बहुत दु खद बात थी। अब तक मन्त्रमुग्ध-सा खड़ा गुडण्णा अपने को रोक न सका। कालिया का नाम आने पर वह अपमानित सा हुआ। उसे पहले ही इस बात की शिकायत थी कि वे इसकी बात नहीं मानते। उसने सोचा कि अब कोई जवाब दिये बिना चारा नहीं है।

रायसाहब ने चिढ़ाने के लिए कह दिया, "मैं समझता हूँ कि बचपन से ही उसकी संगत में रहने से उसके गुण मुझमें आ गए।"

धत ! फिर वही अनुभव।

खम्भा फाड़कर बाहर आते ही आँखों के सामने से भागते हिरण्य-कश्यप को देखकर नृसिंह की जो स्थिति हो सकती थी, वही स्थिति गुडण्णा की हुई।

उसने सोचा अब जवाब देने लगूं तो पिता जी उठकर चले जाएँगे। यह पहला मौका नहीं था। उसने सोचा आगे ऐसा होने का मौका नहीं देना चाहिए। अब उनसे डरने की जरूरत नहीं है। आज इनके मुंह पर ही कहकर यहां से जाऊँगा। कालिया के साथ मेरी तुलना करते हैं, छि ?

एकदम गुडण्णा को हसी आ गयी। उसने घबराकर इधर उधर देखा। उसका भाग्य अच्छा था। उसकी बुआ उठकर चली गई थी—सारी वात सोचकर वह एकदम हँस पडा, 'कालिया जसा हूँ।'

# 3

चढती जवानी म गुडण्णा को एसा लग रहा था मानो उसे वाधकर रखा गया हो। घर मे वात-वात पर वुआ के व्यग्य। उसने एक वार जो देखा था उसी को लेकर वार-वार ताने कसती। घर छाडकर जाना चाहे तो पिता के अधिकारो का वधन। वास्तव मे वचपन से उसका कालिया के साथ उठना बैठना वहुत ज्यादा था। एक वार कालिया के चले जाने बाद गुडण्णा को ऐसा लगा कि उसका कुछ खो गया है। वह रोज इधर-उधर घूम आता था। कौन जाने ? कालिया जसे गया वैसे ही एक दिन लौट आये ? कालिया नही आया, पर गुडण्णा रोज उस तरफ जाता रहा। उनका आना जाना देखकर गगी को कुछ अजीव सा लगा होगा। एक-दो दिन वाद दूर से ही गुडण्णा को देखकर उसके मुह पर मुस्कराहट छा गई। वह यह सोचकर हैरान हुई कि उसके पति म और छोटे मालिक म कितनी गहरी दोस्ती है। गगी जब पहली बार आयी तो गुडण्णा को वडा आश्चय हुआ। वचपन मे ही कालिया की शादी हो गई थी। यह उसे मालूम न था। गगी के वडी होने के बाद घर के काम-काज के लिए उसे विदा कराकर लाया गया। पता नही क्या कालिया ने उसके साथ विचित्र ढग मे व्यवहार किया था। गुडण्णा को उसका रहस्य मालूम न था। पूछने को मन भी न चाहता था। तभी एक दिन कालिया सना मे भर्ती होने के लिए भाग गया।

पिता से डाट खाकर मन ही मन हँसते हुए गुडण्णा घर स निकलकर गाव के खेतो की ओर चल पडा। उसे इस वात का ध्यान नही था कि वह कहा जा रहा है ? उसके मन मे कोई उद्देश्य भी नही था। वसे ही कुछ देर तक चलता रहा। शायद वाद मे यह विचार उसके मन मे उठा होगा कि

मदिर की बावडी की जगत पर कुछ देर बिताकर लौटेगा। मन्दिर ठेगन ही उस ओर चल पडा। मन्दिर गाँव से जरा दूर होने के कारण एकात भ्रमण के लिए लोग उस तरफ जाया करते थे। सुबह के समय गुडण्णा और उसके दोस्त वहाँ तैरने के लिए जाया करते थे। कई बार धूप सेंकने के लिए अधेड उम्र के लोग भी वहाँ जाते थे और सोच शान्ति से निरन्तर देर तक बैठे रहते। एक दृष्टि से गाँव की जनगणना म उस बावडी को जोडा जा सकता था। इतना था उसका महत्त्व। अब भी जब गुडण्णा बावडी के पास पहुँचा तो ऐसा लगा कि वह किसी मित्र से गले मिलने जा रहा हो। बावडी निश्चित ही वह तेजी से कदम बढाने लगा। उसने मन म सोचा, वास्तव म बावडी उन सबकी दोस्त है। बावडी देखते ही मन की सारी कसमसाहट जाती रही। इधर-उधर नजर दौडाकर वह वहाँ बैठना ही चाहता था कि कुछ दिखाई पडा और वह अवाक रह गया। और यह क्या ? लकडी का गट्ठर ? तो वह अकेला नही है। तो और कौन हो सकता है ? यहाँ वह बावडी के पास एकात म बैठना चाहता था, पर क्या वह बहिरंग हो गया ? यहाँ कौन हो सकता है ? चारों ओर देखा। कोई दिखाई नही दिया। यह सोचकर कि कोई बावडी म उतरा होगा वह सीढियों की ओर चल पडा। हाँ, कोई है। पर यह क्या ?

उस दिन के अनुभव को गुडण्णा कभी भूल नही सकता। केवल एक मिनट अथवा एक मिनट के सहस्रांश का अनुभव रहा होगा। फिर भी उस अनुभव ने पाँचों इन्द्रियों को मन को तन्मय कर दिया था। एक मिनट के लिए उसकी आँखो के सामने अँधेरा-सा छा गया। दूसरे ही क्षण उसे ऐसा लगा मानो बुखार आ गया हो वह काँप उठा। उसको ऐसा लगा कि वह वहाँ गिर तो नही पडेगा। दूसरे क्षण ऐसा लगा कि ऐसा नही है। सब एक क्षण म ही बीत गया था। उसी क्षण म ! उस सबके परिणामस्वरूप उसके शरीर म सिहरन दौड गयी थी। शरीर म कसाव आ गया था, आँखें विस्फारित हो उठी थी, बाहे फूल गयी थी, जाँघें कस गयी थी। पता नही और क्या क्या हुआ था। उसने उसी समय नवीन चेतना प्राप्त की। क्या हुआ ? क्या हो सकता है ?

जो हुआ वह कोई विशेष नही था। जब गुडण्णा सीढियों के पास गया और उसने नीचे झाँका तो गंगी मुँह धोकर ऊपर आ रही थी।

गगी का उसने कितनी ही बार देखा था। फिर भी उस दिन उसके लिए सब नया-सा लगा। सदा उसके सामने बडे विनय से आने जाने वाली गगी उस क्षण म और कोई न होने के कारण ढीले छाडे गुब्बारे के समान पूण रूप से भरी-सी दिखी। इसीलिए गुडण्णा को उसका शरीर उतना भरा सा-बाह गोर गोल, नाक यौवन की गव ध्वजा के समान दिखाई दी होगी। नीचे से ऊपर चढते हुए, मुह पाछते हुए उसने पल्लू ढीला कर लिया था। तब ? गुडण्णा की आखा के सामने अँधेरा सा छा गया। उसन अपने सिर को जार स झटका दिया। जवानी के अगारो को पहचानने की जवानी उसम भी पहली बार जागत हुई। वह भूला-सा हैरान सा बुत-सा खडा रहा।

बचारी ! गगी को तो ऐसा लगा कि नरक केवल चार अगुल की दूरी पर है। उम मालूम था कि वह बावडी के चारा आर सूखी लकडियो को बीनकर ले जा सकती है पर बावडी के भीतर उतरने का उसे अधिकार नही है। वह यह भी जानती थी कि उसका पति, ससुर कोई भी उस पानी को छू नही सकते। आज उसने उस बावडी मे मुह क्या धोया। उसके मुह पर घबराहट को देखकर गुडण्णा की टागे काप उठी। हजारा वर्षों की प्रथा की सहनशक्ति की मूर्ति के समान गगी खडी हा गयी। उसने सोच लिया कि अब चाहे जो भी दड मिले भुगतना ही पडेगा।

वश परम्परा से सीखा हुआ, उच्च वण के दप म बढा हुआ लडका एक तरफ उसके सामने नारीत्व और अस्पश्यता दोना की मूर्तिमान यातना के समान खडी लडकी दूसरी तरफ ! तभी धूप निकल आई मानो निसग का देवता दाना के पागलपन पर मुस्करा उठा हो। ऊँच नीच, जड चेतन, सभी भेदा की तह मे यह जगत सोने के समान है। इस बात को उन जवान आँखो न उस खिली धूप मे देखा। सष्टि के आरम्भ से लीला करन वाली काम की आखमिचौनी के खेल मे व दाना छोटे बच्चा के समान तल्लीन हो गय, तन्मय हो गय। अपनेपन को भूलकर एक हो गये।

अन्धकार धीरे धीरे दबे पाव चोरा की तरह कदम बढाता चला आ रहा था।

गुडण्णा को होश आया तो सामने गगी नही थी। अब आगे क्या

होगा ? उसने कैसा काम कर डाला ? पिता और बुआ का गुस्सा उतारना चाहता था न ? सच है। बुआ सदा कदम कदम पर कहा करती थी कि वह बडा हो रहा है। क्या बुआ की बात को सुनत सुनत उसका दिमाग बिगड गया था ? अब पिता का सामना कसे करेगा ? किसी ने देख लिया हो तो ? उन्हे सदेह हो गया तो ?

अब गुडण्णा का गाव छाडने या अंग्रेजी स्कूल जाने को मन नहीं हुआ। रोज बावडी पर जाता। अपने कपडे धोता। किसी स ज्यादा नही बोलता। रायसाहब को हँसी आयी उनकी आख बचाकर भागना चाहने वाले लडके को देखकर। फिर भी उन्हे यह सोचकर तसल्ली हुई, कि लडका चार अच्छी बातें सीख गया है। उनका विचार था कि तरना कपडे धोना अच्छे काम हैं।

गुडण्णा का विचार कुछ और था। यह सच था कि वह रोज तरता और अपने कपडे धोता था। पर उसका दूसरा सम्बन्ध रायसाहब को मालूम न हुआ। घर मे बुजुर्गों के साथ ठीक ठाक व्यवहार करने से गुडण्णा का धीरे धीरे और बाद के अनुभव से गगी का सहवास अच्छा लगने लगा। कालिया की भी कोई खबर नहीं थी तो गगी को कोई सकोच भी नही था। जो भी हो, अनिवार्य सहवास की गदगी धोने के लिए गुडण्णा नित्य कर्म म लग जाता। उस भावना को मन मे रखकर कुछ दिन बिताने के बाद उसने समझा कि वह उससे सचमुच शुद्ध हो जाता है। इस विचार स उसका मन हलका हो गया। इसके अलावा गुडण्णा को इसमे डरने की कौन सी बात थी ? दूसरा को मालूम नही। उसने यह भी सोचा कि वह कर्मारिन है। उसे जब चाहो छोडा जा सकता है। जब चाहो अधिकार दिखाया जा सकता है। उन्हे जीवन के लिए इन्ही पर निर्भर रहना पडता है। वह परस्या की बहू भी है। गुडण्णा को यह गर्व था कि वह उसी की चीज है। इसलिए उसने यह जानने का प्रयास नही किया कि गगी के मन म क्या है।

गगी के बारे म तो यह कहा जा सकता है कि पहली बार उसकी अक्ल पर पर्दा पड गया था। पर शाम को यह सोचने से पहले कि कसे, क्या यह सब कुछ हो गया था पति उसे अकेली छोडकर चला गया था। इस बात को कई महीने बीत चुके थे। इसलिए उसे दुख हुआ था। कालिया के बारे म उसके मन म आदर प्रेम आदि कोई भावना नही थी। उसके साथ

उसकी शादी होने का निश्चय कभी का हो चुका था। अत ऐसी भावनाओं के लिए वहाँ अवकाश भी न था। विवाह, पति, यह सब उसके लिए आवश्यक कर्तव्य थे। फिर भी जब वह जवान हुई तभी उसे छोडकर चले जाने का मतलब ? लोग क्या कहेंगे ? सदा ऐसी मानसिक स्थिति म रहने वाली गगी को पहली बार होश से काम लेना सभव नहीं था। यह सच है कि केवल एक बार अनधिकार कुएँ म उतरकर उसे अशुद्ध करने के कारण डर गई थी। पर गुड्डण्णा को देखते ही कोई विचार उसे रोक न सका। बेचारी ! उसमे समझने बूझने की सामर्थ्य भी न थी। कितने लाख वर्षों से यह शिक्षा मिली थी ? पतगा प्रकाश की ओर मन्द पडता है। भ्रमर फूल की ओर भागता है। कोयल गाती है, मोर नाचता है यह सब प्रकृति अपने को अमर बनाने के लिए सिखाती है। पुरुष की आँखों की चाह को स्त्री की आखो मे बुलावे का सिखाने वाली उस विद्या के उज्ज्वल प्रकाश म, उन्होंने जब एक दूसरे को देखा तब उन्हे कोई और ध्यान नही आया। दो जीवो के तटस्थ मिलन से तीसरे जीव की उत्पत्ति का चमत्कार पहले निसर्ग म है बाद म नारी म है। इसलिए स्त्री म काम एक बार, नसर्गिक उद्देश्य सफल हो जाए तो वह नारी नारी नही रहती है। सृष्टि, जन्मदात्री सृष्टि बन जाती है।

पहली बार भूल हो जाने के बाद गगी को हर कदम पर ध्यान रखना पडा। अच्छे बुरे का उसके सामने कोई प्रश्न न था। वह जानती थी कि यह हो गया। उसे मानकर ही उसने आगे की सोचनी शुरू की। उसे इस बात का पूरा ध्यान था कि गुड्डण्णा कौन है, वह कौन है। उसे मालूम था कि गुड्डण्णा को उसके साथ बलात्कार करने का अधिकार है। वह यह भी समझती थी कि यदि उसे वह पसद न आए और विवाह के बाद उसकी पत्नी आ जाए तो वह उसकी ओर आखें उठा कर भी न देखेगा। यही क्या उसकी स्थिति को देखते हुए कोई भी उसकी बात का विश्वास न करेगा। गुड्डण्णा चाहे धक्के मारकर निकाल भी दे तो भी उसका उस पर कोई अधिकार न होगा। इसलिए वह चौकन्नी हो गई।

स्त्री-पुरुष का सबध निसर्ग की एक उद्देश्य साधना तो हो सकता है, पर

मानव क लिए वह जीवन की एक ललक भर है। यह बात गगी को शायद मालूम थी या न भी हो। पर इतना तो वह जानती थी कि गुडण्णा आगे भी कुछ दिन उसको चाहे बिना रह नही सकता। इसीलिए एक दिन वह गाम का ठीक उसी समय कुएँ की ओर गई। उस पता था, गुडण्णा रोज वहाँ जाता है। अब तक जानबूझकर दो दिन से उस ओर नही गई थी। गुण्णा पागल की तरह उसकी प्रतीक्षा कर रहा था। उमे दखकर उस ज्याद आश्चय न हुआ। वह पागल की तरह उसकी ओर भागा तो वह विनय और सकोच दिखात हुए जरा हटकर खडी हो गई। गुडण्णा जरा घबराया उसकी समझ म न आया कि वह क्या करे। ओठा पर जबान फरत हुए उसने हाथ माथ पर फेरा माथे पर पसीना आ गया था। बिना कुछ कहे वह दो कदम आगे बढा। लेकिन उसस पहले ही उसे ध्यान आया कि गगी सरक गई है। गगी इस विचार स मुस्कराई कि वह घबराया हुआ है यानी वह उसकी पकड म आसानी स आ जाएगा। वह इधर उधर ताकते हुए खिसककर पेड की आट म खडी हो गई और सच-मुच की भय के स्वर म बोली

यह क्या भैयाजी ?

नही आ दो दिन स ।'

अर रे कोई देख ले तो छोडिए। कहती हुई गगी साडी के पल्ले का कोना चबाती हुई और पीछ हटी। गुडण्णा जरा साहस से पर धीरे स वाला अर ! कौन दखता है ?

गगी अब पेड के तने स सटकर खडी हो गई और पीछे हटने को भी जगह नही यह अभिनय सा करते हुए उसने गुडण्णा का ध्यान खीचा। अब गुण्णा की हिम्मत बढ गई। पुरुषत्व के पहल अनुभव न उसम डर पदा किया और साथ ही शम भी। स्त्री के मोहक बुलाव न उसम साथ ही हिम्मत भी बढाई।

वह बोला पागल मत बनो। स्वर म जरा अक्खडपन था। मुह पर न खिन वाला कसाव शायद हाथ म भी आ गया था। फिर भी गगी हँसत हुए पकड से फिसलकर पेड के तने क पीछे खडी हो गइ।

गुडण्णा ने साहस बटोर कर कहा 'क्या इतना डरती हो। कोई भी देख नहा रहा है।

'किसी के देखने का डर नही।"

"फिर?

"मुझे शरम ।'

'अ हाँ!" कहता हुआ उसकी ठुड्डी पकडने को हुआ। गगी पीछे सरक गइ और बाली

'नही भयाजी, मुझे अपन को ही देखकर शम आ रही है।

यानी ?"

'नहीं, काम करके शरीर गदा हो गया है जी। साडी फटी हुई है।"

"वत, पगली!'

अब गगी और नही सरकी। दूर सरकने मे रखा भी क्या था? अगले कुछ ही क्षणा म गुडण्णा न उस वचन दिया नई साडी का।

"बस? और?"

"जाइए भी " कहती हुई गगी खिसक गई।

एक बार रघुनाथराय के ससार सागर मे भी तूफान उठा था। उनकी जीवन नौका भँवर म फँस गई थी। एकदम कैसी मुसीबत आन पडी थी? उन पर क्या वह किसी प्रवसकेत का शाप था? रायसाहब का ऐसा महसूस हुआ था कि वह अवश्य किसी घोर शाप का परिणाम है। बचपन म परम्या के साथ खेलने पर उनके पिता क्या गुस्से मे नही आए थे? तब उनके मन मे अपने पिता के प्रति कितना अनादर उत्पन्न हुआ था। तब रघुनाथराय ने मन ही मन कहा था 'परस्या को इतना मारना चाहिए कि उसका हाथ ही टूट जाय? यह कैसा धम? फिर भी ज्यो ज्यो वे बडे होन गए और जब पिता के बाद घर की जिम्मेदारी उन पर आन पडी, त्यो-त्यो रघुनाथराय के विचारो मे भी परिवतन आता गया। यदि एक ब्राह्मण को अपना ब्राह्मणत्व ढग से चलाना हो तो दूसरो को भी अपन का वसे ही चलाना चाहिए। अस्पश्य का गाव से बाहर रहना ही धम है। सवर्णों का न छूने से ही भविष्य म पुण्य का सचय हाता है। इसीलिए उनकी आना थी कि नहान के बाद या मदिर जाते समय परस्या कालिया या उनकी जाति के लोगो की उन पर निगाह न पडे। उसमे उन्ह कोई अन्याय या करता नजर नही आती थी। इस बात मे क्या गलती है? यदि अछूत

अपने जाति धर्म का पालन करना ही गलत कहे तो ब्राह्मण का ब्राह्मणत्व का आचरण गलत होना चाहिए ? छि ! इसमें कोई गलती नहीं । इसमें अन्याय जैसी कोई बात नहीं । ऐसा सोचें ही क्या ? प्रति वर्ष बिना नागा खलिहान में परस्या का हिस्सा दिया नहीं जाता ? दूसरे के हिस्से की ओर रायसाहब को देखने की जरूरत भी न थी । भगवान ने उन्हें इतना दे रखा था । इसलिए वे मुक्त हस्त से दान में हिचकिचाते न थे । तीज त्योहार, उपनयन, शादी ब्याह कराने आदि के अवसरों पर घर की स्त्रियाँ भी परस्या को बुलाकर इकट्ठी की गई झूठन आदि देती थीं । इस व्यवहार को कोई क्रूर कहता तो रायसाहब उसे पागल ही कहते । दाप, अन्याय, क्रूरता ये सब बातें रायसाहब की समझ से बाहर थीं । जैसे वे ब्राह्मण वंश में पैदा हुए वैसे उनका बेटा गुड्डु भी । परस्या अछूत होकर पैदा हुआ और उसका बेटा कालिया भी । इसमें क्या गलती है ? जब पिता के घर द्वारा खेती-बाड़ी, लेने पावने पर बेटे का हक है उसके रूप और गुण पर भी बेटे का हक है तो पिता के चाल चलन पर भी हक होना इसमें क्या गलती है ? इसके अलावा संसार में इससे नुकसान कुछ भी नहीं । इसलिए अछूत जो भी हो अछूत रहते हैं । बचपन में ऐसे अछूत के साथ वे खेलते नहीं रहे ? अब भी वही बात कहते नहीं ?

रायसाहब की अब समझ में आया कि वे उस बात को सही ढंग से नहीं कह पा रहे । यही क्या ? उन्हें इस बात का संदेह हुआ कि शायद उन्होंने इस ओर खास ध्यान नहीं दिया । हाँ, यह उनकी गलती थी । छोटों की गलती की पहली जिम्मेदारी बड़ों की होती है । गलती उन्हीं की थी । गुड्डु को कालिये के साथ खेलने देना ही गलती थी । कुछ भी हो कोई भी अपनी जाति का स्वभाव छोड़ता नहीं । उद्दण्डता आलस्य, लापरवाही पढ़ाई की ओर अनादर यह सब गुडण्णा में कैसे आये ? कालिया की संगत से । रायसाहब ने सोचा कि एक तरह से कालिया का गाँव छोड़कर जाना अच्छा ही हुआ । अब गुडण्णा पर जिम्मेदारी डाल देनी चाहिए । घर बार और खेती-बाड़ी की देखभाल उसी को करनी चाहिए । रायसाहब ने यही निश्चय किया । जब तक सिर पर नहीं पड़ती तब तक होश नहीं आता । जवानी तो ऐसी होती है जैसे कोई नींद में चल रहा हो । रायसाहब ने सोचा, अब धीरे धीरे जिम्मेदारी उस पर

होती। उसकी एक ही आकांक्षा थी—हर साल गर्मियों के दिनों में मंदिर के उत्सव के समय होने वाले मेले के दंगल में आये पहलवानों को हराना। इसके लिए वह सब कुछ करने को तैयार रहता। इसीलिए राम के लिए हनुमान की भाँति गुडण्णा के लिए रामप्पा तैयार रहता। रामप्पा गुडण्णा का आसामी था। उसकी व्यायाम-साधना में किसी तरह की कमी न हो यह देखना गुडण्णा की जिम्मेदारी थी। गाँव के नमचंद सेठ की दुकान से रामप्पा छुआर, मिश्री जितनी चाहे ले सकता था। बगीरम्मा की भैंस से जितना चाहे उतना दूध लेकर पी सकता था। इस सब खर्च की जिम्मेदारी गुडण्णा पर थी। उस उदारता के कारण ही गुडण्णा को गाँव में 'गवनर' की उपाधि मिली थी।

रामप्पा को सहायता देने में गुडण्णा के लिए गाँव का अभिमान ही एकमात्र कारण न था। रामप्पा की पत्नी चेन्नी ही गुडण्णा की उदारता का मुख्य कारण कही जा सकती थी। चेन्नी साधारण स्त्री न थी। जवानी से भरपूर गठीले बदन के साथ ही साथ वह बुद्धिमती और प्रभावशाली व्यक्तित्व वाली स्त्री थी। रामप्पा को उस पर अभिमान था। इस कारण वह खुश भी थी। विवाह के कई वर्ष बाद भी रामप्पा ऐसा था कि उसे देखकर दिल की धड़कन रुकने लगती थी। यह चेन्नी का अभिमत था। चेन्नी की आँखों ने प्यार से या इच्छा से रामप्पा के सिवा किसी और को न ताका था और न ताकने की इच्छा ही थी। यह कैसा प्रेम? जिसका कोई जवाब न था। यह जानते हुए भी कि रामप्पा उसकी ओर ज्यादा ध्यान नहीं देता, चेन्नी उसी को प्यार करती और उसी के लिए सजती सँवरती थी।

रामप्पा को चेन्नी की ओर देखते हुए ही डर लगता था। इसीलिए बार बार उस पर गुस्सा करता। उसका भरा चेहरा, बड़ी-बड़ी आँखें, चेहरे पर सदा मुस्कराहट, छाती पर एक ओर ढका पल्लू (उसे देखने पर उसे ढँकी बायीं ओर की धोती की ओर भी देखने का मन करता था), सामने से आते समय नाचते होंठों का दृश्य, पास से जाते समय अपनी ओर बुलाती-सी दीखने वाली जंघाएँ इस दृश्य को देखने पर रामप्पा को ऐसा लगता कि चेन्नी की जवानी को उसके सौंदर्य को भोगने से बढ़कर संसार में और कोई सुख न होगा। पर उसे एकदम डर सा लगता। उसका

क्या हाल होगा ? उसे कभी किसी की कही बात याद आती, 'शरीर साधना करन वाले पहलवान के लिए स्त्री एक रोग के समान होती है।' उसके जीवन का एकमात्र ध्येय गाँव के मंदिर के सामने होने वाले दगल मे आस-पास के सभी नामी पहलवानो का धूल चटाना था। इसलिए जब भी चेन्नी उसके आसपास से गुजरती तो वह अकारण ही उस पर बरस पडता।

रामप्पा क आश्रयदाता गुडण्णा का इस परिस्थिति न एक अनुकूल अवकाश प्रदान किया। प्रतिदिन गगी की मागें बढती जा रही थी। शायद गगी न यह समझ लिया था कि उस पर उसका अधिकार है। उसन सोचा कि उसे एक सबक पढाना चाहिए। उसकी यह भ्राति दूर कर देनी चाहिए कि वह अकेली ही गुडण्णा की चहेती नही है। इसके अलावा उसके मन म और एक विचार उत्पन्न हुआ जो भी हो, गगी अस्पृश्य है। लोगो को गगी से उसके सबध का पता चल जाय तो ? पर चेन्नी की बात और है, वह रामप्पा का आश्रयदाता है। इस लिए उसके साथ घनिष्ठता है। इस कारण किसी को सदेह नही होगा। यहा तक कि रामप्पा का भी। क्या वह कभी-कभार चेन्नी का उसकी प्रिय वस्तुएँ दिला नही देता ? चेन्नी जवान है। वह पति की अवहलना को कितने दिन सहेगी ? रामप्पा की मूखता पर गुडण्णा को हँसी आई, 'भैंसा है, एकदम भसा ! धत ! भैंसा भी नही ! बिजार, भैंसा भी ब्रह्मचय पालन करने की मूखता नही करता। ह ह ह ! उससे बदतर है।' यह साचने म उसे बडा मजा आया। ठीक है इस मूख से लाभ उठाना आसान काम है। धीरे धीरे गुडण्णा मौका मिलने पर रामप्पा के सामन अपना जाल फैलान लगा। ऐसा एक मौका मिल भी गया। किसी कारणवश एक कुश्ती म हार-जीत का निणय हो नही पाया। हजार कोशिश करन पर भी विरोधी को रामप्पा चित कर नही सका। इसलिए उसे मित्रो क सामने मुह लटकाकर मौन धारण करना पडना।

एक ने कहा, 'अरे गवनर साहब, इसी लडके को रामी ने कितनी ही बार धूल नही चटायी थी ?'

गुडण्णा ने अपने को विचारो म डूबा सा दिखाकर केवल 'हूँ'

दूसरे ने पूछा, 'पर ऐसा क्यो हुआ ?''

रामप्पा घबराया। पर बेचारा क्या करे? सबकी बातें बैठा सुनता रहा।

गुड्डण्णा ने फिर से 'हुं' कहा।

उसमें एक प्रकार का अधिकार था, एक विशेष अर्थ भी था। उस 'हुंकार' में यह अर्थ छिपा था 'मैं जानता हूँ पर मैं बताऊँगा नहीं।'

उस समय की बात किसी रूप में वहीं खत्म हो गई। गुड्डण्णा ने यह उचित समझा कि दूसरों के सामने कुछ कहना बुद्धिमत्ता नहीं। उसे यह भरोसा था कि रामी अपने आप आज या कल उसका कारण उससे पूछेगा। अगले दो ही दिनों में वह मौका भी आ गया। रामी और गुड्डण्णा दो ही बैठे थे। इधर-उधर की बातें करते करते रामी ने पूछा

'गुड्डण्णा जी, उस दिन कुश्ती बराबरी पर छूटने पर आपने कुछ कहा था।'

'मैंने? मैंने तो कुछ नहीं कहा।'

उस दिन मुझे ऐसा लगा कि आप कुछ कहना चाहते थे।"

जाने भी दो।"

"यह कैसे हो सकता है? मुझे आगे लाने वाले आप हैं।"

'इसका मतलब? इसे तुमने मेरा कोई बड़ा उपकार समझ लिया? तुम तो गाँव के लड़के हो। गाँव का नाम होगा मादक ।"

'पर कल की-सी कुश्ती हो तो गाँव का नाम कैसे रहेगा?'

जाने भी दो! ऐसा एक बार हो गया। खेल में हार जीत होती ही है।

पर हारें क्यों?'

यह देखकर कि रामप्पा उसकी बात की ध्वनि को समझा नहीं गुड्डण्णा ने बड़प्पन की हँसी हँसकर उसकी ओर घूरते हुए कहा

'हारे क्या? यह पूछते हो? ह ह-ह! मुझे क्या मालूम? मैं क्या शादीशुदा हूँ। ह ह ह!'

रामप्पा को गुड्डण्णा की हँसी से कुछ समझ में आ गया। धीरे धीरे हँसी का ढंग, उसके अनुकूल हाव भाव देखकर रामप्पा ताड़ गया कि गुड्डण्णा का इशारा किस तरफ है। उसने गिड़गिड़ाकर कहा

'भाई साहब, क्या आप समझते हैं, ऐसे मामलों में मैं झूठ बोलता हूँ?

आप खिलाने पिलाने वाले बाप की तरह हैं। पांव छूकर कहता हूं। चेन्नी की छाया तक मैंने छुई नहीं। मालिक, आप मेरे लिए भगवान् के समान हैं ।"

रामप्पा के मुग्ध स्वभाव, सरल हृदय और अटल विश्वास को देखकर गुडण्णा को एक क्षण के लिए पश्चाताप हुआ। पर उससे क्या? अब मौका मिला है फिर नहीं मिलेगा। इसलिए इसे अभी खत्म कर देना चाहिए। यह निश्चय करते हुए गुडण्णा ने कहा

'देखो, रामी, मैंने कहा न! मरे बिना स्वर्ग नहीं देखा जाता। औं? शादीशुदा तो तुम हो। पर जानने वाले कहते हैं, औरत का सम्बन्ध उस एक काम मे ही नहीं होता है। यह मुझे मालूम नहीं है। बताया न? लोग कहते हैं कि औरत की आँखों के सामने गुजरे तो भीतर-ही-भीतर मन के पर्दे पर उसका असर होता है।"

रामप्पा ने निचले होंठ को ऊपर के दाँतों से दबाकर डरते डरते कहा, 'तो क्या करने को कहते है, मालिक?"

गुडण्णा ने हँसकर कहा, "तुम तो मुझे बड़ा तजुर्बेकार समझकर पूछ रहे हो। हह ।"

'नहीं गवनर साब, अगले जलसे तक चेन्नी को मायके भेज दू।"

गुडण्णा यह सुनकर घबराया और उसे खयाल आया कि यह तो ऐसा हुआ कि गणपति बनाना चाहा और बन्दर बन गया हो।"

'छि! छि! तुम पागल तो नहीं हो? मेरे जैसे लडके की बात सुनकर कुछ का कुछ न कर डालना। लोगों मे कानाफूसी शुरू हो जायेगी।"

हठी बालक के समान रामप्पा ने कहा, "पर गवनर साब, कुछ न-कुछ करना तो पड़ेगा ही न?"

और जो चाहे करो, पर ऐसा कुछ न कर डालना कि लोग यह कहने लगें कि जवान बीवी को मायके भेज दिया।"

रामप्पा को कुछ न सूझा। पर उसके मन की हठ भी नहीं गई। वह बोला, "फिर भी कुछ-न कुछ करना ही चाहिए, गवनर साब!"

गुडण्णा ने ऐसा अभिनय किया मानो वह कुछ सोच रहा हो। बाद मे उसने एक लम्बी साँस खींचकर कहा

"इधर देखो, रामी, मेरा एक सुझाव है। तुम्हारी पत्नी घर म ही रहे और लोग यह समझें कि तुम भी घर आते जाते रहते हो। पर अगर पसद करते हो तो तुम एक-दो महीने उस तरफ आँखें उठाकर नही देखना। आँ ? पर नही " गुडण्णा ने निराशा से सिर हिलाया मानो कोई और बात सूझी हो ?

रामप्पा घबराया। उसने पूछा "क्या, गवनर साब, और क्या ?"

'इसीलिए तो कहता हूँ कि मरे बिना स्वग नही देखा जाता। आँ ? हम तो यहाँ बैठकर सोच रह हैं कि ऐसा करना चाहिए, वैसा करना चाहिए। पर तुम्हारी पत्नी को कौन तसल्ली दे ? एक काम करो। तुम एक बार उससे मिलकर आओ।'

छि ! छि ! अब मेरा उससे मिलना ही ठीक नहीं," कहते हुए रामप्पा खडा हुआ मानो उसे बिच्छू ने डक मारा हो।

'अरे भाई उसे तुम समझाकर बताओगे ? फिर भला वह दूसरे की बात क्यों सुनेगी ?'

"आप कैसी बात करते हैं गवनर साब ? आप कहेंगे तो उसका बाप भी सुनेगा। मैं कहता हूँ आपके पाव की धूल माथे पर चढाकर मानेगी। मेहरबानी करके इतना उपकार कर दीजिए ।"

'अच्छी बात है भाई ! अब मेरी समझ मे आया कि गाँव के बाहर हनुमान को क्यों रखा जाता है। आ, हे-हे ! अपनी शादी नहीं हुई। शादीशुदा लोगो के बीच जाना बन्द नही किया। आँ ? हे-हे ह !'

गुडण्णा ने सोचा कि आगे का रास्ता सरल हो गया। सरल हो भी सकता था पर तभी दो बातें सुनने म आइ।

एक तो यह कि गगी को गम रह गया है और दूसरा यह कि अचानक कालिया लौट आया है। वह कही मेसेपोटोमिया गया था।

# 4

रघुनाथराय के संसार सागर में आंधी उठ रही थी। उनकी जीवन नौका थपेड़े खाकर अंत में चट्टान से टकराकर चूर-चूर हो गई थी और राय साहब मँझधार में बेसहारा हो चुके थे। उनको ऐसा लगा कि अब मर जाना ही बेहतर है। हे भगवान, यह कैसा आघात! सरस्वती ने जो बताया क्या वह सच है? उन्होंने सोचा, सुब्बी से पूछकर देखूं। छि! उस बच्ची से कैसे पूछा जा सकता है? कैसा उलटा जमाना आ गया! ऐसी स्थिति आंखों से देखने के लिए जीना पड़ा? सारे गांव में बात फैल गई हो तो? धत, यह सब सरस्वती का पागलपन है! उन्होंने उससे कभी का कह दिया था—शादी कर देना चाहिए। अब वही सरस्वती इन्हीं को जिम्मेदार बता रही है!

सरस्वती के हिसाब से तो उसके भाई को डरने की कोई जरूरत ही नहीं थी। उसे गुस्सा आया। वह चीखी, चिल्लाई, माथा पीटा सुब्बी के गाल पर एक तमाचा जड़ दिया। यह सच है, लोगों ने उसे अपनी आंखों से देखा था पर एक दूसरी बात हुई जिसे दूसरा ने नहीं देखा। लड़ाई झगड़ा निबट जाने के बाद जब शांति हो गई तब सरस्वती ने आंख बचाकर इधर-उधर देखा। अपने मन में आये विचार पर स्वयं ही शरमाकर पल्लू का किनारा मुंह में ठूसकर उसने हंसी रोकने का प्रयास किया।

सरस्वती को यह सब बड़ा मजेदार लगा। कल का छोकरा गुड्या इतनी जल्दी बड़ा हो गया। यह बात उसको मजेदार लगी। जो कुछ हुआ उसकी सच्चाई के बारे में सरस्वती को संदेह नहीं था। क्यों? उसे याद आया कि जब सुब्बी पैदा हुई तब सुब्बी का बाप भी अठारह साल का ही था। परंतु सरस्वती के लिए खेद की बात यह थी कि गुड्या के पौरुष का बंदरपन गंगी जैसी होलती के साथ हुआ था। सुब्बी भी कैसी पगली है। अकस्मात यह न देख लेती तो वह शायद बताती भी नहीं। गुड्या भी कैसा लुच्चा है? पगली सुब्बी के हाथ से काम कराया। उसे कैसे पता चला? तीन चार दिन से सुब्बी खाने को कुछ-न-कुछ बना रही थी। यह

सोचकर वह चुप रही कि चलो लडकी खाना बनाना भी सीख जाएगी और खा भी लेगी। उस दिन सुब्बी के खाना बनाते समय वह भीतर गई, देखन पर सब कुछ चट हो चुका था। उसने पूछा, 'अरी सुब्बी, सब खा लिया क्या ?' सुब्बी दग-सी रह गई। उसन बटी से फिर पूछा, 'मुझे भी नही दिया। उस गुड्या को भी दिया या अकेली ही चट कर गई ?' सुब्बी घबराकर चुपचाप खडी हो गई। 'कल को सुसराल जाएगी तब बकासुर की तरह सब कुछ अकेली खा लेगी तो कैसे चलेगा ?' उसका इतना कहना था कि सुब्बी की रुलाई निकल पडी।

तब सरस्वती ने कुरेदकर पूछा तो सुब्बी ने बताया, "मैंने अपने खाने को नही बनाया था, गुडण्णा के लिए बनाया था। नही-नही उसके लिए।"

तब माँ न गुस्से से पूछा, "वह कौन री ? क्या बके जा रही है ?'

सुब्बी सिसकियाँ लेने लगी। तभी माँ ने बेटी के गाल पर एक तमाचा रसीद किया।

बेटी को मारने के बाद माँ ने महसूस किया कि मारना नहीं चाहिए था। पर शायद उसी थप्पड के कारण सुब्बी सब बक गई।

गगी का जी मचल रहा था।

सरस्वती पत्थर सी रह गई।

माँ चिल्ला पडी, अरी चुडैल क्या कह रही है ?"

'माँ तुम बेकार मे मुझ पर मत झल्लाओ। गगी औरत है, उसका जी मचलेगा नही ?" इतना कहकर वह वहाँ से भाग गई, नही तो एकाध और थप्पड पड जाने का डर था।

सरस्वती ने माथा पीट लिया।

गगी का जी मचल रहा है। कालिया गाँव मे नही है।

सरस्वती के हिसाब से गुडण्णा के काम से अच्छे-बुरे का सवाल नही था। वह मद है। सब मर्दों की आदत ही गुडण्णा मे भी आई। इसके अलावा होलती पर ब्राह्मण का अधिकार है ही। गुडण्णा के बारे मे उसे कोई डर ही नही था। उसे तो अपने भाई क बारे मे चिंता थी। बेचारा ! छुटपन म उसके परस्या के साथ खेलने के कारण ही कितना महाभारत मचा था। पर अब उसी भाई को यह कसा प्रसग अपनी आँखो से देखना पड रहा है।

कुछ भी हो, अब देर करने से काम नही चलेगा। गुड्या की शादी कर ही देनी चाहिए इसी सुब्बी के साथ। कम-से कम उनके जीते जी सब जाति का एक होना ठीक नही।

रघुनाथराय यह सोच भी नही सकते थे। यह खबर सुनते ही उनको लगा, मानो उनकी प्रतिष्ठा धूल मे मिल गई। अपने बचपन मे उन्हे यह सब खेल सा दिखता था पर क्या अब गगी-गुडण्णा की बात को बचपना कह सकते हैं? लडका-लडकी की कोई जाति नही होती है। स्त्री पुरुष के बीच मे जाति नही होती है। कैसी बात? अब तक उन्हे यह मालूम न था। उन्होने यह सोचा तक नही था कि उनके जीवन-काल मे ऐसा भी हो सकता है।

राय साहब के लिए सबसे अधिक महत्त्व की बात थी कुल की मर्यादा। अब तक गाववाले उनके घर की नीति रीति के कारण उन्हे सम्मान की दृष्टि से देखते थे।

पर आगे से? सब लोग रघुनाथराय का इस कारण सम्मान करते थे कि उन्होने परम्परा को बनाए रखा। पर अब?

रघुनाथराय ने सबसे पहले एक काम कर देने का निश्चय किया। वह था गुडण्णा की शादी। वह भी सुब्बी के साथ।

पिता ने गुडण्णा को बुलवाया तो उसने सोच लिया था कि आज पिता से सबध सदा के लिए टूट जाएगा। वह जानता था कि उसकी करतूत पिता के कानो तक पहुँच गई है। पर उसे यह भय भी था कि चूकि प्रश्न घर की इज्जत का है इसलिए सबके सामने चर्चा नही होगी। उसे इस बात का डर भी था कि इसी कारण पिता ने उसे एकात मे बुलाया है। वह यह निश्चय नही कर पाया था कि पिता के पूछने पर उत्तर क्या देगा। इससे पहले ही वह पिता के सामने खडा हो गया था।

दोनो ने एक दूसरे से मुह यू फेर लिया मानो उनका कोई परिचय ही न हो।

गुडण्णा ने ही मुह खोला, 'आपने बुलाया?"

रायसाहब बोले "बुलाया, हा, बेकार म इस सरस्वती की ही जल्दबाजी है।' बुआ का प्रसग आते ही गुडण्णा के पावा तले की जमीन खिसक गई। उसकी सूक्ष्म निरीक्षण-शक्ति से वह सदा डरता था।

उसने पूछा, "कही जाना है?" उसने सोचा कि कही जाता हो तो उनका काम हल्का कर देगा।

"कही नही जाना है। घर मे ही काम है। वसे तुम्हे कहने की भी जरूरत नही है" जरा-सा मुस्कराकर बोले, 'फिर भी आजकल के लडका का तरीका ही बदल गया है। इसीलिए तो कहता हूँ, जितनी जल्दी हो सके मुन्नी के साथ तुम्हारी शादी हो जानी चाहिए।"

बेटा चकित होकर जरा सीधा खडा हो गया। उससे डरकर राय-साहब जल्दी से आगे बोले

"घर मे होते हुए यह न हुआ तो कम? उसका अपना और कौन है? यानी तुम्हारी बुआ का और कोई नही है। तुम दोनो एक साथ पले हो। इसलिए तुम और मुन्नी ।'

"इसके बारे म मुझे कुछ भी नही कहना है। आप जो कहते हैं उसे मै खुशी से करूँगा।

रायसाहब ने 'आ?' करके चकित होकर बेटे को देखा। पिता से आँखे मिलाने का साहस न होने पर बेटे ने सिर नीचा कर लिया। एक क्षण के लिए रायसाहब को विश्वास न हुआ। बाद मे उन्ह सारी बात याद आ गई। सामने सिर नीचा किये खडे जवान बेटे को उन्होंने और एक बार गौर से देखा। उनके मुह पर मुस्कराहट छा गई। बेटे को उन्होने फिर से देखा तब उनकी मुस्कराहट गायब हो गई। जरा गुस्से के स्वर मे वे बोले

ठीक है, जा। बडा समझदार हो गया है।'

जान बची सोचकर खुशी से गुडण्णा वहाँ से खिसक गया। रायसाहब जाते हुए बेटे को मुस्कराकर देखते रहे।

पता नही उन्हे किस बात की याद आई। उन्होंने विषाद से एक लबी सी सास छोडी।

अगले कुछ ही दिनो म मुन्नी गुडण्णा की शादी हो गई। उसम गाँव-का गाव ही आमन्त्रित था।

सदा की भाति परम्परा का ताजा खाना जूठन की पत्तल म परोसा गया पर कालिया जूठी पत्तलें उठाने के लिए नही आया। वह जानबूझकर

नही आया था।

सुब्बी के अलावा गुडण्णा की शादी से और किसी को खुशी नही हुई थी। यदि किसी को मानसिक पीडा हुई थी तो वह कालिया था। लौटकर आन के बाद से वह पहले वाला कालिया नही था। वह भीतर और बाहर स बदल गया था। सदा से रायसाहब और छोटे मालिक को देखन पर जमीन छूकर नमस्कार करना और धूल को माथे पर चढाना परस्या और कालिया की एक आदत सी बन गई थी पर अब? परस्या को इस बात का दुख हुआ कि कालिया सिर क्यो नही झुकाता। उसका विश्वास था कि प्रत्यक को अपनी-अपनी जाति का काम करना चाहिए, इसी म पुण्य है। परपरा से चली आई सेवा के लिए बेटे मे रुचि का अभाव देख कर उस विषाद हुआ। पहली बार कालिया का देखने पर रायसाहब हैरान हा गए। उसकी बात, उसका रगढग, सब से बढकर उसके तनकर नमस्कार करने का ढग देखकर उन्ह बडा अजीब लगा।

उन्हान जरा ऊँचे स्वर मे कहा, 'विलायत जाकर कितना बदल गया रे!"

उसन उत्तर दिया, "जी वहा ऐसे ही रहते है।"

'बाप रे!' रायसाहब अवाक रह गये। कालिया ने उनके स्वर मे स्वर मिलाया। उनकी बात का उसन जवाब दिया। ऐसी घटना कभी नही हुई थी। अब तक उनके सामन किसी अछूत न जवाब नही दिया था। क्या इस छोकरे को मालूम नही कि ऐसा करना गलत है? रायसाहब न जरा अधिकार के स्वर मे कहा, 'जरा रास्ता छोडकर खडा हो रे।"

कालिया को जितना अचरज हुआ उतना ही दुख भी। वह कहाँ से कहा तक हो आया, क्या-क्या कर आया, क्या क्या देख आया। यहा किसी ने भी यह पूछने की जरूरत नही समझी कि वहा क लोग कसे है? यहा किसी स कुछ कहना चाहता है तो दूर रहो कहकर चेतावनी दते हैं। यह कैमी विचित्र बात है? जब वह सेना म था, तब विदेश गया, तब वहा तो किमी न 'दूर रहो' नही कहा था। शुरू म वह खुद डर के मारे सिकुड कर दूर दूर रहता था, पर दूसरो ने स्वय आ कर दोस्ती की। उसकी पीठ थपथपाइ तो उसे लगा था कि वह जसे धरती म धँस जाएगा। दूसरा के छूने स उसे इतना डर होता था। उसने देखा कि वहा किसी भी देश मे

छुआछूत नही है। उसने वहाँ किसी से पूछा भी नही। पूछे कैसे? 'क्या आप हमे छू सकते हैं?' कही ऐसा पूछता तो वे उसे पागल नही समझते? इसलिए वह चुप रहा।

कुछ दिन वहाँ रहने के बाद कालिया के दिमाग से यह प्रथा ही निकल गई। वह भी अपने को दूसरो के समान समझने लग गया था, आदत भी पड गई थी। उसने खूब पैसे इकट्ठे किये। यह भी बताना पड़ेगा कि क्या? उसे एक आशा सता रही थी। जमीन खरीदनी चाहिए खेती करनी चाहिए, उसमे खूब अनाज उगाना चाहिए, उस अनाज से घर मे गरम गरम खाना पकवाना चाहिए, कम से-कम एक बार तो जूठन छोडकर अपने घर मे पका गरम गरम खाना खाना चाहिए। यह सोचकर खूब पैसे बचाकर यहा आया। पर, यहा क्या रखा है? फिर से लोगो ने यही कहना शुरू किया, 'छूना मत'। वह हजारो को छूकर आया था। पर गाँव के रायसाहब के घर के सामने झाडू देनी पडी। इतने दिन से वह यह सोचता आया था कि वह भी दूसरा के बराबर है। पर खेत खरीदने की सोचता तो उसे डर लगता कि उसका छुआ धन तक लोग छुएँगे कि नही? यह देखकर उसे दुख हुआ कि अब भी सभी उसे तुच्छ समझते हैं। पर किया क्या जाय? खेत खरीदने की बात स्थगित हो गई। एक दिन पास के गाँव मे जाकर खूब चढा कर घर आया।

घर आते समय वह सोच रहा था कि उसमे सैकडा मनिका की शक्ति है। उसने आवाज दी, 'ए! सो गई क्या?"

झोपडी की टट्टी भीतर से बद थी। उसने परस्या को कभी वहाँ सोते नही देखा था। रायसाहब के फाटक के सामने जरा दूर एक पुराना पेड था। परस्या रात मे सदा वही सोता था। घर के सामने रायसाहब की धान की खेती थी। उस गाँव में उन्हे चोरो का डर नही था। पर परस्या को कोई काम चाहिए था न? रात की रखवाली उसका कर्तव्य था इस लिए वह उस पेड के नीचे पडा रहता था। वर्षा के दिनो मे, केवल एक मास के लिए चार लकडियाँ खडी करके एक छप्पर डालकर वह धरती पर पडा रहता। इसलिए कालिया को इस बात का धैर्य था कि बाप घर मे नही होगा। साथ ही वह एक और बात से भी चिढ गया था, वह चिनगारी का काम कर रही थी। उसके आने के बाद गगी उससे दूर-दूर

ही रहती थी। प्रत्येक बार जबदस्ती करके ही उसे मनाना पडता था। मेना म रहने इस बात का अनुभव उसे हो चुका था कि अपनी इच्छा के बिना स्त्री पुरुष के पास कैसे जाती है। उसने गगी मे वही बात दखी। क्या? इसके लिए उसम अभिमान होना चाहिए था। अब इसका चाल-चलन, वेश भूषा सब बदल गये हैं। कोई भी औरत उसे पसद कर सकती थी। पर यह गगी बिदकी गाय की तरह शरीर अकडाकर दूर क्यो खिसकती है। रोजउसके मन म इसी बात से असतोष बढता जा रहा था। वह सोच रहा था कि एक दिन देख लूगा। उस दिन शराब क नशे ने उसे उकसाया था।

उसने कडककर कहा, "ए, सो गई क्या?" भीतर से कोई आवाज नही आई। उसन अधिकार के स्वर मे कहा, "ए, सुन रही है कि नही?"

भीतर स कुछ बडबडाने की आवाज आई। पास जाकर गरजा, "क्या कहा?'

गगी बोली, "लडाई से लौटने पर घमड हो गया?"

कालिया दो कारणो से अपने को रोक न पाया। गगी की आवाज मे तिरस्कार था। उससे भी बढकर भरी जवानी का अकडकर खडा स्त्री का भरा हुआ शरीर! बिना कुछ बोले उसने उसे कस लिया। मद से भरे पुरुष की शक्ति के सामने स्त्री हार गई। इसके अलावा देह धम भी तो कुछ होता है न? इसलिए बिना इच्छा के भी स्त्री का शरीर हार गया।

कालिया का मद उतर गया।

"कालिया, धत् तेरी की," कहता हुआ वह उसकी छाती पर हाथ रखकर उठा। बेचारी गगी चीख पडी।

'हाय! तुम मुझे मार डालना चाहते हो? तुमने कितने जोर से मुझे दबाया? हाय!' कहकर वह बिलख पडी।

कालिया का मद उतर गया था पर नशा नही उतरा था। इसके अलावा जो विचार उसके दिमाग मे उठा उससे उसके बदन म आग-सी लग गई।

वह बोला, "तुझे मार डालना? वह समय भी आएगा। पर तेरे मुह स उगलवाये बिना तुझे मार भी नही सकता।"

गगी जरा घबराई। उसन कहा, "मेरे मुह से? तुम क्या पूछ रहे हो?

'तेरा यार कौन है?"

तरफ लाग यही बातें करते थे। उसे सुनकर कालिया को ऐसा लगता कि गाँव छाडकर भाग जाए या गले म फन्दा डालकर मर जाए।

"देखा कि नही ? सूट-बूट तो पहनकर आया है। पर इससे क्या ?"

"बदर को कपडे पहना दो म क्या आदमी बन जाएगा ?" इस प्रकार लाग आपस मे बातें किया करते थे।

एक आश्चय प्रकट करता "अरे पत्नी का ऐसे मारन का क्या मतलब ?'

दूसरा दशन बघारता, 'शराब पीकर नशा चढ जाय तो पत्नी और बच्चे कोई भी दिखाई नही देत।"

सुना है वह खेत खरीदना चाहता है।"

'यह बात है ! लगता है, जमनी के कैसर को इसी न हराया है। वहा जमनी का राजा बनकर रह जाना था, यहाँ क्या आया ? आँ ?"

"असली गलती तो सरकार की है कि इनको सिर पर चढा रखा है।"

"इससे बेकार म आपस मे झगडा बढता है।"

"यही बात नही, ये पगले लडाई म गय थे न ? इन्ह कुछ-न-कुछ लालच दिखाना है कि नही।'

कालिया की समझ मे कुछ नही आया कि लोग उसके विरोध म क्या हैं ? यह सच है कि उसने अपनी पत्नी को मारा था। वह मरी नही है, चाट भी नही लगी है। पर लाग बेकार मे बात को तूल क्या दे रहे है ?' झूठी बदनामी क्यो कर रहे हैं ? ऐसे मौके पर कौन नही मारता ? वह तो मद की मदानगी पर बट्टा लगाने वाला प्रसग था। इसीलिए उसे एकदम ऐसा गुस्सा आया था। गगी जब नीचे गिर गई और खून वह निकला तब उसे होश आया। एक मिनट का तो उसने समझा था कि गगी मर गई। आगे क्या हागा ? राता रात भाग जाने की सोच रहा था। गगी के मुह पर हँसी देखकर उसे अचरज हुआ और शम भी आई। पहले तो इस बात की तसल्ली हुई कि गगी मरी नही है पर इसे समझ मे नही आया कि वह हँसी क्या ? उसका कारण उसकी समझ म नही आया। वह उसके पौरुष के सामने हार जान पर भी हँस रही थी। क्यो, हँसना नही चाहिए क्या ? दिखावे के लिए हारने पर भी वास्तव मे वह जीती थी। वह रक्त की धा की जय की पताका थी। उस रक्त की धार म कालिया के पौरुष को

ले जाने वाले नाले का-सा प्रवाह था। वह प्रवाह केवल एक क्षण क लिए आया था दूसरे क्षण नही था। उस एक क्षण के कारण, एक पुरुष का पुरुषत्व, कालिया का पौरुष चिरतन रूप से वह जाय तो जीवन म कौन सा सुख रह जाता है?

पर वह सब कालिया को उस क्षण मालूम नही हुआ। पत्नी ठीक ठाक थी इसलिए उसे ज़रा तसल्ली हुई थी। कालिया की मानसिक स्थिति को देखकर गगी को दया आई। उसकी मुस्कराहट को देखकर कालिया को और भी अचरज हुआ। खून बहुत समय हसन का मतलब?

उसने कहा 'तुम औरत हो या राच्छसी?'

गगी हँसती हुई बोली, "मर जाती तो पता लगता, मैं कौन हूँ।'

'बताओ न, कहाँ चोट लगी?"

'चोट लगी है, पेट की आंता मे।'

'क्या कहा? गीली पट्टी बाँध देता हूँ, खून बहना बद हो जाएगा।'

'गीली पट्टी!' जान न होने पर भी गगी हँस पडी। कालिया हैरान होकर दखन लगा।

गीली पट्टी? हन्ह ! तुम एकदम पागल हो, मूख कही के। तुम क्या समझे? चोट नही लगी, पेट से ही खून जा रहा है।"

ऎं, ऐ तुमने क्या कहा?"

पाँच महीन थे।' उसने ऐसे आखें मूद ली मानो अब तक की सारी कोशिश बेकार रही।

कालिया तीन चार दिन म सब समझ गया। एक घोर सत्य उसके सामने आ गया कि उसका सदेह सही था। पर वह क्या कर सकता है?

'भगवान की कसम खाकर कहती हूँ तुम्हे छूकर कहती हूँ छोटे मालिक के अलावा मेरे पास कोई दूसरा फटका तक नही।' गगी क मुह से यह बात सुनते ही कालिया एकदम निराश हो गया। वह छोट मालिक का क्या कर सकता है? गगी न कहा था, 'तुम मरद क्या बने?' कालिया समझ गया कि सारी गलती उसी की थी। गुडण्णा की बात बताते हुए वह बिलख बिलखकर रोयी थी। जवान पत्नी का वह छोडकर चला गया था। मालिक अपने अधिकार के मद म उस पर ज़बदस्ती करे तो वह

बचारी क्या कर सकती थी ? गगी ने यह बताते हुए विलाप किया था।

"उनकी जाति मे औरतें ऐसी ही होती हैं," लोगों के मुँह से यह बातें सुनकर कालिया को बडा दुख हुआ। वह यही सोचकर तडप उठा कि ऐसी बातें सुनने भर को ही यह कमबख्त जाति है ?

अब वह गगी के हाथ का खिलौना बन गया था। गगी को भी एक हथियार की जरूरत थी। वह समझ गई थी कि इन दिनो गुडण्णा उसे दूर रख रहा है। गगी यह जानती थी कि गुडण्णा आज नही तो कल उस छोड देगा। पर उस इस बात का दुख हुआ कि चेन्नी जैसी एक दूसरी लडकी के कारण उसने उसे छोड दिया। गगी के मन मे द्वेष बढन लगा। कालिया, रामप्पा दोना एक ही नमूने के मद हैं, उनकी औरत को उनके सामन ही कोई खराब कर दे, तो भी हाथ पर हाथ धरे बठे रहते हैं। वे तो बिना रीढ की हडडी वाल मद हैं। गुडण्णा—वह भी एक दूसरे नमूने का मद है, जब चाहे दूसरे की स्त्री को भोगना और बाद मे ऐसा दूर कर देना मानो उसका कोई सबध ही न रहा हो। ठीक है, काँटे से ही काटा निकाला जाता है। कालिया से ही गुडण्णा को दुरुस्त कराऊँगी। गगी ने मन मे निश्चय किया। वह दिन-ब दिन कालिया पर प्रेम बरसाने लगी। हाथ पकडकर खींचन पर भी न आन वाली स्त्री को प्रेम से अपने आप आते देखकर कालिया का पौरुष तीक्ष्ण रूप से जाग्रत हो उठा। गुडण्णा से द्वेष करन म उसे ज्यादा समय नही लगा।

तभी गुडण्णा की शादी हुई। सारा गाँव आमन्त्रित था। परस्या को जूठन मे ताजा खाना परोसा गया था। पर कालिया न आया। गुडण्णा की जूठन उसके लिए विष थी, गुडण्णा की जूठन उसे ललकार रही थी।

## 5

"परस्या, अब हमारा-तुम्हारा जमाना लद गया।"

"यही कहना पडेगा, मालिक।"

"कालिया से बात की ?"

परस्या मुह नीचा करके बैठ गया।

गुडण्णा के ब्याह कुछ दिन बाद की बात है। रायसाहब का मन थोडा हल्का हो गया था। गुडण्णा के बारे म उनके मन मे जो डर था, वह कुछ कम हो गया था। उनका विचार था कि बाल बच्चे हो जाने के बाद आदमी मे जिम्मेदारी अपने आप आ जाती है। पर उनकी धारणा गलत निकली। इन दिना गुडण्णा के बारे मे रायसाहब दुखी थे। लोग पता नही क्या क्या बातें करते थे। पहले गगी की बात उठी, बाद मे उस लडके रामी और गुडण्णा के मेलजोल की बात सुनने म आई। यह बात राय साहब के लिए कोई महत्त्व न रखती थी। चढती जवानी के अल्हडपन न किसे छोडा है? यह गर्मी की बौछार की तरह है, शादी हा जाए ता सारे क्लेश ही कट जाते है? इसीलिए रायसाहब का उसके इस व्यवहार पर चिन्ता न थी। उन्होने उत्साह से ही कुछ अधिकार बेटे को नहा सौंपे थ? पर उस बारे मे उन्हे काफी असताप हुआ, मन दुखी हुआ। कैसी गैर-जिम्मेदारी! कितना खच! रामप्पा की पहलवानी के लिए पिता की आख बचाकर गुडण्णा न बहुत खच किया। वह सब अब याद करन से फायदा? गगी, चेन्नी के चक्कर म भी पता नही गुडण्णा न कितना खाया। यह सोचकर रायसाहब काप उठते थे। आज नही तो कल यह सारा कारोबार उसी लडके के हाथ मे जाना है, तब भी यही लत लगी रही तो क्या हागा? रायसाहब को यही डर था। डरने की बात भी थी। विवाह के समय का फायदा उठाकर गुडण्णा न अपनी स्थिति सुधार ली थी। रायसाहब को यह पता था कि तीन चार जगह पर गुडण्णा ने लगभग तीन चार हजार का कर्जा कर रखा था। उसे कोरा बचपना समझकर रायसाहब ने कर्ज पटा दिया था। पर मन म तसल्ली न थी। ऐसी बात उनके खानदान मे कभी नही हुई थी। पूवजो स जा चला आया था उसे बढाया ही जाता था। पर इस लडके म घरान का अभिमान ही नही। रायसाहब ने उससे बात करके देखना चाहा पर हिम्मत नहीं हुई। बात यह है कि आजकल के लडका का स्वभाव ही विचित्र होता है। व अपने को बडा समझकर उसस बात करें और वह कोई उलटा-मुलटा जवाब द दे ता? इसीलिए व हिचकिचा रह थ। यदि हर एक माता पिता यही अनुभव करें ता दुनिया की क्या हालत होगी? रायसाहब ने लबी साँस

खीवी, जरा दूर मुँह नीचा करके बैठे परस्या को देखकर उन्होंने पूछा

"तुमने अपने कालिया से बात की ?" मालिक के प्रश्न का उत्तर कैसे दिया जाए ? परस्या मुह उठाकर रायसाहब के मुह के अलावा चारों ओर देखकर बोला

"लडका बडा हो गया है। मेरी बात सुनेगा क्या ? इसीलिए मालिक ही एक बार झिडक दें तो।"

रायसाहब की ध्वनि मे अधिकार का दप था, मुह पर मालिकपन का गाभीर्य छा गया।

"क्या ? वह कहता क्या है ? मैं पहले तुमसे पूछकर बाद म अपनी बात कहना चाहता था क्योकि लोग कई प्रकार की बातें कहत ह। सुना ह कि वह खेत खरीदना चाहता है। यह भी सुना है कि वह कोई कारखाना खोलना चाहता है। इसीलिए तुमस पूछता हूँ, उसका दिमाग तो खराब नही हो गया ?"

"लोगो की बातें नही सुननी चाहिए, मालिक। वह तो पगला है। पता नही वह क्या कहता है। यह भी नही जानता कि लोग उसक मुह से क्या क्या कहलवाते हैं। उसे यह मालूम नही कि मालिक की सवा स हमारी दुनिया चलती है।"

"यह भी सुनने म आया कि उसने फिर से पीना वीना और बीवी को पीटना पाटना शुरू कर दिया है।"

'छि ! छि ! मालिक के पाव पकडकर कह सकता है यह परस्या। मालिक को ऐसी बात पर बिसवास नही करना चाहिए। यह लडकपन है उसका। एक दो बुर लागो की सगत का असर है। पर ऐसे काम करने का मतलब क्या है ?"

मैं भी तो वही कहता हूँ। मुझे यह सब अच्छा नही लगता। मैंन भी देखा है, ऐसा लगता है कि तुम्हारा कालिया मान-मर्यादा तक भूल गया है। इसीलिए ता कहता हूँ। तुमे खुद मालूम है। हम जब छोटे थ तब बडे लाग हमे कैसे डरा धमकाकर रखते थे। अब हमारे गुडया को ही लो न।" रायसाहब ने गला साफ करके उस वाक्य को दुहराया।

"छोटे मालिक की बात कह रहे है ? अभी नई नई जवानी ।"

"यह बात नही रे, तू तो मूरख है। मैं कुछ कहता हूँ तो तू कुछ

समझता है। हमारा गुड्या भी तो हम से डरता है, यही कह रहा था।"

' मैं भी वही कह रहा हूँ, हुजूर। आप भी सदा उनकी भलाई के लिए ही तो कहते हैं। शादी कराकर आपने उन्हें एक खूँटे से बाँध दिया ।"

"तू तो पागल है, सठिया गया है। लेकिन अक्ल नहीं आई तुझमें। आँ ? ह ह इसीलिए तो तेरा बेटा भी तेरी बात नहीं सुनता, आँ ?"

"जमाना बदल गया हुजूर। घर-बार, बड़े छोटे, जाति-कुल, यह सब तो खत्म होने लगे हैं ।"

'ए पगले, जरा धीरे बोल।"

नहीं मैं तो अपने कालिया की बात कह रहा था। कहीं लड़ाई में गया था न ! वहीं किसी ने जादू-टोना करके दिमाग ही बिगाड़ दिया है। आते ही फिरंगिया जैसी बातें करने लगा है। जमाना ही बदल गया, हुजूर।

"उसकी बात कौन सुनेगा ? पर उससे कहा, जरा होश में रह। शाम के समय जब मैं या घर की औरतें मंदिर जाते हैं तब वह रास्ते में घूमता घामता दिखाई पड़ता है।'

अरे ! उसका बेड़ा गरक हो ! मुझे मालूम नहीं था, नहीं तो "

' यों ही गुस्से में नहीं आ जाना। जरा समझाकर कहना ! आज नहीं तो कल उसे तेरी जगह लेनी है।" कहते हुए रायसाहब उठ खड़े हुए। परस्या के लिए उस दिन का दरबार वहीं खत्म हो गया।

कालिया के मन में एक बात थी गुडण्णा उसका शत्रु है। उससे बदला लेना उसका कर्त्तव्य है। बाद में यह कमबख्त गाँव को छोड़ सकता है। उन दिनों उसने पीना तो बंद कर दिया था, पर नशा नहीं उतरा था। अब गंगी उसमें नशा भरा करती थी। रोज गुडण्णा के बारे में कोई-न-कोई मनगढ़त चित्र उसके सामने खड़ा कर देती।

एक दिन उसने अनजान बच्ची के समान कालिया से कहा मालूम है, उसने एक दिन क्या किया ?"

वह सब लेकर क्या करना है ? मैं जब नहीं था तब उसने क्या किया और क्या नहीं किया, इससे क्या ? अब मैं आ गया हूँ, अब कोई यह सब बदरपन करने की हिम्मत न करेगा।" उस स्वर में दुनिया को

ललकारने का सकेत था। कालिया ने यह बात पति होने के अधिकार और घमड से कही।

'फिर भी वह सब याद आते ही कलेजा काँप उठता है। एक दिन बावडी के पास क्या हुआ, मालूम है ?"

गगी न बात इस अदाज मे कही मानो वह कोई सच्ची कहानी हो। पर कालिया का उसे सुनने की इच्छा नही थी। उससे उसे अपमान की याद हो आती। यही नही, वह यह जानता था कि उसे सुनन पर भी वह कुछ कर नही सकता। वह अपनी बेवसी को याद नही करना चाहता था। पर वह जितनी बार एसी बातो का रोकता, उतनी ही बार कोई-न-कोई बहाना लकर गगी वही बात उठाती। इसलिए उसका गुस्सा भडक उठता, जसे राख हटान पर चिनगारी चमकने लगती है।

कालिया ने यह निश्चय कर लिया था कि एक बार गुडण्णा से बदला लेन के बाद इस गाँव को छोड देना ही ठीक रहेगा। उसके दो कारण थे एक ता उसने अपने पिता से कह दिया था, 'ऐसे रहने म कौन-सा सुख है ?' तब उसके बाप ने उसे डराया था, 'बाहर जाने पर हमे पूछेगा कौन ? भूखा मरना पडेगा।' फिर भी कालिया के निश्चय मे कोई परिवतन नही आया।

उसन बाप स ही पूछा था, "ऐसे रहने मे कौन सा सुख है ?" यह पूछत समय उसकी ध्वनि मे यह दुख छिपा था कि हजारो सालो से स्त्री-पुरुष का जो सबध चला आ रहा है उसस उसके पुरुषत्व का ठेस लगी थी। उसकी पत्नी गगी का गुडण्णा ने भोगा था। वह न केवल उसका पति था, उसका मालिक भी था। पर उसका प्रतिकार करने की सामथ्य उसमे नही थी नामद बना घूम रहा था।

इसलिए पिता स उसन जरा हठ मे ही दुबारा पूछा था, "ऐसे रहने म कौन सा सुख है ?'

परस्या बेटे की बात सुनकर असमजस मे पड गया। उसकी समझ मे नही आया था कि उसका बेटा ऐसे क्या कह रहा है। शादी हुई है, पत्नी सयानी हो गई है। रायसाहब भी बेटे की शादी करके खुश है। पर इस लडके की समझ म एक बात भी नही आती है। विलायत जाकर दिमाग खराब कर आया है। ऐसे रहा तो कैसे चलेगा ? उसे अब क्या हो गया

है ? कैसी बातें करने लगा है ?" परस्या को यह चिंता खाये जा रही थी।

उसने एक दिन बेटे से प्यार से पूछा था, "ऐसे रहने मे कौन सा सुख है पूछ रह हो ? क्यो ?"

तिरस्कार से कालिया के होठ सिकुड गये, 'इसम क्या हो गया ?' 'क्या हो गया' इन्हे क्या बताऊँ ? वास्तव मे देखा जाए तो क्या हुआ था यह कालिया को भी ठीक से मालूम न था। पर एक बात जरूर उसे मालूम थी। उसकी विदेश म देखी दुनिया और लोग कुछ और ही थे। वहाँ उसे किसी प्रकार का सकोच नही था। वहाँ वह जो कुछ कहता, लोग सुनते। उसे देखकर कोई दूर नही भागता था। इस कारण वह अपन ऊपर गर्व महसूस करने लगा था। पर यह अब तक उसे स्पष्ट मालूम न था। उसने केवल यही समझा था कि चार आदमियो मे वह भी एक आदमी है। पर यहा आने के बाद ? क्या है ? घर म पत्नी की आखो म ही उसकी कोई कीमत नही है। जो भुगतता है वही जानता है। पूछता है क्या हुआ ? अभी कुछ और होना बाकी है क्या ?

इसीलिए उसन बाप से ही पूछा, "क्या मतलब ? अभी कुछ और होना चाहिए ?'

बाप न जवाब मे उसी से प्रश्न किया, "नही, तू जो ऐसे कह रहा है, इसीलिए पूछा, क्या हुआ ?'

"हाँ यहाँ सुबह स शाम तक सिर झुकाए गली-गली सहमी हुई गाय की तरह किनारे किनारे रहने की अपेक्षा "

'बाप न टोका और बेटे को बडप्पन से समझाते हुए कहा, तुम पागल हो कालिया मैं कहता हूँ तुम पूरे पागल हो, इधर-उधर फिरकर दिमाग खराब कर आए हो। अरे, ऐसी बातो म कौन सी अक्लमन्दी है। जहाँ आदमी पैदा होता है, उसे वही रहना चाहिए।

हठी बच्चे की तरह कालिया बोला "इसीलिए तो कहता हूँ, ऐसे रहने की जरूरत नही।'

आहा, फिर वही बात कह रहा है। अगर जरूरत नहीं है तो पेट कैसे भरेगा ?'

क्या मैंने नौकरी नहीं की थी ?'

'यही तो कह रहा हूँ। उस नौकरी ने तेरा दिमाग खराब करके रख

दिया है। क्या मरने तक तू विलायत म ही रहेगा ?"

"विलायत मे क्यो ? यही कही, दूसरी जगह।'

"पागल कही का !" कहकर परस्या बडप्पन की समझदारी दिखाता हुआ हँस पडा था। "जा ! इसलिए तो कह रहा हूँ तू पगला है। वहा तुझे कौन नौकरी देगा ? कौन तुझे चार आदमियो के बीच बैठने देगा ? हमे अपना काम ही करना चाहिए। बाहर की बात कहता है। वहा हमे कौन पूछेगा। भूखा मरना पडेगा।"

बात आखिर मे वही आ पहुँची। भूखा पेट ! कालिया के सामने पहली बार यह प्रश्न आया। अब तक बाप की छाया मे पल बढे कालिया को इस बात का ध्यान ही नही था कि पेट कैसे भरता है। जरा बडा होने के बाद उसने अभिमान से यह समझा था कि रायसाहब के घर की जूठन पर उसका अधिकार है। अब गगी के प्रसग मे समझ मे आया कि जूठन खाने वाले कुत्ते से भी बदतर होते है। तब से उस अन्न के लिए, उसके मिलने के ढग से उसे घृणा हुई। 'अब आगे क्या करे ? पिता का कहना है कि उस अन्न को छोडने पर भूखो मरना होगा। क्या यही सच है ? यह दुरवस्था उसका पीछा नही छोडेगी ? किसी की गलती से पैदा होने का परिणाम किसे भुगतना पडेगा ? पिता का कहना ठीक है ? भले ही कही चला जाय, क्या लोग सदा उसे दूर ही रखेंगे ? तो उन लोगो के बीच रहने से फायदा ? उनसे दूर रहना चाहिए। पर कैसे ? विलायत चला जा ? यत् वह तो लडाई के कारण वहाँ जाने का मौका मिला था। अब जहाँ हूँ वही कुछ करना होगा। अपने लोगो से सबध ही टूट जाय, कुछ ऐसा ही करना होगा।' इन्ही विचारो मे वह डूब गया।

"इसीलिए तो कहता हूँ, जमाना बदलता जा रहा है। हम अपनी योग्यता को समझना चाहिए। छोटे मालिक का साथ बनाए रखेगा तो तुझे किसी प्रकार की तकलीफ न होगी। समझे बेटे ? कहकर परस्या वहाँ से उठकर चला गया।

'छोटे मालिक का साथ बनाए रखेगा ! ह ह ' पिता की बात याद करके कालिया अपने आप तिरस्कार से हँस पडा। दाँत पीसते हुए मन ही-मन उसने कहा, छोटे मालिक से पत्नी का उद्धार हो गया, अब उनकी

वारी है। छोटे मालिक ! उससे वनाए रखेगा ! उससे छुटकारा पाने के लिए तो वह गाँव छोडन तक की बात सोच रहा है। यहाँ बाप उपदेश झाड रहा है उसका साथ बनाए रखन का।'

गुडण्णा के साथ द्वेष करते समय कालिया को यह संदेह भी न था कि गुडण्णा को भी उमस द्वेष है। उसने उसकी पत्नी को ठगा था। दुष्ट ! स्वार्थी ! अब उसे भूल गया है शादी कर ली है, कैसी बेशर्म जाति है, शादी होन के बावजूद भी उस रामी की पत्नी से याराना जोड रखा है। दूसर की पत्नी को बिगाडन वाले उस बदमाश के साथ बनाय रखना चाहिए ? कालिया अंदर ही अंदर गुस्से से उबल रहा था।

कालिया न जैसा सोचा था वैस ही गुडण्णा किसी को भूला नही था। गगी को वह भूला नही था साथ ही कालिया को भी नहीं। गगी की मांगें बहुत ज्यादा बढ जाने स उसने गगी को छोड दिया था पर उसन यह नही सोचा था कि गगी उसकी नज़र के सामने भी नही पडेगी। उसे गगी से चिढ हो गई। उसने सोचा, हरामजादी को इतना दिमाग हो गया।' जवानी का पहला अनुभव गगी के साथ ही हुआ था। इसलिए उसका गोल गाल मुह चिकन गाल भरा शरीर कभी-कभी गुडण्णा को उत्तेजित करत। अब भी उसके स्पश की भूख मिटी न थी। उसने यह सोचकर उसे दूर रखा था कि वह उस अपनी उँगलियो पर नचा न सके। वह अब उसकी ओर आख उठाकर भी नही देखती थी।

गुडण्णा को एक सदह और था, क्या गगी के इस घमड का कारण कालिया नही हो सकता ? वह तो बचपन से उसके साथ छाया की तरह रहता था। ठग ! हरामी कही का ! सचमुच लडाई मे गया था ? या किसी लफगपन की वजह स जेल गया था ? अब लौटने के बाद उससे दूर-दूर ही रहता है। उसे देखते ही अकडकर खडा हो जाता है। हाँ, ह-ह कुत्ते की दुम की तरह जन्म जन्म से जिसकी रीढ की हड्डी टढी थी वह अब अकडकर खडा होना सीख गया है। इसम भी कसा मज़ा है। उसे घमड हो गया है। शायद गगी के बारे म मालूम हो गया। शायद जबदस्ती उस मुझ स दूर रखा है। साल का कितना घमड है ?

गगी तो सदा उस चाहती थी। गुडण्णा के मन मे धीरे धीरे यह विश्वास बैठन लगा कि कालिया ने ही उसे बाध रखा है। अब तो उसे

'विश्वास न हो तो चला जाता हूँ।" कहकर उसने पाँव उठाए।

चेन्नी ने एक बार मुह उठाकर देखा। उसे एक ओर यह डर था कि पता नही उसके पति पर क्या आन पडी है। दूसरी ओर यह आशका कि बात कर तो पता नही क्या हो जाए। इसलिए चेन्नी मौन रही, मुह पर डर और आखो मे प्रश्न था। गुडण्णा को दखकर उसने अपना चेहरा नीचे कर लिया।

'मैं कुछ कहन आया हूँ पर कही तुम गलत न समझो। यदि मुझ पर विश्वास न हो ता " यह कहते हुए बीच ही म वह रुका।

चेन्नी ने पता नही कितनी देर तक सोचा, अत मे पता नही किस डर न उस साहस दिलाया। वह मुह उठाकर बोली

'उसके लिए मैं जो चाहे करने को तयार हूँ।

'हा हा अब तो यह कह रही हा, पर आगे मैं जो कहने जा रहा हूँ, उसे सुनकर मुझे ही बुरा कहने लगी ता? असल बात यह है कि ऐसे लोगो की मदद करना ही गलत है।"

अत म चेन्नी अपने को रोक न सकी। वह बोली, "मुझे आप पर विश्वास है पर इतनी रात का अकेले आए है इसलिए ।'

दखा? अकेला आया हूँ, इसका मतलब? मैं क्या आया हूँ, मालूम है' रामू इस समय तक घर जरूर आएगा सोचकर।"

चेन्नी ने घबराकर पूछा 'वे आए क्यो नही? वे बीमार तो नही हो गये?"

गुडण्णा एकदम हँस पडा। चेन्नी की समझ मे न आया। वह मुह उठाकर उसकी ओर देखने लगी। गुडण्णा की हँसी न रुकी, 'बीमारी! बीमारी!' कहता हुआ हँसता चला गया।

चेन्नी के मुह पर असन्तोष की रेखाएँ उभरने लगी।

गुडण्णा की समझ मे न आया कि क्या कहे।

चेन्नी धीरे से बोली "आपने कहा वे जरूर आएँगे

'हा कहा तो क्या हुआ?'

'वे कही बीमार ?'

'पत्नी की बीमारी है उसे!' कहकर गुडण्णा जोर से हस पडा। चेन्नी शरमा गई। इसीलिए वह फिर से ठहाका मारकर हँस पडा।

अत मे चेन्नी हार गई। पर वह रामप्पा के अभिमान की रक्षा के लिए हारी। गुडण्णा ने उसे बताया, "रामी के दुश्मन उसका बदनाम कर रह हैं कि रामी ने अपनी पत्नी छोड रखी है। उस पर यह आरोप लगा रहे हैं। रामी अपनी पत्नी के मोह मे पडकर सब जगह हार जाए, यही उन सब लागो की इच्छा है। यदि रामी को बदनामी से बचना है, तो उसके यहा बच्चे होने चाहिएँ। पर रामी की शरीर साधना को धक्का नही पहुँचना चाहिए। उसका क्या उपाय किया जाए?' कहकर चेन्नी के सामने वह सिर पकडकर बठ गया। अत मे उसकी इच्छा पूरी हुई। सीधी सादी लडकी उसके जाल म फँस गई। उससे छुटकारा पाना सभव नही था। अब छटपटाने लगी। क्योंकि चेन्नी अगर कुछ कहना चाहती तो गुडण्णा के लिए उसे बदनाम करना आसान था।

धीरे धीरे चेन्नी की समझ मे आ गया कि गुडण्णा न उसे धोखा दिया है। गुडण्णा भी यह अच्छी तरह जानता था कि चेन्नी मन से उसे पसद नही करती। उसे एक डर था। आज नही तो कल रामी को पता चल ही जाएगा। और वह उसे और चेन्नी को जान से मार डालने मे भी हिच-किचाएगा नही। गुडण्णा का यह भी सदेह था कि अपनी जान बचाने के लिए चेन्नी ही रामी को सब बता सकती है। इसीलिए उसे अनेक तरकीबें लडानी पडी। वह एक तरफ रामी से और दूसरी तरफ कालिया से छुट-कारा पाने के लिए याजना बनाकर मौके का इतजार करने लगा।

जल्दी ही ऐसा एक मौका उसके हाथ आ गया। पत्नी के सामने रहते और उससे बचने वाले रामी को उसकी आँखों से दूर होने पर बडी व्यग्रता होने लगी। किसी-न किसी बहाने से वह पत्नी की आवाज सुनने के लिए तरसने लगा। पर गुडण्णा की पहरेदारी बडी सख्त थी। रामी का मन चचल हाल देखकर उसके साथ और भी स्नेह से व्यवहार करता और प्रशसा करता। ऐसे ही एक मौके पर वह बोला, "अब बहुत हो गई तुम्हारी दोस्ती रामी!" रामी को लगा मानो कुछ चुभ गया हो। 'क्यो उसने ऐसा क्या कर दिया? 'अब बहुत हो गई दोस्ती' कहने का मतलब तो अब तक की सारी तैयारी बेकार गई? आगे की आशाओ का क्या होगा?' यह सोचकर रामी घबरा उठा। उस पर ये मुसीबतें क्या आन पडी? उसने धीरे से पूछा

"क्यो मालिक, ऐसे क्या कहते है ?"

"क्यो का क्या मतलब ? इसम तुम्हारा क्या गया ?"

' नही गवनर साहब, मुझसे गलती हुई हा तो ।"

"गलती तुम्हारी नही, भई, गलती तो मरी है, केवल मेरी ! तुम जमा का भला करन की इच्छा करना ही गलती है। इसीलिए कहा गलती मरी है।"

गुडण्णा के मुह पर पश्चात्ताप की छाप दिखायी दे रही था। उसने लम्बी सास ली। रामी को लगा मानो दिल मे छुरा घोप दिया हा। 'क्या हा सकता है ? उसकी वजह स गुडण्णा को इतना दुख ? किसी न कुछ कहा ता नही ? उस पकडकर जमीन पर पटककर घुटनो स कुचल दूगा। यह सोच रामी न दाँत पीसे। 'उसकी वजह से मालिक का इतना दुख उठाना पडा। उसके लिए हर सुख सुविधा दन वाले गवनर गुड णा का। वह भी उसके कारण !' रामी न ऐसे सिर नीचा कर लिया माना भरे बाजार म उसे जती से पीटा गया हा। सिर नीचा करके ही बैठा रहा। गुडण्णा एक निश्चय पर पहुँच कर लबी साँस लेता हुआ बाला ' गलती मेरी ही है।

रामी अपने को रोक न सका। सिर तो ऊँचा नही किया पर उसके पाव पकडकर गिडगिडाया, ' गवनर साहब, आपके पाँव छू कर कहता हूँ। आपको किसने क्या कहा है ? उसकी लाश बिछा दूगा। उस काटकर कुएँ म डाल दूगा।"

अरे पागल कही का, क्या तुम यह समझते हो कि मैं डर क मारे तुम स यह कह रहा हूँ ? मुह पर दो तमाचे जमा कर खत्म करन की बात होती तो मैं ही निबटा लेता, पर तुम्ह पता नही। अगर तुम्ह पता लग जाय तो मालूम नही तुम क्या कर बठो। क्योकि तुमन अगर उस पर विश्वास कर लिया तो दुनिया खत्म ही समझो। गले म फन्दा डालकर लटककर मर जाना ही बस मरे लिए बाकी रहेगा।"

जिसम खाया उसी थाली म छेद करने वाला मैं नहीं, मालिक। मैं आपक लिए जान तक दने को ।'

' यह मैं जानता हूँ। दखो रामी, कुछ बाता म आदमी विवक स काम नही लेता, गुस्स स अधा हो जाता है।

"आप कैसी बातें करते हैं गवनर साहब मैं एक गरीब मूरख आदमी हूँ, आप से गुस्सा करने का मतलब क्या है ?"

"इसलिए तो कहा था, कुछ बातो म गरीब अमीर का सवाल नही रहता। सूखी घास के पास आग सुलगाने की तरह होती ह ऐसी बातें।"

"आप मुझ पर विश्वास रखकर कहकर तो देखिए।"

"कहकर देखन का फायदा ? मेरे बारे म नही तुम्हारे बारे म लाग बातें बना रहे हैं। लागो की बात छोडो हमारे कालिया का जानत हो हो। वह हमारे घर म ही पला है। वह हरामजादा भी ऐसी बातें कर रहा है।"

"उसने क्या कहा, यह तो बताइए मालिक ! बेटे को एसा ठीक कर दूगा कि चमार टोले म भी जगह न मिलेगी।'

वाह, तुम तो बडे समझदार हो ! तुम्हारे जैसा बुद्ध साथ रहा तो मान मर्यादा ही न बचेगी। वह होलेय है। उसस झगडा मोल लाग ? इससे तो लागो को और भी बात करन का मौका मिल जाएगा।"

"यदि वह बात मरे बारे मे कहता ता बात कुछ और थी। वह आपके बारे मे कह रहा है, आपकी जूतियो म खडे होन की हसियत नही उसकी यह मजाल कि आपके बारे मे ।"

"हाँ, मैं तुम्हारी मदद करता हूँ तुम्हारे घर आता जाता हूँ।'

'तो इसम क्या बुराई है ?"

तुम तो पागल हो, इतना भी नही समझते ? तुम्हे खान पीन को दकर घर से दूर रखता हूँ और तुम्हारे घर जाता हूँ।' गुडण्णा न प्रश्न-सूचक दृष्टि स देखा और आँखें मटकाकर पूछा आ गया समझ म ?'

रामी का सारा शरीर काप उठा। गुस्स, दुख और स्वाभिमान की ज्वाला म वह जल उठा। शरीर पसीना पसीना हो गया। वह बाला 'होलय कहीं का, हरामी का पिल्ला !'

"इधर देखो रामी, तुम गुस्सा नही कर सकते समझे। किसी बात की फिकर भी नही करना समझे ? अगर तुम इस अफवाह का सच भी मान जाओ तो भी मैं तुम्हारा साथ नही छोड़ूगा। यू ही बात म बात आ गइ तो कह दिया।" यह कहकर गुडण्णा ने रामी को तसल्ली दी। परतु वह

जानता था कि इस प्रकार रुका हुआ गुस्सा लाइलाज बीमारी की तरह होता है। और मौका मिलते ही रबड़ की गेंद की तरह उछल पडता है।

इसीलिए उसने मुस्कराकर हिसाब लगाया—कालिया और रामी! काट म काँटा!

गुडण्णा की मुस्कराहट और फल गई।

'तुम बुद्धू हो एकदम बुद्धू।' कहते हुए उसने रामी की पीठ थप थपाई।

"रामी की गुंडागर्दी बढने लगी। कालिया का यह समझने म देर नहीं लगी कि इसमे किसका हाथ है। चमार टोले तक आकर इस तरह पत्थर कौन फेंक सकता है? झोपडिया पर पत्थर पडते समय एकदम वह बाहर निकला तो कुत्ते चुप ही बैठे थे। कालिया को तभी सदह हुआ। यह किसी अपने गाँव वाले का ही काम है, नहीं तो कुत्ते न भौंकते?

बस एक शाम को जब वह पास के गाँव से लौट रहा था तो कोई पीछे से आया और बिना कुछ आहट किये उसको पटककर चला गया। इस घटना स कालिया को विश्वास ही हो गया। वह पकड़, वह कसाव, वह दाँव किसी पहलवान क ही हो सकते हैं।

इससे भी बढकर एक और घटना घटी, जिससे उसे यह मानना पडा कि रामी ही उसका दुश्मन है। उस अपनी पहलवानी पर घमड है। कैसा बेशर्म मर्द है? अपनी जोरू को दूसरे के लिए छोड़ रखा है। पर कालिया यह न समझ पाया कि वह क्या करे? रामी ताकतवर था। मौका पडने पर लोगो की सहायता भी उसी को मिल सकती थी। इसके अलावा कालिया यह भी जानता था कि अपनी औरतो की इज्जत के बारे मे दूसरे नहीं सोचते। तो क्या हुआ? एक मुर्गा भी अपनी मुर्गी के पास दूसरे मुर्गे को आने नहीं देता। सब जगह मर्द का स्वभाव एक-सा ही होता है। अपनी औरत के लिए मर्द मे एक अभिमान रहता है। वह चमार है और गगी चमारिन। पर क्या गगी उसकी नहीं? रामी जैसा लफगा जब चाहे उसे अपमानित कर सकता है? गगी मजबूत है। वैसे देखा जाय तो उनकी जाति की औरतें मजबूत ही होती हैं। जब दूसरो की सहायता नही रहती तब अपने को मजबूत बनाना पडता है न? पर मजबूत होने

पर उस मर्दानी कहा जाता है। मगर मर्दानापन रंडीपना कहा जाता है!
कालिया को एकदम हँसी आ गई। जब यह बात हुई तो गंगी ने उसे बताया था कि उसके और रामी के बीच एक बार झड़प हुई थी। यह बात कालिया को याद आ गई। तब उसने हँसते हुए गंगी को देखकर अभिमान से कहा था, "औरत जात कोई मामूली नहीं होती।"

और क्या? उटपटाँग बकते हुए ऊपर ही चढ़ते चले आये रामी को गंगी ने अच्छी तरह झाड़ दिया था, 'हूँ हूँ पहलवान बना फिरता है। हाथ पैर मजबूत भी हैं। रूप रंग में अपने को कामदेव से कम नहीं समझता। मूछों पर ताव देकर चलता है। पर इससे क्या?"

"मर्द जात जो है। घर की जोरू को हरजाईपन के लिए छोड़ कर दूसरों की औरतों को दिखाता फिरता है। मूछ मरोड़ता जाता है। बेचारा! मर्दानगी का मतलब इसने सिर्फ मूछों पर ताव देना ही समझ रखा होगा।"

गंगी की झाड़ सुनते ही रामी वहाँ से खिसक गया था।

तब से कालिया को यह संदेह न रहा कि उसे तंग करने वाला रामी के अलावा और कोई नहीं।

गंगी के बारे में उसका अभिमान और बढ़ गया। रामी की फजीहत के बखान के जोश में गंगी ने एक और खुशखबरी दी थी।

गंगी को पेट रह गया था।

# 6

रायसाहब की गृहस्थी अवनति की ओर जाने लगी। इसका कोई खास कारण बता सकना मुश्किल है। फिर भी प्रतिदिन परिस्थिति बिगड़ती ही जा रही थी। रायसाहब यह समझ नहीं पा रहे थे कि ऐसा क्यों हो रहा है? "मैंने ऐसा कौन सा पाप किया है कि मुझे यह सब आँखों से देखना पड़ रहा है। जो कुछ पूर्वजों से चला आया है उसे मैं बचा नहीं पा रहा हूँ। हे राघव हे रघुपति यह सब तुम्हारी ही लीला है" कहते हुए वे छटपटाया करते। घर की ऐसी दशा हो जाएगी, वह भी उनके ही

जीवनकाल म, इसकी रायसाहब ने कभी कल्पना भी न की थी। यह सब देखने को वे क्यों जिन्दा रह? लाखा आदमी मर गय पर उन्ह कुछ नहीं हुआ। कोई इन्फ्लुएन्जा से मरा, कोई निमोनिया से। लोगा न बीमारी को तो नाम दे दिया पर दवा न दे सक। बिटटूर जसे गाँव म तीन चार सौ आदमी मर गय। दश भर म लाखा हजारा आदमी मर गय। घर म उनकी बहिन सरस्वती उसका शिकार हो गई। पर उन्हे कुछ नहीं हुआ। वे ही क्या इतने बदकिस्मत है! 'लम्बी सास लते हुए सोचत, सरस्वती गई। अब घर म किसी औरत-जात की जरूरत है।' रायसाहब की बेटी शाता की शादी अभी होनी है। लडकी सयानी हो गई है। बहिन सदा कहा करती थी, रायण्णा बेटी क लिए जल्दी वर ढूँढा। अब वही चली गई। फिर भी बेटी की शादी तो होनी है। वह पद्रह पार कर गई है।

'हमारे जमाने मे इस उम्र तक शादी न हो पाती तो पेट भर खाना नही दते थ। मालूम है तुझे शाति?'

पर बुआ जो माँगती हूँ वह तुम्ही बना बनाकर खिलाती जाती हो?"

'क्या करूँ बेटी कल को तू अपने घर चली जाएगी बिना मा की बच्ची है। लाग कहग, व मा की बच्ची को किसी ने ढग स खिलाया पिलाया भी नही।"

जो भी हो। शाता बडे सुख म पली थी। शरीर मे यौवन की काति दम कन लगी थी। रायसाहब की दृष्टि स भी उसके विवाह का समय बीतता जा रहा था। बेटी बिन ब्याहे बढती जा रही है यह भी कोई पाप है? व कभी कभी सोचते। पर क्या कर सकते थ? काइ चारा न था। बेटी की शादी कोई हँसी खेल है? हाथ म पसा चाहिए। वह कहा से आय? यह सब सोचन से पहले ही एक एक करके खेत हाथ स निकलते जा रहे थे। उनके पिता की तरही श्राद्ध आदि के बाद म बहिन की घर गहस्थी का खच, तभी पत्नी का गुजरना गुडण्णा की पढाई लिखाई, उसकी शादी इन सब कारणा म सपत्ति धीम धीम घट रही थी। अब इकलौती बच्ची की शादी करना भी मुश्किल हो रहा था। कभी-कभी रायसाहब को लगता गुडण्णा अधाधुध खच कर रहा है। पर क्या? इकलौता जवान बेटा, अब नहीं तो कब खच करगा? इसलिए उन्होने हिसाब किताब पर ध्यान नही दिया था। लेकिन अब

शाति की शादी के लिए तो पैसा चाहिए।

एक दिन सुब्बक्का के मुह से निकल ही पडा "पस तो चाहिए पर यह कमे होगा बाबू जी ? घर म और कौन सी लडकी है ? पर इस बात पर कौन ध्यान दे रहा है ? माँ भी इसी बात पर कलपत-कलपत मर गई कि न जान शाता की शादी देख पाऊँगी या नही।'

सरस्वती के मरन के बाद सुब्बक्का पर ही घर गहस्थी की जिम्मेदारी थी। ससुर और सगा मामा एक ही होन के कारण वह घर की हर बात की चिंता किया करती थी। घर की जिम्मेदारी पडने के कारण सुब्बक्का यह भी महसूस करन लगी थी। शाता की शादी करना उसका कतव्य है। साथ ही शाता की शादी उसकी मा की आकाक्षा थी। वह बार-बार ससुर क सामन यह प्रश्न उठाती। तब रायसाहब उत्तर दत, 'सुब्बक्का, तुमन शादी को गुडडे-गुडिया का खेल समझ लिया ? उसके लिए हाथ मे पैसा चाहिए। और विषाद से सिर झटकते वहाँ से चले जाते।

ऐसे मौका पर सुब्बक्का भी लबी सांस लेकर रह जाती। उसे क्या पता नही ? बचपन से वही पली, वही बढी उसे सब पता था। कहाँ उसके बचपन का वैभव और कहाँ आज की स्थिति! पहले यह घर धन धान्य, गाय गारु और नौकर चाकरो से भरा रहता था। पर अब ? सप्ताह म एक दिन भी परस्या को खाना देना मुश्किल है। काम पडने पर दुकान से सामान लाने वाला कोई नौकर नही है। उसकी मा ही भाग्यवान थी। आग मालूम नही, इस घर के भाग्य मे क्या बदा है ? मा तो अपनी अच्छी निभाकर चली गई। यह सोचकर वह अपनी माँ के बारे मे मन को तसल्ली दे लेती। क्या सुब्बक्का यह नही जानती कि शाता की शादी के लिए पसा चाहिए। पर उस ओर उसके पति का ध्यान नही था। अब पैसे के लिए उसके ससुर को ही हाथ पर मारने होंगे। इस कारण वह दुखी होती। पति को उसन कभी गलत नही समझा था। पति की योग्यता उससे छिपी न थी। एक बार पहले उसने उस चमारिन के लिए कुछ बना कर दिया था। तब वह एकदम मूरख थी। अब उसे अक्ल आ गई थी। शाता की शादी की बात उठत ही सुब्बक्का को वह बात याद आती। उसे तो अब अक्ल आ गई पर उसका पति ता अब भी पहले जैसा ही है। शादी के कुछ ही दिन बाद सुब्बक्का सब समझने लगी थी। माँ की आकाक्षा पूरी करन के विचार

मे ही उसन पति के सामने एकात म शाता की शादी की बात उठाई।

वे बचपन से ही साथ साथ बडे हुए थे फिर भी पति पत्नी म विशेष घनिष्ठता नही थी। जब से गुडण्णा जरा घूमन घामने लगा, तब स वह सुब्बक्का के साथ जरा तिरस्कार से व्यवहार करता था। साथ ही सरस्वती बेटी सुब्बक्का को सदा यही जताती थी कि आज नही तो कल उसे गुडण्णा से ही शादी करनी है। इसलिए सुब्बक्का जब से सयानी होने लगी तब से गुडण्णा का भय भक्ति और आदर से देखा करती। धीरे धीरे गुडण्णा मे भी पुरुष की अधिकार-प्रवृत्ति का विकास होने लगा। सबसे पहल गर्मी क मामले मे, अनजाने मे सुब्बक्का ने उसकी सहायता की थी। विवाह के बाद सुब्बक्का की सब समझ म आ गया। यह बात जान कर गुडण्णा सदा खिचा खिचा ही रहता था। सुब्बक्का के साथ बहुत कम बाला करता था। सदा क्वायद कराने वाले सनिक अधिकारी के समान केवल एक-दो शब्दा म सुब्बक्का को सबोधन करता था। सुब्बक्का भी ज्यादा बात करन के झमेले म नही पडती थी। फिर भी औरत जात। घर म समान आयु वाला केवल वही एक था। कभी-कभी अनिवाय आवश्यकता होने पर गुडण्णा हाँ-हूँ म ही बात खत्म कर देता। पत्नी की बात पति सुनता ही है, लाग यह समझें। इस अभिमान रक्षा के लिए बोलना पडता था। जो भी हा अपने रिश्ते की हैसियत स वह शाता से बडी भी है। इसलिए पति से बात करनी है। सारा साहस बटोरकर उसन एक दिन बात की।

अब शाता बहिन की शादी ही एक रह गई," जरा घुमाकर उसके विषय को शुरू किया।

'ऊँ।

'आपन उस बारे म कुछ सोचा है?'

'औं हूँ।'

'अब पिताजी ही कितने दिना तक सारी जिम्मेदारी उठात रहग।"

तुम्हे नीद नही आ रही है क्या?' कहत हुए गुडण्णा न उसकी ओर पीठ घुमा ली।

मैंन शाता बहिन की शादी के बारे म कहा।'

सुन लिया। चुपचाप पडी नही रह सकती?"

'घर की तरफ मन हो, तब न कोई इनसे बात करे।' सुब्बक्का न

विवाद भरे स्वर से कहा ।

गुडण्णा की समझ म बात आ गई । वह समझता था कि आग किस विषय के बारे म बात उठेगी । इन कमबख्त औरतो के दिमाग म और कोई दूसरी बात आती ही नही । पता नही कब की बात है और उसी का पकडे बठी है ! धत् ! ' कहकर गुडण्णा ने शरीर पर चादर जोर स खेंच ली ।

मैं जो कह रही हूँ वह आपके ध्यान म आया ?" सुब्बक्का न खीजकर पूछा ।

"सारा दिन काम किया । जरा आराम से साना चाहूँ ता यह बदकिस्मती ! कहकर वह बिस्तर पर बठ गया ।

"और क्या, कुछ-न-कुछ बहाना लकर बाहर जाकर साना है "

'तड की आवाज कमरे म प्रतिध्वनित हो उठी । रात के शात वातावरण मे वह दस गुनी ज्यादा सुनाई दी । उस आवाज के साथ सुब्बक्का की आवाज बद हो गई । कमरे म मद प्रकाश होन पर भी गुडण्णा का निशाना ऐसा लगा मानो जन्मो से उसका अभ्यास हो । सुब्बक्का के बाये गाल पर पूरे हाथ का थप्पड पडा था । एक क्षण को दोना समझ न पाय कि क्या हो गया । वह मार सुब्बक्का के लिए कल्पनातीत थी । साधारण रूप से गुडण्णा मारता न था । यही नही, पत्नी को मार सकने लायक घनिष्ठता भी गुडण्णा न सुब्बक्का स नही रख रखी थी । इसक अलावा उसकी बात ऐसी थी कि कभी उस स्वप्न म भी सदह न था कि इस बात पर उस मार पड सकती है । उसकी आखो क सामन तार नाचन लग । वह एकदम दिग्मूढ हाकर बुत सी बठी रह गई । यह देखकर गुडण्णा की अवस्था ही कुछ और हा गई । उसकी समझ मे नही आया कि उसने क्या कर डाला ! थप्पड की आवाज सुनन क बाद गुडण्णा को हाश आया । चाट से हाथ झनझना रहा था । अब उसकी समझ म आया । गलती पत्नी की थी । निम्सदह उसी की । जिस बात से वह बचना चाहता था वही बात उसन शुरू की । उसको सदह था कि चे नी और उसके सबध भी पत्नी को मालूम हा गये हाग । पर उसन यह नही साचा था कि पत्नी इस प्रकार बाता-बाता मे उसका अपमान करेगी । इसलिए गुडण्णा को बेहद गुस्सा आया । बिना कुछ साचे ही मार दिया ।

शाता का विवाह ! सुब्बक्का को शम-सी महसूस हुई । विवाह करके

वह कौन सा सुख पा रही है। यह क्या ? कहते हुए उसने अपने गाल पर धीरे से हाथ फेरा।

गुडण्णा को भी शर्म महसूस हुई—उसे लगा कि पत्नी पर हाथ उठाना गलत था। अब उठकर चला जाना मूर्खता है। शान्ता के विवाह के बारे में बात करने में भी शर्म आ रही थी। बिना कुछ किये बैठ जाय तो कठोरता होगी। क्या किया जाय ? उस अपमान का ? परिस्थिति को कैसे सुधारे ? उसने सोचा सुब्बी को थोड़ा बहुत प्रसन्न तो करना चाहिए। धुंधले-से प्रकाश में पत्नी की ओर देखा। बेचारी ! बायाँ हाथ अपने गाल पर फेरते हुए डर और आंसुओं के प्रवाह को रोकती हुई पास ही बैठे पति की ओर देखती हुई मुँह सीधा किये लेटी थी। गुडण्णा को उस धुंधले प्रकाश में मुंह छिपा लेने की इच्छा हुई। उसने दोनों हाथ ऐसे उठाये मानो क्षमा मांगने जा रहा हो पर उसने दोनों हाथों में पत्नी के गाल थाम लिये। सुब्बक्का ने आँखें मूंद लीं। आँखें मूंदते ही उसके मन में एक बात कौंधी, 'पति नहीं तो, बेटा—ये ही स्त्री के आधार होते हैं।' उसने मन ही मन प्रार्थना की, हे भगवान एक बेटा ही दे दो ! स्त्री का जीवन कितना पराधीन होता है ! यह सोचते सोचते उसका गला भर आया। एकमात्र आधार कहीं छूट न जाय। इस डर से उसने पति को ज़ोर से जकड़ लिया। गुडण्णा और भी शरमाकर मुँह फेरकर चादर तानकर लेट गया। सुबह जब आंख खुली तो सुब्बक्का ने देखा कि गुडण्णा का मुंह उसी की ओर था। वह प्रसन्न मुद्रा से धीरे से अपने कंधे पर रखे पति का हाथ हटाकर उठकर चली गई।

सुख दुख संदेह-समाधान इस प्रकार के परस्पर विरोधी अनेक अनुभवों के बीच सुब्बक्का का मन झूल रहा था। तभी लगा कि वह हंसी-खुशी का समय है। क्या न हो ? शान्ता का विवाह निश्चित हो चुका है। अपने पूरे दिन शुरू होने से पहले ही मुहूर्त भी निकल आया है। काम तो दोनों ही अच्छे हैं। घर में विवाह और उत्सवों के अवसर आ रहे हैं। वह भी उसकी ज़िम्मेदारी में। शान्ता का विवाह उसके लिए गर्व की बात थी। इस बात में सुब्बक्का को संदेह ही न था, बल्कि उसको पूरा भरोसा था कि उसे पहली बार लड़का ही होगा। भगवान के ढंग ही ऐसे होते हैं। जब

देने को आता है तब एक के बाद दूसरा अच्छा ही होता है।

साथ ही वह बडबडा उठती, 'पता नही क्या अच्छा है और क्या बुरा। और लबी सास छोडती।

कभी कभी सुब्बक्का की समझ मे न आता। उसे यह सदेह होता कि क्या शाता का विवाह और पुत्र का जन्म अच्छाई के लिए है?

विवाह म क्या अच्छाई है? सुब्बक्का यह अच्छी तरह जानती थी कि इस विवाह के लिए ससुर ने कस कज लिया। उसे ऐसी कोई हठ नही थी कि कज लेना ही नही चाहिए। खेती बाडी करन वाला के पास शादी-ब्याह, तीज त्यौहार के लिए हाथ म नगद पसे नही होते। राशन पानी या गाय गोरू बेचकर या गिरवी रखकर कर्जा लेना ही पडता है। पर अगले वष उसे चुका दिया जाता है लेकिन ससुर का इस समय लिया कजा ऐसा न था। यह कज तो जेब म हुए छेद जैसा था। पर केवल इससे सुब्बक्का डरन वाली न थी। पति जवान है, आज नही तो कल मेहनत करके उसे चुका सकता है, यदि यह भरोसा सुब्बक्का को होता तो वह सुख से गहस्थी चलाती। पर गुडण्णा को सब जानते हैं। यह जाहिर था कि उसकी इल्लता के कारण जायदाद घटती जा रही है। गुडण्णा मे न कमाने की योग्यता थी और न पैसा बचान का स्वभाव। सुब्बक्का को यही दुख था कि उसके पति के कारण ही घर इस दुरवस्था को पहुँच चुका है। ऐसी परिस्थिति मे शादी करते समय मन मे शाति कसे हो सकती है? सुब्बक्का इसी कारण लबी-लबी सासे छोडा करती। वह कभी सब चिताएँ छोडकर मुस्करा भी पडती। उसे इस बात का भी अभिमान था कि बेटे का जन्म ऐसे मौके पर होगा। 'कही इस घर का उद्धार बेटे से तो नही होने वाला है?' एम विचार उठने पर वह अभिमान और सतोप स आखें मूद लेती।

रायसाहब चालीस के ही थ। पर अभी से बुढापे की छाया ने बुरी तरह घेर लिया है। शुरू से ही वे गाव के लिए बुजुग थ। अब तो स्वभाव म भी चिडचिडापन आ गया। कोई उनसे बात करने का साहस नही करता है। उन्ह किसी की सगति की विशेष इच्छा नही है, वे अपने आप से बात करत रहत है। कभी-कभी दोनो हाथो की उँगलियो से कुछ गिनते रहत हैं सपत्ति को गलत और बेटे को परिवार चलाने मे असमथ देखकर स-

कर लेने की शक्ति रायसाहब म अब नहीं रही। सात आठ मास पूव जब घर म पोते का जन्म हुआ था तब उनम जरा सा उत्साह दिखाई दिया था। पर वह भी ज्यादा टिका नहीं। एक नई मुसीबत रायसाहब का इतजार कर रही थी। रायसाहब समझे रहे थे कि बेटी का ब्याह कर क निश्चित हो गये। पर कुछ ही महीना बाद बेटी विधवा हो गई। जो उनक लिए एक बहुत बडा आघात सिद्ध हुआ। व बेटी पर ऐसे भडक उठत मानो उसने यह मुसीबत जान-बूझकर उनके गले डाल दी हो। उसे व सह न पाते। उसे घर म लाकर रख लिया। केवल सोलह साल की लडकी। उसको वैधव्य का बाना पहनाकर विकृत कसे किया जाय? बाप का मन तयार न होता। पर धम का डर भी था। इस प्रकार व सरौत म फँसी कडी सुपारी की भाँति कुछ भी निणय नही कर पा रहे थे। व मन ही मन दुखी होते और कलपत।

रायसाहब ने सोचा, यह पूवज म का पाप है, या जमाना ही उलटा आ गया है। एक दिन शाम को उन्होंने अपन आपसे कहा, जमाना नही बदला है। लगभग पतीस वप पूव उनक बचपन म जसा था सब कुछ वसा ही हो रहा है। फिर यह कैस कहें कि जमाना बदल गया?

रायसाहब ने एक बार फिर से सामने देखा, 'ए, सुअर कहीं का! यहाँ से जा, नही तो तरा सिर फोड दूगा।" कहते हुए रायसाहब गरज पडे। उनका सारा शरीर काँप रहा था। उनका पोता आठ मास का शिशु खडे होने का प्रयास कर रहा था और गिर रहा था। ज्यो ज्यो गिरता, त्यो-त्यो हँसता। सामन चार पाच साल का भरमा, कालिया का बेटा, परस्या का पोता खडा-खडा हँस रहा था। तालिया बजा रहा था और किलकारिया भर रहा था। यह देखकर रायसाहब का पोता (पता नहीं उसका नाम रघुनाथ क्या रखा गया) राम्या और भी जोर स उठने की कोशिश करता और धप स गिरता। पर ये चमार सुअर यहा क्या? रायसाहब ने तेरा सिर फोड दूगा कहकर दुबारा गुस्सा दिखाया और एक पत्थर उठाकर धमकाया। शिशु न घबराकर दादा की ओर देखा। भरमा न भी रायसाहब का देखा। उनके तवर को दखकर वह भाग निकला। रायसाहब अपन को राक न सके। हाथ से पत्थर फेंका पर मन न होने स वह निशाने तक भी न पहुँच पाया।

पत्थर फेंकने के साथ ही उनका गुस्सा भी उतर गया। उन्होंने कहा, 'छी ! यह मैं क्या कर रहा हूँ पागलों की तरह !' कितनी पुरानी बात हो गई ? वह भी बचपन में परस्या के साथ खेलते थे। अब रामण्णा भरमा के साथ खेल रहा है। रायसाहब को लगा कि जमाना नहीं बदला। उस समय उन्हें अपने पिता पर गुस्सा आया था, और आज वे बच्चों पर गुस्सा कर रहे हैं। बदले तो वे स्वयं हैं जमाना नहीं। उनको झुरझुरी सी आई मानो सर्दी लग गई हो। वे स्वयं बदल गये। क्या वे इतने बूढ़े हो गये हैं ? आयु से या अनुभव से ? उन्होंने अपने आपसे कहा, 'कुछ भी हो। मुझे पत्थर नहीं मारना चाहिए था।'

"उस लड़के को लगा तो नहीं ?' इस समय रायसाहब ने अपने आप से नहीं पूछा। सामने से आते शामण्णा को देखकर उसी से जोर से पूछा। कोई उत्तर न मिलने पर उन्होंने दुबारा पूछा, "लगा क्या, शामण्णा ?'

संदर्भ समझ में न आने पर शामण्णा ने पूछा, "क्या है रायसाहब ?"

"कुछ भी नहीं, जाने दो।"

"लगा कि आप मुझसे जैसे कुछ पूछ रहे थे।'

रायसाहब एक दो मिनट तक शामण्णा को घूरते रहे। पता नहीं क्या सूझा, जोर से हँस पड़े। बाद में हँसी रोककर बोले, 'बताता हूँ भई, क्योंकि वह बात तुम्हारे कान में पड़ेगी ही। यह संदेह करने की जरूरत नहीं कि बूढ़े ने छिपा रखी थी।"

"अरे ! अरे ! यह क्या रायसाहब ?"

'इधर देखो, शामण्णा, अभी एक बात हुई। खैर उसे जाने दो। तुम्हें हमारे गाँव में आए हुए कितने दिन हो गए ?'

यह प्रश्न क्यों किया जा रहा है—शामण्णा न समझा। फिर भी उसने जरा घबराकर कहा, 'दो साल हो गए।'

हँसते हँसते वे बोले, "तुम्हारा आंदोलन हार गया।" और स्वयं बैठते हुए उसे भी बैठने को कहा। दोनों के बैठ जाने के बाद उन्होंने भीतर की ओर मुँह करके आवाज़ दी। "ए कोई राम्या को भीतर ले जाओ। ऐसे आँगन में इस तरह मत छोड़ा करो।"

"क्या ? भरमा कहाँ चला गया ? मैंने उससे कहा था, बच्चे को देखते रहना।" कहते हुए सुब्बक्का आई। शामण्णा को देखते ही सिर पर पल्लू खेंच

कर बच्चे को उठाकर भीतर चली गई।

रायसाहब ने भीतर जाती बहू को चकित होकर देखा, बाद में पास बैठे शामण्णा को देखकर मुस्कराए। कुछ देर तक चुप रहने के बाद उन्होंने 'हूँ' कहकर एक लंबी साँस ली।

'हाँ तो मैं कह रहा था कि तुम्हारा आंदोलन विफल हो गया। पर इतने में ही जीत गया कहने का प्रसंग आ गया न रे भाई।"

"कौनसा आंदोलन, रायसाहब ?'

कौनसा माने क्या ? आंदोलन कोई दस-बीस हैं ?' तुम्हारे यहाँ आने से पहले भरमा यहाँ बच्चे को देखता खड़ा था। मैं एकदम अपने को रोक न पाया। एक पत्थर उठाया था, लेकिन हरामजादा भाग गया। न भागता तो उसे जरूर मारता। पता नहीं क्यों भरमा का आँगन तक आना मैं सह नहीं सका। इसीलिए कहा कि तुम्हारा आंदोलन हार गया।" रायसाहब सहसा रुक गए जैसे किसी विचार में खो गए हों।

शामण्णा की समझ में अब प्रसंग आ गया। वह हँस पड़ा और पूछा 'पर मुन्नक्का ने तो कहा ।"

इसीलिए तो कहा, तुम्हारा आंदोलन जीतने का प्रसंग आ गया। रायसाहब बीच में ही बोलते-बोलते हँस पड़े।

' रायसाहब हमारे आंदोलन के लिए हार नहीं जीत भी नहीं। सत्य सदा एक होता है। इसलिए हार-जीत का प्रश्न ही नहीं उठता है।'

पता नहीं भई। मैं बूढ़ा हो गया हूँ तुम लोग अभी लड़के हो। कैसी-कैसी बातें करते हो, मेरी कुछ समझ में नहीं आता। पर एक बात कहता हूँ शामण्णा, जब मैं छोटा था तब परय्या के साथ ठीक ऐसी ही एक घटना हुई थी। मेरे पिताजी को गुस्सा आ गया था। तब मेरी समझ में कुछ नहीं आया था। भरमा को मारते समय वही याद आने से एकदम हाथ जोर से उठा नहीं। लेकिन मेरे लिए यह तो संभव नहीं है कि तुम्हारे गांधी की तरह चमार टोले में जाकर उन्हें गले लगा लूँ। धर्म क्या इतना झूठा होता है ? देखो, वे गंदे रहते हैं, शराब बराब पीते हैं अपने आप जाकर उन्हें छूना तो मुझसे नहीं होगा ? हँसते क्यों हो ?'

रायसाहब बात यह है कि गांधी कहकर सारी जिम्मेदारी आप हम पर डाल रहे हैं। इसीलिए हँसी आई।"

"हाँ, और क्या ? 'वह एक बडा आदमी है, महात्मा है, कहकर तुम लोग घर-बार छोडकर उसके पीछे चलने मे लगे जो हो "

"हम क्या करते है ? आप लोग चुप हैं इसलिए हमारा यह सब खेल जारी है।"

"चुप है माने ? हम क्या करें शामण्णा ? तुमने आकर हमारे कालिया का दिमाग ही खराब कर दिया। फिर भी हम क्या कर सकते है, बताओ ?'

'रायसाहब इसी को तो कहते ह कि ज़माना बदल गया है।"

'ज़माना नही शामण्णा अब मेरे मन मे भी वही विचार उठा था। ज़माना नही बदला, लगता है हम ही बदल गए है।"

'आयु के अनुभव के कारण अगर हम कह कि हम बदल गए तो वह भी तो समय का ही प्रभाव है न ?"

रायसाहब बोले, 'जा ? यू कहते हो ? ठीक है। देखो, इस दृष्टि से देखें तो कहना पडेगा। वह कोई गलत नही। अब तुम ही दखो न, मैंन अपनी ही बात कही न ? अब घर मे ही देखो। यह बहू एसी है। तुमने ही सुना है न, उसने जा कहा। अब बेटी भी वैसी है। दस पद्रह साल पहले होता तो मैं इसे कैसे सहन करता। यही प्रश्न ।"

रायसाहब की बातें उसी प्रकार जारी रहती थी। कोई सुनन वाला हो या नही, पुरानी बातें याद आते ही रायसाहब का वाक्प्रवाह जारी हो जाता। इन दिनो बेटे, बहू और बेटी से आत्मीयता न रहीं। अब शामण्णा ही उनका एकमात्र आधार था। उनकी हर एक उद्विग्नता म तसल्ली देता। रायसाहब को स्वय इस बात पर आश्चय होता कि उन्ह शामण्णा पर इतना विश्वास क्यो है ? शामण्णा बिट्टूर का नही था और इससे पहले कभी आया भी न था। लगभग दो वष पूव वह एक दिन अकस्मात आया। उसका खादी का पहनावा और टोपी देखकर लोग डरे थे। वह आया और वही रह गया। बस ! वह सबसे अलग थलग रहता। धीरे धीरे उसने कुछ लोगो को चरखा चलाना सिखाया। उसके साथ-ही-साथ दो करघे भी लगाए। वह किसी से किसी प्रकार के उपकार की आशा नही करता था। सबसे मित्रतापूवक रहता था। धीरे धीरे उसे

गाँव के लोग पसद करने लगे। पर उसकी एक बात लोगो को पसद न थी। वह थी अछूतों से भेदभाव न रखना। पर वह यह ज़िद नही करता था कि उसी की बात ठीक है। वह किसी को उपदेश नही देता था। यही कारण है कि उसके आदोलन से किसी को कष्ट नही हुआ।

शाता के विवाह के समय रायसाहब का और उसका निकट सपर्क हुआ। विवाह के समय उसने हर प्रकार का काम करके उनकी सहायता की। कुछ लडको को ढग से समझाकर उनसे सब व्यवस्था कराई। उसकी रायसाहब से यही प्रार्थना थी कि लोगो को यदि भोजन के लिए आमत्रित किया जाय तो अछूतो को भी बुलाना चाहिए। चाहे उनको अलग बिठाया जाय परतु जो कुछ सब को परोसा जाय वही उन्हे भी परोसना चाहिए। रायसाहब ने उसकी बात मान ली थी।

विवाह के बाद शामण्णा के प्रति रायसाहब के मन मे और भी आदर बढ गया। कुछ ही महीनो मे शाता विधवा हो गई। तब रायसाहब का पागल होना भर ही बाकी रहा था। अवकाश मिलता तो वह बेटी को भी आत्महत्या करने की प्रेरणा दे सकते थे। तब शामण्णा ने उनकी आँखें खोली। स्त्री का स्त्रीत्व केवल पति के रहने से ही है यह धारणा गलत है। पति रहे या न रहे स्त्री के लिए प्रकृति मे मातृ हृदय से छुटकारा नही। पति के रहते स्वार्थ की साधना करते हुए मातृत्व का विकास होता है। पति न हो तो नि स्वार्थ मातृत्व सभव है। स्त्री समाज की माँ बन सकती है। इस प्रकार उसने कई ढग से उनको समझाया।

'शामण्णा तुम जो कह रहे हो उसका अर्थ स्वय तुम्हारी भी समझ मे आता है या नही? परतु यह एक अच्छी बात है कि तुम्हारे मन मे स्त्री के प्रति गौरव की भावना है। स्त्री को किसी के सरक्षण की आवश्यकता नही। तुम यह जो कहते हो उसमे कोई दोष नही। तुम्हारी बात खरी लगती है। यदि तुमसे परिचय न होता तो पता नही मैं अपने को कैसे सँभाल पाता?" बहुत दिनों के बाद रायसाहब ने यह विचार प्रकट किया था।

"वह प्रश्न कहाँ से उठा दस-पन्द्रह साल पहले ऐसा होना सभव ही न था। अब देखो, तुम एक भले आदमी हो। तुम्हारा सबसे परिचय है। तुमने हमारी शाता को भी पढ़ना-लिखना सिखाया। पर पुराने ज़माने मे

कोई भी यह न सोचता कि तुम अच्छे हो या बुरे। लेकिन तुम्हें पास फटकने न दिया जाता। अब तो कम से कम, जब तक मैं हूँ, ध्यान से रहो। समझे, हु-हु ।"

रायसाहब को केवल शामण्णा से ही तसल्ली मिलती।

# 7

यह कहा जा सकता है कि शामण्णा का बिटटूर आना बहुत लोगो के लिए एक सताप का विषय था। शामण्णा के लिए वह एक विशेष तसल्ली थी। पर उसके मन मे एक असतोष भी था। उस किसी भी काम से सतोष न हो पाता। उसकी ऐसी मानसिक स्थिति मे गाधी जी का असहयोग आदोलन शुरू हुआ। शामण्णा न भी उसमे भाग लिया परन्तु अपन स्वभाव के अनुसार किसी झगडे मे न पडते हुए वह अपने चरखे के काम मे लगा रहा। बाद मे गाधी जी को जेल मे डाल दिया गया तो चारो ओर आदोलन के ढीले पड जाने के लक्षण दिखाई पडने लगे। पर शामण्णा के कायक्रमो म बाल भर भी अतर न आया। शामण्णा के लिए महात्मा जी एक आदश थे। इस कारण, वे सामने रह या न रहें, उनके दिखाए सत्य माग पर चलने म उसे कोई बाधा न थी। शामण्णा उसी माग का अनुसरण करने के लिए बिटटूर आया था। उसका विचार था कि जहा कोई परिचित न हो वहाँ काम करन के लिए अधिक अवकाश रहता है। जब वह यहा आया तब लोगो को उस पर विश्वास न था। यही नही, अछूतो को छून के कारण लोग उसे सदेह की दृष्टि से देखते थे। उन्ही दिनो शाता का विवाह हुआ, जिस कारण उसका रायसाहब से परिचय हुआ। बाद मे शाता के विधवा हो जाने के कारण वह रायसाहब के और निकट आ गया। इस प्रकार उसका महत्त्व और भी बढ गया।

इन दिनो शामण्णा के लिए रायसाहब के घर के दरवाजे सदा खुले रहते। मजस आश्चय की बात गुडण्णा का व्यवहार था। घर मे सब के साथ अजीब ढग से व्यवहार करने वाला गुडण्णा शामण्णा के निकट होने

लगा। यह देखकर रायसाहब को भी आश्चर्य हुआ। आयु मे शामण्णा उससे केवल तीन-चार साल ही बडा होगा। रायसाहब को लगा कि इसी कारण उन दोनो म जल्दी मित्रता हो गई।

शामण्णा को इसमे कोई विशेष बात न लगी। गुडण्णा के स्वभाव से वह शुरू से ही अपरिचित था। इसलिए शामण्णा के मन मे उसके प्रति कोई पूर्वाग्रह न था। इसके अतिरिक्त एक दिन गुडण्णा न स्वय इसम परिचय किया। शामण्णा रायसाहब से बात करके बाहर निकलने को ही था कि गुडण्णा बाहर से आया और आकर "नमस्कार शामण्णा जी" कहा।

गुडण्णा के अनपेक्षित नमस्कार से चकित होकर शामण्णा ने उत्तर दिया 'हाँ, नमस्कार रायसाहब।"

'चल दिए ?

"जी हाँ, जा रहा हूँ। मुझे आए बहुत देर हो गई।'

गुडण्णा ने उन्हे अथ-भरी दृष्टि से देखा और कहा, 'ज्यादा देर हो गई हो तो जाइए।"

'एसी क्या दर हो गई। आपको कोई काम हा तो ।

'है भी और नही भी।'

शामण्णा ने दोस्ती के लहजे मे जरा हँसते हुए आगे कहा "मुझसे सकोच कसा रायसाहब ?'

"आपसे एक बात पूछना चाहता था।

'पूछिए न, रायसाहब।'

मुझे भी चरखा चलाना सिखा देंगे ?

"आँ ? पर यह क्या ? आपको क्या जरूरत पेश आ गई ?'

'मैं भी खद्दर पहनना चाहता हूँ।

इससे तो हमे बडा लाभ होगा" कहकर शामण्णा हँसने लगा और बाद म वह जोर देकर बोला 'चरखा चलाने की जरूरत नही है। खादी का कपडा खरीदना मुख्य बात है।

'ठीक है, आप जसा कहग मैं वसा ही करने को तैयार हूँ।'

तो देखिए रायसाहब हम जो कातते हैं उस आप खरीद लें तो बहुत है। आपको भी यही स कपडा मिल जाएगा।'

'क्यो, कातने वाले बहुत है क्या, जो मुझे मना कर रहे हैं ?'

"बहुत लोग तो नही हैं। हमी तीन चार है। पर खरीदने वाले हो तो हमारा एक काम होगा। इससे जरूरतमंदो का पेट भरेगा।"

गुडण्णा एकदम हँस पडा।

वह हँसी बनावटी थी, यह जानते हुए भी शामण्णा ने सरल मन से पूछा, 'क्यो रायसाहब ? कोई गलती हो गई ?"

"गलती क्या ? ह-ह ! पर, आप बडे चतुर है। आ ? ह ह । जरूरतमदो का पेट भरना ! मैं छुआछूत मानने वाला तो हूँ नही। मुझसे क्यो यू घुमा फिरा कर बातें करते हैं ? आं ?"

"नही-नही। घुमा फिराकर क्या मतलब ?"

'देखिए शामण्णा जी, आप यह चाहते है कि मैं उन अछूतो से सूत खरीदू ।"

'छि ! छि ! मेरा ऐसा कोई विचार नही है। मैं जो कातता हूँ, उसी सूत को आप ले लीजिए। दूसरो से खरीदकर मैं और क्यों ।"

"ऐसी कोई बात नही। मै ही खरीद लेता हूँ। वह कालिया उसका बाप, कालिया की बीवी—उनके बारे मे शायद आप जानते नहीं। वे तो मेरे अपने घर के हैं। वह बात जाने दीजिए। फिलहाल एक टोपी को छोडकर बाकी सब खद्दर ही पहनूगा। ठीक है न ?"

गुडण्णा अपने प्रश्न के उत्तर की प्रतीक्षा मे वहाँ खडा नही रहा। वह हँसता हुआ चला गया। शामण्णा को सब एक स्वप्न सा लगा होगा। अपना सिर झटकता हुआ वह वहाँ से चल पडा।

गुडण्णा को ऐसा लगा मानो उसने एक सुदर सा स्वप्न देखा हो। शामण्णा के साथ बातचीत करते समय उसे एकदम एक विचार सूझा था। इसलिए वह सुधबुध भूल गया। इतने अचानक सब सयोग कैसे जुड आये ? जब उसने होलेयो का कातना कहा तो बुद्धू शामण्णा को कोई सदेह तक नही हुआ। उसके 'वे सब मेरे घर के' कहने पर भी वह इस बात का आशय समझ नही पाया। वह आवेश मे आकर मुट्ठी खोलते, बद करते हुए कहने लगा, 'अब उसके ऊपर के शिकंजे को ढीला नहीं करना है। वह कालिया समझ रहा होगा कि उसकी गैरहाजरी मे मैंने घोंस से उसकी बीवी को अपने वस मे कर लिया था। अच्छा वह अपने को

मेरी बराबरी का समझने लगा है। उसे कितना घमड है? अच्छी बात, अब उसके सामने ही उसकी बीवी को उससे अलग न किया तो ।' गुडण्णा ने मूछो पर ताव देते हुए अपने मन मे कहा।

कुछ बातो मे गुडण्णा बहुत तेज था। दिमाग मे बात आते ही काम मे जुट जाता था। इन बातो म गगी का सबध प्रमुख था। इसलिए अगले दो ही दिनो मे किसी बहाने से गगी से मिला। कालिया का जीवन क्रम ही बदल गया था जिससे उसका रास्ता सुगम हो गया। वह झोपडी के पास ऐसे पहुँचा मानो किसी और काम से जा रहा हो। पिछवाडे गगी झोपडी की छाया मे बठी थी। गुडण्णा ने एक नजर चरने वाले मवेशियो पर डाली और दूसरी उसके कातने के चरखे पर। कोई और वहाँ न होने से उसका मन खिल उठा। पहले गगी पर उसकी छाया पडी और बाद मे पाव की आहट सुनाई दी। तब गगी ने जरा कनखियो से उस ओर देखा। 'आह' कहा, फौरन सिर पर पल्ल खीचा और मुह घुमाकर बठ गई।

गुडण्णा एक मिनट खडा रहा। 'सौंदय का जाति स कोई सबध नही? अथवा सौदय को निहारने के लिए त मय होना आवश्यक है?' ऐसे कई विचार उसके दिमाग मे कौंध गये। पर उ ह प्रकट करने के लिए उसे शब्द नही मिले होगे। कुछ शब्द उसकी जबान तक आये पर ठीक उच्चारण न कर पाने वाले विद्यार्थी की भाति झेंपकर चुप खडा रहा। गगी का उसकी ओर ध्यान नही रहा। गुडण्णा के दिल की खुशी मुह पर चमक उठी।

वह हँसी। गगी को धूप सी लगी। फिर से उसने पल्लू नीचा कर लिया। हँसी का बाध टूटा। गुडण्णा खासा।

उसकी किसी भी हरकत का गगी की ओर से जवाब न मिलने पर उसन स्वय बात शुरू की।

पसे तो देन ही है, जरा माल तो देख लें कसा है?'

गगी की नजर बिजली के समान उसकी ओर कौंध गई। "बाप रे! उसका गुस्सा कितना मोहक-आकषक है!' पर गगी बोली नही। उसकी ओर जरा और पीठ करके बठ गई।

वह दाशनिक के-स स्वर म बोला "अगर कोई माल देखना चाहे तो दखन भी नहीं दोगी? तब तो नगद पसे देकर जसा भी माल मिल जाय वह लेना पडेगा।'

तब गगी बोली, "गाव के मालिक क्या हो, जो भी मुँह मे आये कहते रहोगे क्या ?" गुडण्णा के शरारती स्वभाव को मौका मिला।

'व्यापार कैसे चल ? माल कौन सा ह ? कैसा है ? उसके लिए जो पैसे दिये जाते हैं वह ज्यादा है, या कम है, यह सब देखे बिना ।"

"हम गरीब हैं तो क्या इसके यह माने है कि हम पसे देकर खरीदने की चीज हो गये ?"

"क्या गरीब अपना माल नही बेचते ?"

"मै इतनी गरीब नही हुई हूँ कि अपन आपको बेचन के लिए तैयार हो जाऊ।"

गुडण्णा ने हैरान होकर पूछा, "आ ? क्या कहा ? तुम्हारे बारे म कौन ऐसा कहता है ? मैंने तो तुम्हारे सूत के बारे मे कहा था। तुम्हारे शामण्णा ने कहा था कि सूत खरीदने से तुम जैसी गरीब की मदद होगी। इसीलिए ऐसा कहा। पता नही क्यो मरा मन हो आया। सोचा पैसे देकर तुम्हारा सारा सूत खरीद लू।' यह कहकर वह तेजी से वहा से चला गया।

गगी घबराई। क्या हो गया, उसने ऐसा क्यो कर दिया ? क्या गुडण्णा क अकस्मात आने से ऐसा हो गया ? उसे यह भरोसा था कि आज नही तो कल गुडण्णा अवश्य आएगा। गगी की दृष्टि म गुडण्णा के विवाह का कोई महत्त्व न था।

वह हँसकर अपन आप से कहती, 'मुझे मालिक का स्वभाव मालूम नही है क्या ?' बेचैनी के कारण वह जरा अधीर हुई थी। फिर भी भरोसा था कि व अवश्य आएँगे। पर उसने ऐसा क्यो किया ? 'उन्होने तो सूत खरीदने का नाटक किया था न ? मुझे मालूम है, उन्होंने ऐसा क्यो किया। अर शामण्णा का नाम लेकर मालिक यहा तक आय थे।' गगी को गुडण्णा क स्वभाव के बारे मे सोचकर बडी हँसी आई। शामण्णा का विचार आते ही वह सोचने लगी कि उन्होने उसके लिए कितनी सुविधा कर रखी है, उनकी बात से गुडण्णा इधर आया और कालिया भी इससे ही दूर हुआ है। जो भी हो, यही कहना चाहिए कि शामण्णा उसक लिए भगवान के समान हैं।

शामण्णा के आने के बाद से कालिया के जीवन का ढर्रा ही बदल

गया। गुडण्णा के विवाह के दिन के बाद से कालिया ने बिट्टूर छोड़ने का निश्चय किया था। परन्तु किसी न किसी कारण निकल ही न पाया। उसे यह आशा थी कि गगी से उसके एक लडका होगा। चाहे पत्नी हो या बेटी स्त्री विश्वास के अयोग्य होती है। इस दृढ विश्वास के कारण कालिया को बेटे की आस लगी थी। गगी के शरीर की भूख तो उसमे थी, पर धीरे धीरे एक बेटे की इच्छा उसके मन मे जोर पकडती जा रही थी। प्रसूति के दिन पास आते आते उसे एक विचार सताने लगा था। उसका बेटा भी उसी की तरह समाज मे कोई जगह न पा सकेगा। दूसरो की सेवा मे उसका जीवन बीत जाएगा। वह भी अपना अधिकार और व्यक्तित्व न प्राप्त कर पाएगा। कालिया ने मन मे यह निश्चय किया कि उसका बेटा जन्म जन्मातर से चले आए जूठन पर जीने वाला जीवन नही बिताएगा।

बेटा पैदा हुआ। कालिया की खुशी का ठिकाना न रहा। बच्चा ज्यो ज्यो बढा वह उसे अपने साथ रखने लगा। 'मैं अपने अनुभव उसे बताऊँगा। वह मेरी तरह अपना जीवन नही काटेगा।' यह सोचकर वह बच्चे को अपने साथ ही साथ लेकर घूमा करता। गगी ठीक है। उसने उस एक बेटा दिया इससे अधिक उसके प्रति उसकी आसक्ति न थी। एक ओर बेटा और दूसरी ओर बेटे का भविष्य, यही दो विचार उसके मन मे चक्कर काटा करते।

उन्ही दिनो शामण्णा बिट्टूर आया। गाँव के लिए अपरिचित होने के कारण दूसरो की तरह कालिया ने भी उस पर विश्वास न किया। धीरे-धीरे शामण्णा के चरखा और अस्पृश्यता निवारण के कार्यों से वह उसकी ओर आकर्षित हुआ। परन्तु बहुत दिन तक कालिया के मन मे शामण्णा के प्रति अविश्वास ही था। उसने सोचा इसमे भी कोई रहस्य होगा। गुडण्णा जैसे आदमी ने ही गगी जैसी अछूत को खराब किया। यह बात वह भूल नही पाता था। ऐसे कुछ कारणो से शामण्णा के बारे मे भी उसे सदेह ही था कि हो सकता है ऐसी कोई बात हो। कालिया का विचार था कि बुद्धिमान और पैसेवाले जब आगे आकर खुद सहायता करते हैं तो उसमे उनका सूत भर फायदा तो अवश्य रहता है।

शामण्णा के बारे मे कालिया का सदेह गलत साबित हुआ। उसे कही भी शामण्णा की ईमानदारी मे कोई कमी दिखाई न दी। तब उसने यह

सोचा कि समाज में ऐसे पागल भी एक-दो होते हैं ही ।

कालिया को बाद में पता चला कि ऐसे पागल पैदा करने वाला एक जादूगर भी हमारे बीच में है । यह बात भी उसे शामण्णा से ही मालूम हुई । धीरे धीरे कालिया के मन में शामण्णा के प्रति विश्वास पैदा हो गया और वह उसका दास हो गया । वह अपने बेटे को लेकर उसी की सगत म ज्यादा स ज्यादा समय बिताने लगा । एक दिन शामण्णा ने उससे कहा

'दखो कालप्पा, उनके पास तुम्हारे भरमा जैसे कितने ही लडके हैं । बच्चो मे व बहुत प्यार करते है ।"

'किसके बारे म कह रहे हैं ? वही वह मात्मा क्या नाम बताया था ?'

"शामण्णा ने हँसकर याद दिलाया, "गाधी जी ।"

'हाँ उसी मात्मा गाधीजी की बात कह रहे हैं आप । भरमा जस लडके स क्या तात्पय है, क्या व हमारी जाति के हैं ?"

'इस जाति के सिवा तुम और कुछ सोचते नही ?'

"पदा जो इस जाति मे हुए हैं ।"

'इस जाति म पैदा होने का क्या मतलब ? पूछो अपने बेटे से । वह जात-पाँत का अथ अच्छी तरह समझता है । पैदा होते समय कोई जाति नही रहती, कालप्पा ।"

कालिया हँसते हुए ही बोला, 'ये सब बातें करने के लिए अच्छी रहती है । पदा होने के समय की बात तो रहने ही दीजिए । मरन तक भी, दूसरी जाति के लोग हम दूर ही रखते कि नही ?"

'हाँ यू कहो कालप्पा । दूसरे लोग ऐसा करते हैं । इसीलिए तो गाधीजी कहते हैं कि गलती दूसरो की है । आप लोगो को इस तरह रखना हमारी गलती है ।'

कालिया ने हैरान होकर पूछा, 'तो व इसे इतनी बडी गलती मानते हैं ?'

'हाँ, गलत है । तुम्हारे कहने के अनुसार वह बहुत गलत है ।'

उसने 'हूँ' कहते हुए लम्बी साँस ली । "यह मुझे मालूम न था जी," कहते हुए बडबडाया । उसके मन मे एक विचार उठा । उसन कहा ।

'शामण्णा जी, आपन 'हमारी गलती' कहा न ? अगर ऐसे सोचें तो

बात ठीक ही लगती है। गलती हमारी भी है। क्योंकि ताली दोनो हाथ से ही बजती है जी।"

"देखो कालप्पा, जब हमे पता है कि हम गलती कर रहे हैं तो उसे ठीक करने की बजाय दूसरो पर वह गलती थोपने का हक हम नही होता। इस प्रकार दोषारोपण करने से स्थिति सुधरती भी नही।"

"यह बात नही, शामण्णा जी। आपने अपने लोगो की बात कही, मैं अपनो की बात कहता हूँ। हम गदे रहते हैं, गालियाँ बकते हैं। पी पाकर झगडते हैं। हमारे आदमी खराब होते है और कुछ औरतें भी। दोनो म ही बुरी आदतें हैं। यह सब हमारी ही गलती है। इसलिए कहा, गोबर-गदगी छूना और यह तकरार करना कि हमे कोई गले नही लगाता है कि नही? शामण्णा जी! मेरा कहना है कि हमें अपनी गलती मान लेनी चाहिए।"

शामण्णा ने हँसकर पूछा, "मेरे सामने मानने की जरूरत है क्या?"

कालिया ने एक मिनट शामण्णा की ओर देखा। एकदम चुटकी बजा-कर कहा, 'मैं आपकी बात समझ गया।'

शामण्णा को अचरज हुआ। उसने सोचा कि उसने तो ऐसी कोई बात कही नही थी। पर कालप्पा ने क्या समझा होगा।

उसने अपराधी के से स्वर मे पूछा, "कालप्पा, आपने क्या समझा?"

"आपने कहा अपनी गलती को आपके सामने मान लेना मेरा पागल-पन है। यह बात सही है। मुझे यह सूझा ही नही था।"

शामण्णा ने हैरान होकर पूछा, 'क्या? तुम क्या कह रहे हो?'

'कहना क्या जी? जैसे आप लोग अपनी गलती अपने लोगो के सामने बताते है उसी तरह हमे भी अपनी गलती अपने लोगो के सामने बतानी चाहिए। तभी उस गलती को मानना सार्थक होगा। यही बात है न?"

शामण्णा बोला नही। यह सोचकर उसने सिर हिला दिया कि बुद्धि मानो किसी जाति की बपौती नही है।

शामण्णा का सिर हिलाना देखकर कालिया को तसल्ली हुई।

# 8

रायसाहब का विचार था, जो कुछ आखो के सामने घटता है उसे चुप-चाप बठे देखते रहना ही यदि बुढापे की निशानी है तो वे भी बूढे हो गये हैं। वे कई बार सोचत, 'बदला मै हूँ, जमाना नही।' पर साथ ही व यह भी सोचते कि उनका बदलना सभव नहीं। अब क्या हुआ ? क्या मै उसे चुप बठकर देखता रहूँगा ? यह बदलना नही, मतिभ्रम हागा या बुढापा। यह सब वे अपनी बेटी के बारे म सोचते हुए बडबडाया करते।

बेटी को विधवा हुए काफी दिन बीत गये। लेकिन उसे उन्हान वसे ही रख रखा है। आजकल वह पढने लिखन की सोच रही है। यह कसी बात ? अपने खानदान मे यह सब होने देन का मतलब ? पर क्या उन्हान ही इस बात को अन्त मे नही मान लिया था कि कुछ भी कर ले, पर लडकी चुप-चाप घर म रह। हताश होकर उन्हाने पढाई के लिए 'हा' कर दी थी।

शामण्णा ने कहा था, "मेरी राय म यह अच्छी बात है।"

रायसाहब ने चकित हाकर कहा था।

"अरे शामण्णा, लडकी बडी हा गई, यह साचकर शादी से पहल पढाई छुडवा दी थी। अब क्या दुर्भाग्य से ऐसा हो जाने से उसकी उम्र कम हो गई ?"

"रायसाहब पढने लिखन के लिए उम्र का कोई सवाल नही।

'मतलब ? तो तुम्हारा कहना है कि पोता के साथ मैं भी पढन बठू ?"

"आप मेरी बात मानने वाले थाडे ही हैं। पर लोगो मे आपकी यह धारणा बैठ गई है कि पढाई लिखाई सिफ बच्चा का ही करनी चाहिए। पर मुझे ऐसा लगता है कि पहले बडो को ही पढना चाहिए। तभी जाकर बच्चा को लाभ होगा।' शामण्णा ने हँसकर कहा।

"बठे-बठे मजा लते हो शामण्णा।'

"मजे की बात नही, रायसाहब। अब आप ही दखिए न, आपन बचपन म कन्नड नहीं सीखी। यहाँ तक कि अक्षराभ्यास भी नहीं किया ।

हमारे जमाने मे न स्कूल थे और न कन्नड ही थी।"

"यही तो कह रहा था, आपने पढाई नही की और आगे स्कूल भी नही खुला। स्कूल न होने से आपके बच्चे भी नही पढ सके।"

गुडण्णा को पढाने के लिए एक अध्यापक को लाकर रखा था, पर उससे क्या लाभ ?' रायसाहब ने यह बात बडे दर्द भरे दिल से कही।

स्कूल होता तो दूसरे बच्चे भी पढते। उनके साथ ये भी पढ सकते थे।

'जाने दो, शामण्णा। मेरा तो इकलौता बेटा है। उसे क्या नौकरी करके घर का नाम बिगाडना है। पर शाता को पढाने की क्या जरूरत है? रायसाहब ने इस बात को ऐसे कहा मानो वह प्रश्न अपने आपसे पूछ रहे हैं।

शामण्णा कुछ देर तक चुप रहा। वह समझ रहा था कि रायसाहब के मन मे सघर्ष हो रहा है। यदि वह कोई बात कहता तो रायसाहब उसे मान लेते पर वह बोला नही। यह सोचकर कि रायसाहब अपने मन की बात आप ही कहें वह उनकी ओर देखता रहा। कुछ क्षण बाद रायसाहब ने शामण्णा को ऐसे देखा मानो वे नीद से जागे हो। उनके मन मे जो बातें उठी थी, उन्होने उन्ही को व्यक्त किया।

फिर भी वह बच्ची है। उसे सारी जिंदगी बितानी है। यह बात भी सच है कि कोई-न-कोई अच्छा सा धधा होना चाहिए।' यह कहने के बाद वे जरा रुके और फिर शामण्णा को समझाने के ढग से बोले, "पुराने जमाने मे कथा-पुराण सुनना ऐसी स्थिति मे कितना उपयोगी होता था, शामण्णा, आँ ?'

यह महसूस करके कि रायसाहब ने अभी बात खत्म नही की। शामण्णा मुस्कराने लगा।

'तुम्हारा क्या ख्याल है ? है कि नही ?'

शामण्णा का मुह मुस्कराहट से और ज्यादा खिल उठा।

रायसाहब के मुह पर गभीरता आ गई। वे आगे बोले

'लेकिन शामण्णा तुम्हारे कहने के मुताबिक शाता अभी छोटी है, कथा-पुराण आज के बच्चो को पसन्द नही आते ?'

लडकी कुछ भी करे पर घर मे चुपचाप बनी रहे। यही काफी है।'

यह कहने के बाद अंत मे उन्होंने आखे मूदकर दवा गटक जाने वाले बच्चे की तरह कहा, "मेरा कहना ठीक है न ? लडकी को किसी एक धधे मे लगा दे तो वह खुद ही उसमे रुचि लेने लगेगी।" यह बात जरा दृढता से कहकर उन्होंने मुँह मोडकर हाथ झाडे जिसका मतलब था वह चचा वहीं निबटा देना चाहते हैं।

शामण्णा का पढाना और शाता का रोज पढना देखकर रायसाहब सोच म डूब जाते और कहते, "यह सब मतिभ्रम के लक्षण है ? जमाना ही ऐसा हो गया है ?"

लडकी घर मे चुपचाप रहे, यह कहना रायसाहब के लिए तो आसान था। पर शाता और शामण्णा को मिलने का अवकाश देकर यह सोचना कि वे दोनो चुपचाप रहे हास्यास्पद बात थी। शाता को पढने का उत्साह था, शामण्णा को पढाने का। परस्पर परिचय बढने के साथ साथ उत्साह भी बढता ही गया। उत्साह के साथ प्रगति का वेग भी अधिक हुआ। दोनो अपने आप चुप रहते तो उत्साह भी न होता और प्रगति भी न होती।

शाता पहले से पढना जानती थी। इसलिए शामण्णा का काम सरल हो गया था। शुरू शुरू मे उसने कुछ पुस्तकें पढाइ, बाद मे शाता स्वय पढने लगी। पढने के बाद क्या समझा और क्या नही समझा, यह चर्चा होती। पहले-पहल शाता चर्चा करने म शरमाती थी। शामण्णा को विषय मे मग्न देखकर उसकी झिझक खुलने लगी। परतु चचा क्या आगे सरलता से चली ? नही, निडर होकर शाता का चचा करने का ढग शामण्णा को हैरान कर देता। अब तक उससे पढने वाली अबोध बच्ची शाता, उसे अब एक प्रौढ युवती के समान दिखाई देने लगी। उसके व्यक्तित्व का बोध होने लगा। साथ ही साथ वह स्त्री है इस ओर भी शामण्णा का ध्यान गया।

कुछ दिन तक दोनो ने डरते डरते अपनी पढाई जारी रखी। उन्हे यह डर था कि एक का रहस्य दूसरे को मालूम हो रहा है। मन इच्छा होती कि मालूम हो जाना चाहिए। पर डर भी लगता। रूप स शाता ज्यादा डरती थी। उसके मन मे यह प्रश्न उठा

रुचि पढ़न की ओर थी या उनकी सगति मे ? पढाई अच्छी लगती है इस तसल्ली से वह शामण्णा की सगत चाहती थी। शामण्णा की भी यही बात थी। पढाना उसका कतव्य था, उस कतव्य को अपन बूते से भी बढकर निभा ले जाने का दढ निश्चय भी उसम था। परन्तु उम दढ निश्चय के पीछे उसके सान्निध्य की आशा हो सकती है—यह बात मन म आते ही उसे लज्जा का अनुभव होता।

बेल धरती पर बढती है। वढी बेल के पत्ते झडकर धरती म समा जाते है। धरती का सत्त्व बढ जाता। सत्त्व वाली धरती पर बल और अच्छी तरह से बढती है और ज्यादा पत्ते झडत हैं। धरती म समा जान से अधिक शक्ति उत्पन्न होती है। धरती और बेल का परस्पर पोषण कितने समय तक रहेगा ? कब प्रारभ हुआ ? कब समाप्त होगा ?

धरती, बेल बेल, धरती, धरती, बेल—यह सिलसिला अनत है।

पुरुष स्त्री, स्त्री, पुरुष, पुरुष स्त्री—यह सिलसिला भी अनत है। परस्पर पोषण सृष्टि की शक्ति है।

पोषण शोषण, शोषण पोषण—यह निसग के लिए अपन उद्देश्य प्राप्त करने का एक सोपान है।

पुरुष स्त्री, शामण्णा शाता ।

पुरुष स्त्री गुडण्णा सुब्बक्का ।

पुरुष स्त्री, कालिया गगी। ।

नाम अलग है खेल एक ही है, वश अलग अलग है, नाटक एक ही है। उसी नाटक को जान-अनजान शाता शामण्णा खेल रहे है।

धीरे धीरे दोनो को समझ मे आ गया कि परस्पर मिलने की इच्छा दोनो म है।

उसके साथ एक बात और भी सूझी। यौवन तो देह का सगम चाहता है पर वह असभव है।

काम अपनी मनमानी न कर सके यही पाठ सिखान के लिए तो शिव ने काम को जलाकर पार्वती से विवाह किया।

शामण्णा और शाता का डर दिना दिन बढता गया। भीतर के काम को जलाने से बाहर का शरीर भी तो जल सकता है न ? तो पदा हान से लाभ ? काम-भोग के लिए ही यदि देह हो तो काम के साथ देह को

जलाया जा सकता है।

अब उन दोनों को डर में ही एक प्रकार का सुख मिलने लगा। उस डर के कारण ही तो क्षणिक तप्ति का मार्ग छोड़ना पड़ा न?

काम को अनग झूठ कल्पना है। जिसने भी काम का जलाया व सब अनग हो गये। यह अनुभव शाता और शामण्णा को हुआ। शायद उन्होंने यह समझा होगा कि शरीर अपना नही है। क्रम से दोनों के स्वभाव मे एक तरह का परिवतन होने लगा। दोनो की वृत्ति मे भी निस्वार्थ दिखाइ दन लगा।

दोनो एक दूसरे के सामने बठकर चर्चा करते समय रायसाहब आ जाते और उनके मुख पर एक प्रकार का तेज देखकर लबी साँस लेत।

शामण्णा एक और सदभ मे भी योग्य शिक्षक सिद्ध हुआ। कालिया पर शामण्णा की शिक्षा का प्रभाव अच्छा ही रहा।

अपनी गलती को अपना के सामने स्वीकार करना चाहिए, तभी जाकर अपने को सुधारने का मौका मिलता है—इस विचार को काय रूप मे परिवर्तित करने मे कालिया न देर नही लगाई। वह विशेष रूप से अपने आस पास के गाव वालों से मिला। अब तक उसके मन म अपने लोगो के प्रति एक अभिमान, एक सहानुभूति थी। उसे यह शिकायत भी थी कि उसकी जाति के साथ दूसरा ने अन्याय किया है। अपने लोगो को जगाते समय उसने यह अनुभव किया कि खुद उसमे भी अनेक दोष है। उसने यह बेमन से स्वीकार किया। शुरू शुरू मे उसका उत्साह घटने लगा। शामण्णा को भी यह सदेह हुआ।

एक शाम शामण्णा ने उससे पूछा "क्या बात है कालप्पा, बहुत थके लग रहे हो?"

कालिया उनकी बात हँसी म उडाते हुए बोला, "भला मुझे क्या हुआ जो थक गया हूँ।"

जरा हठ के स्वर मे शामण्णा ने पूछा, 'तो मुह क्या उतरा है?'

कालिया शमाकर पर हँसते हुए बोला, 'जरा 'फजीहत हो गई है।'

क्या कहा?"

"मैं बहुत उछल-कूद कर रहा था अब जरा पर कट गए।"

शामण्णा सदभ नही जान पाए इसलिए उन्होंने पूछा, "तुम क्या कह

रहे हो ?"

'मैंने कहा था न अपनी गलती का अपने लोगों के सामने मान लेना चाहिए !"

'हाँ कहा था, फिर क्या हुआ ?'

लोगों से कहो तो कोई सुनने को तैयार नहीं है। सभी दुत्कारते हैं।"

शामण्णा मुस्कराते हुए बोले, "ठीक ही तो है। आईने के सामने खड़े होने पर अपनी कुरूपता दिखाई दे तो कौन खुश होगा ?"

लेकिन जब हम आईने के सामने खड़े होने को तैयार होते हैं तो फिर अपनी कुरूपता देखने को क्या तैयार नहीं होते ?'

मना कौन करता है ? आईने के सामने खड़े होते हैं, अपना मुंह भी देखते हैं, पर सबकी यही इच्छा होती है कि तब बगल में कोई न रहे।"

इस बात पर दोनों हँस पड़े। कुछ देर बाद शामण्णा ने पूछा, "पर तुम्हें हुआ क्या है ?"

क्या हुआ पूछने की अपेक्षा क्या नहीं हुआ पूछते तो ठीक रहता। तुम ऐसे कौन बड़े आदमी हो यह कहने वालों की पहले ही कमी न थी।" अब उसने मजाक में कहा "अब तक उपदेश देने वालों की क्या कमी थी जो तुमने भी देना शुरू कर दिया ? कुछ एक ने साफ कहा कि जिस जाति में पैदा हुए हो उसके विरोध में बोलकर पाप ही कमाओगे। पर देखिए शामण्णा जी मैंने सिर्फ यही कहा, 'हम अपने तौर पर सरल ढंग से रहना चाहिए।' तब उन्होंने हँसते हुए पूछा, अब कौनसा टेढ़ापन दिख रहा है तुम्हें बुद्धू !

'यह तुम्हारा सौभाग्य है कि वे अपने आप हँसकर तुम्हें छोड़ देते हैं।"

ऐसे सौभाग्य की किसे जरूरत है शामण्णा जी ? अगर वे लड़ने-झगड़ने और गाली-गलौज पर उतर आते तो भी कोई बात नहीं थी। मार का जवाब मार से गाली का जवाब गाली से देकर तसल्ली तो हो जाती। पर इस तरह की हँसी उड़ाएं तो ऐसा लगता है मानो पीठ के बीचों बीच खुजली हो रही हो। उसे सहना होगा या चार आदमियों के सामने ही खुजली मिटाने को दीवार से पीठ रगड़नी होगी।'

और एक बार जब वह शाम को पड़ोस के गाँव से लौट रहा था तब पीछे से आकर किसी ने उसे मारा भी।

परंतु कालिया का मन बड़ा दृढ़ था। उसे इसका अंदाजा था कि किसने पिटवाया होगा। कालिया को यह पक्का संदेह था कि किसी साहूकार ने यह सोचकर पिटवाया है कि वह उनके अछूतों का दिमाग बिगाड़ रहा है। पीटने वाला भी उसी के गाँव का है।

एक और अवसर पर कालिया ने दार्शनिक की तरह कहा था "बात यह है कि दुनिया में बदमाशों की संख्या बढ़ रही है।"

इस बात के पीछे एक गहरा दर्द छिपा था। उसे लोगों की और खासकर अपने लोगों की बकवास सुनकर सह जाने की आदत हो गई थी। पर इन दिनों एक नयी बात मालूम हुई। उसे देखकर लोग कानाफूसी करते थे। उससे यह साफ पता लगता था कि बात उसी के बारे में है। किन्तु उसके पास जाते ही वे चुप हो जाते थे या दांत निकालकर जो मुंह में आये बकते थे। धीरे-धीरे कालिया को विश्वास हो गया कि लोग उसी के बारे में बातें करते हैं।

बहुत दिन तक उसके कौतूहल की तृप्ति न हुई। पर एक दिन अचानक समझ में आ गया। वह दोपहर की धूप में एक पेड़ की छाया में पगड़ी का पल्लू मुंह पर डालकर लेटा था। दो आदमी वहीं आकर बैठ गये। कालिया मुंह उघाड़कर उनसे बात करना ही चाहता था कि उनके मुंह से अपना नाम सुनकर वह अपना विचार छोड़कर नींद का बहाना करके पड़ा रहा। दोनों आगंतुक जरा दूर उसकी ओर पीठ करके बैठ गये। उन्हें उसके पड़े रहने का ध्यान भी न था। आंखें मुंदी रहने के कारण उनकी सूरत भी न देख पाया।"

एक—"हमारे गांव भी तो वह आया था।"

दूसरा—"आया था भई शायद वह बड़ा आदमी बनना चाहता होगा।"

पहला तिरस्कार से बोला, 'कैसा बड़ा आदमी? यह कहावत है न हजार घोड़ों का सरदार पत्नी को ही ।"

दूसरे ने दबे स्वर से पूछा, "तो यह बात सच है?"

'कौनसी?'

साहूकार के बेटे ने उसकी औरत को रखैल रख रखा है।' उसने दबे स्वर में रहस्य बताया।

"यही तो वह रहा था, पागल है, एकदम पागल। बकता फिरता है। ऐसे रहना चाहिए वैसे रहना चाहिए। यह मूरख गाँव म बताता फिरता है पर घर की जोरू को काबू म नही रख सकता।"

'शायद उसे पता नहीं होगा।'

"अरे पता कसे नहीं होगा? ढोल बजाकर मुनादी करने के ढग से वह रडी पेट फुलाकर सारे गाँव भर मे घूमती रही।"

'क्या कालिया को इतना भी हक नही?"

"अरे उसे हक क्या? जोरू का मतलब जमीन मकान है क्या? परदेस मे रहकर हक जमाने को ।'

'हाँ?'

'और क्या? इसी से तो कहता हूँ उसे पता है। लौटने के बाद कुछ खिला पिलाकर गिरा दिया।"

धत तेरी की! तो यह कहानी छोटी-मोटी नही।"

इसीलिए तो वह रहा था। उसकी जोरू उसकी बात नही सुनती। और वह बेटा बाहर के लोगो पर उपदेश झाडता है।"

दोना ठहाका मारकर हँस पडे। थोडी देर मे तबाकू के धुएँ की खुशबू आई। बाद मे चुप्पी छा गई।

कालिया अपने को रोक न सका। पर वह उठ नही सकता था। मुह कसे दिखाता?

बाद मे तबाकू का धुआ खत्म हो गया और सन्नाटा छा गया। कालिया ने धीरे से मुह उघाडा, वहाँ कोई नहीं था। 'हरामजादे कही के! ऐसी बातें कर रहे थ जैसे इनकी जोरुएँ सती सावित्री हो। क्या किसी से गलती नही होती?' यही बडबडाता वह सारे दिन जगल म भटकता फिरा और अँधेरे के बाद ही घर पहुँचा।

यह कहा जा सकता है कि शामण्णा के परिचय से कालिया के दृष्टिकोण म परिवतन आया था। उसके हृदय की तह म यह बात थी कि आम तौर पर लोग अच्छे होते है। पर बीच बीच म ऐसे प्रसग आ जाते कि उस विश्वास को धक्का लगता। पर कालिया का उत्साह ही कम न होता था। कभी कभी उसे सन्देह होता कि उसम उसका गाँव अपवाद होगा। कसी

मज़े की बात है न जाने कितने गाँवो म जाकर वह कितने ही लोगा से मिला है। पर अपने थिएटर मे ही, अपने लोगा से ही उस उस बार म बात करना सभव न हो सका। क्या बचपन स कितनी ही पीढिया से सबके सामने सिर झुकाकर चलने के कारण तो एसा नही हो रहा है? यह बात एक अनबूझ पहेली थी। वह कभी कभी सोचता कि समाज म सिर ऊँचा करके चलना हो तो उसे वह गाँव छोडना होगा। कभी यह सोचकर मन को तसल्ली देता, 'शामण्णा खु द यहाँ है। मुझे क्या करना है?' बात यह है कि वसे जगत म सभी लोग अच्छे हैं पर अपने गाँव म वह छाती तानकर चल नही सकता।

कालिया के इस परिवतन से उसकी गृहस्थी मे भी परिवतन हो आया। सब अच्छे है, इस विश्वास म वह यह भरोसा करने लगा था कि उसकी पत्नी गगी भी अच्छी है। शुरू शुरू मे वह विश्वास दढ होता गया। शामण्णा का प्रभाव बढने से उसके परिचय का दायरा बढता गया। इसलिए घर छोडकर बाहर भी घूमने धामन लगा। साथ ही अपने बेटे के प्रति स्नेह और अभिमान होने के कारण वह उसे ज्यादा से-ज्यादा अपने साथ रखता। अपने लोगो के सुधार और बेटे के प्रति मोह के कारण कालिया अपनी पत्नी गगी से प्रतिदिन दूर होता गया। पुरुष की ही छाया म बटने वाली एक विशिष्ट जाति की स्त्री गगी के लिए यह अवहेलना जलती धूप सी लगी। उसकी गरमी मे उसकी इच्छाएँ मुरझा गइ। पति के प्रति, उससे भी बढकर उस बेटे क प्रति जिसके लिए उसने यह समझा था कि पति न उसका निरादर किया, उसके मन मे एक तिरस्कार का भाव जागत हुआ। इसके साथ कालिया अपने प्रयत्नो के बारे मे बखान करता था। यह भी बताता कि अपने लोग कितने मूरख है। यह सब सुनकर गगी के मन म एक ही विचार उठता था, उसका पति उन्ही लोगो म से एक है न? वह भी मूरख हो सकता है। उसकी भी बुरी लतें है।' इस प्रकार पति के प्रति तिरस्कार के साथ ऐसी भावना पदा हुई जो असह्य हो गई। उसके बदले गुडण्णा को उसका मन पसद करन लगा था। वह अछूत है, अपने पति की जाति की है—यह कोई कहता तो उसका मन उस पर विश्वास करने को तैयार नही होता। यदि वह ऐसी होती तो गुडण्णा उसे पसद करता? उसे यह सदेह ही नही था कि गुडण्णा उसे पसद नही करता।

उसे अच्छी तरह मालूम था कि वह उसके लिए पागल है। इसमें संदेह कैसा ? गुडण्णा का विचार आते ही गंगी ख़ुशी से नाच उठती। उस दिन के दृश्य को भूलना उसके लिए कभी संभव न हुआ।

कैसे खड़ा था उस दिन—एकदम अकड़कर गंभीर होकर 'क्या कहा ?' 'तुम्हारे बारे में कौन कह रहा है ? हुं-हुं-हुं तुम्हारे सूत के बारे में कहा न ?' यह कहता हुआ वह तेज़ी से चला गया था। बाप रे ! उसकी आदत किसे मालूम नहीं ? मेरी तरफ नाचता हुआ एकदम खड़ा हो गया। आं ? हं हं ! मैंने कहा था, 'मेरा सूत देखने आये हैं तो मुझे क्या देखते हैं ?'' तब मालिक ने जबान काट ली। पागल की तरह दौड़ते हुए आकर मेरा क्या हाल कर दिया था। उस दिन मैं दम घुटने से मरते मरते बची —ऐसे मालिक मुझे पसंद करते हैं अगर वे मुझे पसंद करें तो मेरा स्तर ऊँचा नहीं होगा ?

गुडण्णा पसंद करता था, पसंद करना ही पड़ा गंगी को।

अब भी गुडण्णा की आसक्ति गंगी में ही है।

गुडण्णा के लिए अब चेन्नी की संगत खत्म हो गई है। चेन्नी बिट्टूर में नई क्रांति पैदा करने वाली कालबीज बन गई।

# 9

शामण्णा के बिट्टूर में कदम रखने तक बिट्टूर में परिवर्तन नाम की चीज़ नहीं थी। जो प्रथाएँ हज़ारों सालों से चली आ रही थीं उन्हें लोगों ने आँखें मूंद कर अपना लिया था। यह उस गाँव के भूप्रदेश का एक विशिष्ट गुण था। रघुनाथराय के घराने का ही अधिकार था और उसके साथ जुड़ा साहूकारी का धंधा। उस गाँव में मेहनतकश किसान थे। उनके लिए आवश्यक लुहार, दो एक जुलाहे, गौड, कुलकर्णी, हरकारे चौकीदार आदि थे। गाँव के बाहर एक ओर हनुमान का मंदिर था दूसरी ओर भैरव का मंदिर था। अंत में हरिजन टोला था। उस प्रदेश में नये लोगों का प्रवेश नहीं था, और उनकी आवश्यकता भी न थी। जितने भी लोग

हैं सब एक दूसरे के लिए परिश्रम करते है, मालिक का मालिकपन भी दूसरो के लिए है।

उस दुनिया मे बाहर के व्यक्ति का एक घर जमने लगा था। वह था नेमचन्द सेठ का घर। सेठ कब आया और कैसे आया, यह गाव म किसी को याद नही। लेकिन खूब सामान रखकर बेचने से सेठ की दुकान गाव के हनुमान के समान यह घोषणा करती थी कि वह गाव के लिए अनिवार्य है। सेठ स्वभाव से भला था और हर किसी का उससे वास्ता पडता था। वह वहा अब तक अप्रचलित बढिया से बढिया कपडे लाकर रखने लगा जिससे लोगो को बडी सुविधा होने लगी। धीरे धीरे सेठ की दुकान का आँगन लोगो के लिए शाम को बठकर गप्पबाजी करने का अड्डा बन गया। इस कारण सेठ नये से नया सामान लाने लगा। सबसे बडी बात यह थी कि वह सब के मिलने की एक जगह-सी बन गई थी। सभी सेठ के ग्राहक थे। वह कालिया का दूर नही रखता था और रामप्पा को मना नहीं करता था। यही नही, रायसाहब आते तो सेठ उठकर खडे होकर नमस्कार करता और उनको भीतर ले जाकर अपनी गद्दी पर बिठाता। उस समय यदि किसान आते तो वे दुकान के दरवाजे से ही सामान खरीदते। कालिया जसे लोग (रायसाहब अगर दुकान मे होते) तो दुकान की पिछली तरफ ओट मे खडे हो जाते।

सेठ के स्नेह का प्रभाव बढने लगा। लोगो की खरीददारी भी बढने लगी। साल मे एक बार लोग घर मे फसल आने पर खरीददारी करते क्योकि रुपये का प्रचलन नही था। सेठ को भी उसकी कोई विशेष हठ न थी। लोगो पर उसका विश्वास था। लोग भी उस पर विश्वास रखते थ। लोग पैसो के बदले अनाज या रुई देते। इससे एक और लाभ था। लागो को फसल के समय अपनी आवश्यकता से अधिक अनाज को बेचने के लिए दूसरे गाव जाने की आवश्यकता न पडती, सेठ ही उसे खरीद लेता। बाद मे बलगाडी पर ल जाकर शहर मे बेच आता।

इस प्रकार सदा से चली आई जीवन-पद्धति म सेठ न जो क्रांति ला दी थी वह लोगो के ध्यान मे नही आई थी। नेमचन्द सेठ इतने गहरे ढग स लोगो मे खप गया था कि लोगो म यह विश्वास जमने लगा था कि सब काम के लिए अपना सेठ है। सेठ का व्यवहार भी कुछ ऐसा ही था। किसी

के घर शादी हो त्योहार हो उत्सव हो या कही से किसी के सगे सबधी आ जाये—ऐसा कोई भी मौका आने पर खर्च करने म लोगो को दिक्कत न आती । सेठ बिना किसी ना नुकर के उधार देता । सामान को कज म देने की बात तो दूर रही जरूरत पडने पर सेठ दस बीस रुपये नगद भी दे देता । और कितनी भलाई चाहिए ?

'भगवान अच्छे गुणो का पसद करता है यह बात सेठ के बारे म खरी उतरी । धीरे धीरे उसकी सपत्ति बढी । उससे सहायता प्राप्त करने के लिए बहुत स लोग उसके अधीन होने को तैयार थे । पर सेठ न भलाई को हाथ से नही छोडा । वह सदा यही मानता रहा कि गाँव के बडे रघुनाथराय हैं और उनके साथ वैसे ही व्यवहार भी करता रहा । रायसाहब यदि उस गली से गुजरते तो दौडकर विनयपूवक उनसे नमस्कार करके मिलता । उनके सामने सदा खडा रहता । कोई भी रायसाहब का नाम लेकर आता तो जो सामान माँगता दे देता । कई बार इस बात से रायसाहब का बहुत सकोच होता । अन्त मे एक दिन रायसाहब न यह सोचकर कि ऐसा सकोच क्यों किया जाय, सेठजी के पास एक खेत गिरवी रखकर पैसा उधार लिया और पुराना हिसाब चुका दिया । आगे यही व्यवस्था जारी रही ।

गुडण्णा भी रायसाहब के चरण चिह्नो पर चला । वह अपनी लता को पूरा करने के लिए धडक सेठ से कज लेता था सेठ कितने अच्छे थे ! यह सोचकर कि बेटे के व्यवहार से रायसाहब दुखी होगे, सेठ ने उनके कान तक कोई बात नही पहुँचाई । एक दो साल बाद जब गुडण्णा बालिग हुआ तो उसने दो एक कागजो पर दस्तखत कर दिये । जमीन तो पसे कमाने की चीज ही होती है तो खेती करके पदा करने मे या गिरवी रखकर पसे लेने म क्या फक है ! वसे देखा जाये तो खेती करना या कराना एक कठिन काम होता है । इसलिए गिरवी ही रखता चला गया ।

शामण्णा जब रिटायर आया तब तक रायसाहब घर म विवाह आदि के चक्कर म सेठ के और कजदार हो चुके थे ।

फिर भी सेठ के लिए रायसाहब ही बडे थे । और गाँव के लिए सेठजी बड थे ।

खानदान की गिरती अवस्था को देखकर सबसे पहले दुखी होने वाली

सुब्बक्का थी। पर वह भी किसके सामन अपना दुखडा रोती ? वही घर की मालकिन थी। किससे शिकायत कर सकती थी ? फिर भी कभी कभी अपन को रोक नही पाती। एक बार ऐसा मौका आया कि उसे ससुर के लिए खजर मँगवानी थी। उसने सेठ की दुकान पर कहला भेजा पर खजूर नही आई। सेठ की दुकान पर काम करने वाले रामप्पा ने कहला भेजा, 'वह देना पुराना हिसाब चुकता कर दें और खजूर ले जाएँ।"

उस दिन सुब्बक्का का ऐसा लगा मानो कोई भयावना सपना देखकर जागी हा यह क्या ? किसके लिए ऐसी बात ? एसी बात कहने वाला कौन है ? जमाना क्यो ऐसा उलट-पुलट हो गया ?' सोचकर सुब्बक्का थोडी देर के लिए सिर पकडकर बैठ गई।

रात को सुब्बक्का ने पति से कहा, "यह सब आपकी वजह से हुआ है।'

गुडण्णा की त्यौरियाँ चढ गईं। पर तुरत जवाब न दे सका। फिर भी मन-ही मन मे चिढ गया।

गुडण्णा की चिढ पत्नी की बात पर न थी, पत्नी पर थी। एक दिन, उसने उसक गाल पर जोर का थप्पड मारा था न ? थप्पड मारने के बाद गुडण्णा की अपनी सारी शक्ति खत्म हो चुकी थी। तब स सुब्बक्का से उलझने म कतराता था। ऐसा क्यो ? यह समझ म न आया था। इसलिए वह पत्नी स चिढता था।

गुडण्णा की चिढ अब वर्षा के बादलो की गरज की तरह थी। वह सहज भी थी। पर सुब्बक्का उससे डरती न थी। गुडण्णा यह महसूस कर रहा था कि पत्नी दिना-दिन मुह उठाकर निडर उससे बात करन लगी थी। कई बार बहस करते समय जोश म आकर बच्चे को जोर से कम लेती। मानो बच्चा ही उसका एकमात्र आधार हो। यह सच है कि वह उसके चाल चलन के बारे म ज्यादा बात न करती थी। पर उसके सामन वह जिस प्रकार बच्चे से बात करती और व्यवहार करती उसमे यह स्पष्ट हो जाता कि वह उसे विशेष महत्त्व नही देती थी। इसी कारण पत्नी के सामन गुडण्णा हमेशा तना रहता। कभी-कभी पत्नी मे इस परिवतन को दखकर हैरान सा मुह बद किय उसे टुकर टुकर देखा करता।

सुब्बक्का ने ताना दिया 'मैं कहती हूँ, यह सब आपकी वजह से हुआ,

अब मेरी ओर ताकने से क्या बनेगा ?"

गुडण्णा ने बात हँसी मे उडाने के लिए कहा, "मैंने क्या किया ? कल सूर्य न उगे तो कह देना वह मेरी वजह से हुआ।"

"बेमतलब की बात न कीजिए।"

"बेमतलब की बात कौन कर रहा है ? तुम तो ऐसे कह रही हो जैसे दुनिया म जो कुछ भी होता ह सब मेरी वजह से होता है।'

' दुनिया स हमे क्या ? हम अपने गाव मे चार आदमियों के बीच सिर ऊँचा करके चलने लायक हो यही काफी है।"

"इसम क्या है ? कधे मज़बूत हो तो सिर अपने आप ऊँचा हो जाता है।"

' अरे ! आप मर्द है ? आपको शरम जैसी कोई चीज नही क्या ?"

सुब्बक्का के स्वर में सख्ती देखकर गुडण्णा अपने अधिकारी के सम्मुख तनकर खडे सिपाही की भाति अवाक होकर सावधानी की मुद्रा म खडा हो गया।

खिसियाकर पर अधिकार जताने के स्वर मे बोला, "अब बेकार की बात मत करो। इसम और उसमे क्या सरोकार है ?"

सुब्बक्का ने रुआँसी होकर कहा "सरोकार की बात यहा कहा स आ गई ? उस हरामखोर की बात सुनकर घर के मर्दों को शरम आनी चाहिए।

गुडण्णा ने पत्नी की बात सुनी सुननी ही पडी। और सुनकर भीतर-ही भीतर कुढ गया वही रामी जिस पर उसकी सहायता स इतनी चर्बी चढ गई है वह ऐसी बात करता है। उसन ऐसा कहा ?' गुडण्णा न अपने गुस्से को पीने की कोशिश की। गुस्से मे आन से लाभ ? वह उसका कर ही क्या सकता है ? अकडकर खडा तक नही हो सकता। उसकी कमर टूट सी गई है। टूट सी क्यो टूट ही गई है। वह तो अब पूरी तरह स नमचन्द की मुट्ठी मे आ गई है। वह तो मेले की कठपुतली की तरह है। सेठ ज़ोर से धागा खीचे तो उसकी गरदन ही लटक जाएगी। हाँ एक निर्जीव गुडिया ! केवल सेठजी नही, जो चाहे उसे नचा सकता है। तभी तो रामी ने ऐसा किया है। गुडण्णा अत्यन्त विषादपूर्ण मुद्रा म पत्नी की ओर ताकता । बैठा रहा। यह कहना कठिन है कि पत्नी के मुह से निकले शब्दों का

अथ वह समझ भी पा रहा था या नही। यह बात सुब्बक्का के ध्यान मे शायद आ गई। उसने अपनी जबान पर रोक लगाई। उसे पति पर दया आई। शायद यह सोचकर कि इतने दुबल व्यक्ति के सामने अपना दुखडा रोना समझदारी नही, वह अपने आप बडबडाने लगी, "अगर ऐसा हो तो कैसे चलगा ?"

ऐसा क्या हो गया ? बार बार 'क्या होगा, क्या होगा' की रट लगा रही है।'

अरे, क्या हुआ पूछ रहे है। हमारे हिसाब से अब होने को बचा ही क्या है। कल हमारे बच्चे इज्जत बचा कर चल सकें यही बहुत है। मैं केवल यही चाहती हूँ जाने भी दीजिए, अब हँस क्या रहे है ? वह निठल्ला, वह होलती, मालूम नही किस किसको आपने सिर पर चढाया। अब व सब सिर पर काली मिच पीसेंगे ही। देखिए न, आज सुबह दुकान से खजूर लने जाने वाले पर ऐसे बरस पडा जस दुकान उसके बाप की हो, अपने गाव म ही अगर ऐसी बात हो तो ।'

'क्या बुरे दिन ऐस ही बने रहेंगे। इस बार की फसल तो आ जाय।

बस, रहने भी दीजिए अपनी बडी-बडी बातें। वह तो ऐस रहे है जस मै जानती ही नही। काहे को दिल बहला रहे हैं ? हमारे दिन तो बीत गय। बहुत सुख देख लिया।' यह कहते हुए सुब्बक्का ने पल्लू से मुँह ढाप लिया। फिर एक लबी सास लेकर कहने लगी, "कम-से कम लडके को अच्छी तरह पढा दें तो वही कल को बुढापे का सहारा बनेगा।"

गुडण्णा बडप्पन की हँसी हँसकर बोला, कैसी पगली हो तुम, बटे को बडा आदमी बनाने के लिए तीन-चार साल की उम्र मे स्कूल भेज देना चाहती हो ?'

सुब्बक्का ने मुह पोछकर धीरे से पल्लू हटाकर कहा, "अब कम स कम आगे से जिम्मेदारी महसूस करें तो "

आगे उसने अपने को रोक लिया। गुडण्णा अपने हाथ झाडता हुआ उठ खडा हुआ। यह बात कोई पहली बार नही उठी थी इसलिए वह जानता था कि बात कहाँ तक पहुँचेगी। पर सुब्बक्का इस बार चुप नही रही।

'मेरी बात पूरी तो सुन लेते ?'

'सुनना क्या है ? बेकार पागलों की तरह बकवास करने से कुछ हो जाएगा क्या ? लोगों की बात सुनकर तुम "

"आग लगे लोगों की बातों को ! आपकी इल्लती के बारे में बातें करने की मुझे क्या पड़ी ? कुत्ते की पूछ टेढ़ी है तो उसे कौन सीधी कर सकता है ?'

अपमानित होकर गुडण्णा ने डाटा, 'अब बस भी करो अपनी अकल मंदी बघारना। जो कहना है वह जल्दी से बको।'

'मैं कहती हूँ, कुछ तो जिम्मेदारी महसूस कीजिए। ऐसा लगता है जैसे आपको जिम्मेदारी जैसी चीज से कोई सरोकार ही नहीं।"

'क्या ? किसके लिए कौन-सी जिम्मेदारी ?"

"यह क्या बार बार एक ही बात दोहराए जा रहे हैं।"

"और नहीं तो क्या, तुम हर बात में जिम्मेदारी की ही बात ले बैठती हो।"

'ऐसा है तो छोड़िए। जो मन में आये सो कीजिए। एक तरफ आपकी करतूतें और दूसरी तरफ आपकी बहिन की करतूत ?'

'ऐ ! यह क्या बक रही हो ? गुडण्णा गरजा।

मैं क्यों कहने जाऊँ ? लोगों की बात मैंने कह दी। अपने घर की मान मर्यादा क्या मैं नहीं जानती ? फिर भी शांता को जरा शामण्णा से दूर रहना चाहिए। लोगों की बात लेकर क्या करना है ?'

भाड़ में गई लोगों की बातें।'

यह कहने से चल जाएगा क्या ? कल को यहाँ लड़के लड़की बड़े होंगे। उनके शादी-ब्याह होंगे। घर की इज्जत ही न रही तो मौके बेमौके कौन आएगा ?'

तो मुझे क्या करने को कहती हो ?'

कौन क्या कर सकता है ? यूँ ही खानदान की इज्जत की बात है मैंने कह दिया।'

गुडण्णा एकदम हँस पड़ा।

'क्या ? इसमें हँसी की क्या बात है ?"

हाँ, लड़के-लड़की बड़े का घर है यह। औ ? अभी तो सिर्फ एक ही

लड़का है, लगता है, तुमने एक और की आस लगा रखी है।"

गुडण्णा की बात का इशारा समझकर वह एकदम उठ खड़ी हुई। "अरे! कितनी रात हो गई बातें करते-करते। सुबह जल्दी उठना भी है।"

"बच्चा के स्कूल जाना शुरू होने के बाद जल्दी उठना। अब कौन-सी जल्दी है?' यह कहकर गुडण्णा ने उसका हाथ पकड़ना चाहा। पर वह उठने का थी कि उसका हाथ कहीं छू गया।' बच्चे को नींद आई कि नहीं!" कहती सुब्बक्का भीतर के कमरे में चली गई।

"अच्छा अब सोता हूँ।" कहते हुए गुडण्णा बरामदे में चला गया। वह तेजी से वहाँ से निकला था। तब उसके माथे पर पसीना चमक रहा था। घबराहट निराशा आदि के भाव एक के बाद एक उसके मुँह पर छाने लगे। उसने सोचा क्या ऐसा हो सकता है? शरम के मारे कलेजा धक-सा रह गया। उस क्षण में उसकी संसार रूपी नौका पत्थर से टकरा कर चकनाचूर हो गई थी। तो पत्नी का इसके बारे में यह विचार है? अब क्या रखा है दुनिया में? वह क्या चाहता था, क्या हो गया? फल को स्वादिष्ट समझते ही फूल से विष टपकना शुरू हो गया?

गुडण्णा का रोमांस काफूर हो गया। ऐसा लगा कि सुब्बक्का की मुग्धता ने उसे जोर से धक्का दे दिया।

उसका हाथ जब उसके शरीर को लगा तब उसका शरीर पत्थर की भांति कठोर हो उठा था।

पुरुष को दुत्कारे जाने का और कौनसा सबूत चाहिए था? खानदान की इज्जत की बात कह रही थी? उसे लगा कि उस दिन खानदान की इज्जत धूल में मिल गई। यह बात कहाँ से उठी थी। आ? 'उस हराम-खोर रामी की बात से। उसने जोर से दांत पीसे मानो काल्पनिक रामी उसके दांतों तले फँसा हो।

रामप्पा अब गुडण्णा के लिए न निगल पाने वाला कौर था। गुडण्णा चाहे दांत पीसे या गला फाड़े उसे उसकी परवाह न थी। अब रामप्पा सेठ का नौकर हो गया था। रोज-राज सेठ की संपत्ति बढ़ती जा रही थी। सेठ से उधार लेने वालों की संख्या भी बढ़ रही थी। संपत्ति की रक्षा करनी

थी। उधारी वसूल करनी थी। दगल मे विरोधी को चित करने की शक्ति रखने वाले रामप्पा की शक्ति अब कर्ज न पटा पाने वाले गरीबो को सताने के लिए ही रह गई थी। अब रामप्पा के जीवन का उद्देश्य ही कुछ और था। चेन्नी अब उसे छोडकर चली गई थी। सिर्फ छोडकर चली जाती तो कोई चिंता न थी। आसपास के गाँवो के पहलवानो को पछाडने वाले उस पहलवान को गुड पर टूटने वाली चीटियो की भाति लडकिया मिल सकती थी। पर चेन्नी उसके नाम पर धब्बा लगाकर चली गई थी। उसने कहा था, 'वह कैसा मर्द है? बीवी को देखते ही उसे पसीना छूट जाता है और कँपकँपी आ जाती है।" सच यह था कि उसका पत्नी से दूर रहने का कारण कुछ और ही था। चेन्नी ने दूसरी ही बात फैला दी थी। अत मे वह एक रात बिट्टूर से गायब हो गई थी।

रामप्पा इस अपमान को भूल नही सकता था। उसके दिमाग मे यह बात घर कर गई थी कि इसका मूल कारण गुडण्णा ही है। वही गुडण्णा जिसने चेन्नी को उससे दूर रखा था। चेन्नी को डरा कर उसे पथभ्रष्ट करने वाला गुडण्णा! उसी ने उसके नाम पर बट्टा लगाकर उसकी जग-हँसाई कराई थी। यह द्वेष रामप्पा के मन मे कुडली मारे बैठ गया था। वह किसी प्रकार गुडण्णा से बदला लेना चाहता था। वह जैसे के साथ तैसा करने की घात मे था।

रामप्पा के विचार को मानो फलीभूत करने के लिए ही एक शाम गगी दुकान पर आई। दूर से उसके हाथ मे कुछ दिखाई दिया। रामप्पा ने इधर उधर देखा सेठजी नही थे। सेठजी की अनुपस्थिति मे दुकान कैसे छोडे? अगर वह दुकान पर ही रहे और वह हालती उस पर कुछ ताना कसती तो क्या होगा? रामप्पा इसी चक्कर मे पड गया। दुकान के सामने की गली मे गगी खडी थी। वह रामी को मुह उठाते दिखाई पडी। उसने शरमा कर मुह फेर लिया परतु दो मिनट तक वैसे ही खडी रही।

गगी! होलती!

तो क्या? जब वह उस तरफ मुह मोडे खडी थी। शायद मुह न दिखाई पडने से रामप्पा के दिमाग से क्षण भर को यह बात शायद हट गई कि वह अस्पृश्य है। बस खाती वह मूर्ति, भरा भरा शरीर। मुह जरा मोडकर खडे होने से उभर वक्ष, उसने यह सब जी भरकर देखा। मन

तप्त हो गया। उस स्त्री के आकर्षण से हार कर रामप्पा खड़ा का खड़ा रह गया। दूसरे ही क्षण एक बात उसके दिमाग मे कौंध गई—एक तीर दो निशाने !

उसका भी काम बन जाएगा, और गुड्डण्णा से बदला भी चुक जाएगा ! ठीक है। वह सब तैयारी करके गला साफ़ करके तैयार हुआ।

अभी तक गगी मुह मोडे खडी थी। रामप्पा से बात करने म उसे एक मिनट का डर लगा। पर रामप्पा के खँखारकर गला साफ करते हुए देख उसे जरा तसल्ली हुई। ज्योतिषी की भाँति वह रामप्पा के भविष्य को अच्छी तरह जान गई थी। अपने उद्देश्य को पूरा करने के लिए सचेत होकर रामप्पा की बात सुनने को कान खड़े करके तैयार हो गई। रामप्पा ने फिर खँखारकर गला साफ किया और बार-बार मुह पर हाथ फेरते हुए मूछो पर ताव दिया।

'कुछ चाहिए था क्या ?'

बिना बोले मुह नीचा करके गगी ने लबा घूघट खीच लिया।

'सेठजी दुकान पर नही हैं इसलिए पूछ रहा हूँ।"

'तेल चाहिए था।" कहकर गगी जाने को हुई।

"मैं नाप देता हूँ। ले जाओ। कोल्हू का तेल चाहिए न ?"

"नही जी, मिट्टी का तेल।"

"क्या लाई हो ? कुप्पी है क्या ?" अतिम दो शब्द कहने तक रामप्पा की ओर मुह फेरकर गगी खडी हो गई थी। सध्या के सुनहरे प्रकाश मे उसके होठो पर चमकती मुस्कराहट रामप्पा के लिए सम्मोहन का काम कर रही थी। इसलिए उसकी जबान लडखडाने लगी थी।

अत म रामप्पा को गगी मे अपने प्रति विश्वास जगाना था। सेठ की अनुपस्थिति म कैसे कर्ज ले, यह सोचकर गगी ने बिना सौदा लिये लौट जाने की सोची थी।

मैं इतना भी नही समझता क्या ? वह सेठ कैसे कहता ? उधार हो या नगद, ग्राहक को खाली हाथ लौटाना नही चाहिए यह उन्होंने मुझे बता रखा है। उन्हें क्या मुझ पर इतना भी विश्वास नही ?'

गगी ने सिर का पल्लू सँभालते हुए 'कुप्पी नीचे रखी। रामप्पा का अपनी ओर ताकने का मौका देकर वह कुप्पी रखने को झुकी।

इतिहास हजारो वर्ष पीछे लौट गया। कहानी एक ही है, कहानी वही है, स्त्री, पुरुष। फिर भी हजारो साल पुरानी कहानी। क्योंकि यहाँ कोई बंधन नही था। पुरुष, स्त्री, क्या पूरा जन्म ही एक विशिष्ट घड़ी की प्रतीक्षा मे बिताया जा सकता है? झुकी हुई स्त्री के ढके, अनढके अंगो को निहारता सामने खड़ा पुरुष सृष्टि की शक्ति के आकर्षण म बँधकर परवश हो गया। वह एक क्षण, पर उसी एक क्षण के लिए प्रकृति-पुरुष की आँख मिचौली होती है।

"अरे! कही सेठ जी न आ जाएँ?" गंगी हकलाई।

"अब आकर क्या करेगा? अब तुम आ ही गई हो। उधार ले जाओ, सेठ जो चाहे कर ले मैं देख लूगा।"

"यह कैसे हो सकता है?"

"कैसे के क्या माने? इस सेठ का व्यापार इतना कैसे बढ़ा, मेरे यहाँ होने से न? अगर मैं यहाँ न होता तो वह वसूली कर पाता? इधर देखो, मौका देखकर आ जाना सामान ले जाना।"

गंगी ने उसी को देखकर सिर हिलाया और चल पड़ी।

"लगता है सेठ जी आ गए। उस पेड़ के नीचे रुकना। उसे दुकान पर बिठाकर आता हूँ।" रामप्पा ने गंगी को बताया।

"मैं जरा हट कर खड़ी होती हूँ। दोनो एक ही रास्ते से चले तो "

"हत्तेरी की! एक ही रास्ता माने? मुझे तालाब पर जाकर नहाना है। इसीलिए उसी रास्ते आ रहा हूँ। इस पर भी शक है?"

तब तक गंगी खिसक गई थी।

तब से गंगी पूर्ण रूप से सही रास्ते से फिसल गई। रामप्पा के दिए जाने वाले सामान के लालच म उसी की हो गई। वह जान गई कि शरीर के विनिमय म वह जो सामान चाहे पा सकती है।

रामप्पा का विचार कुछ और ही था। वह गुड्डण्णा की रखैल थी? उससे गुड्डण्णा का बदला लिया गया न? रामप्पा को बड़ा मजा आया। आज नही तो कल सेठ अगर कही दुकान का हिसाब देखे तो? यह गंगी को जो उधार दे रहा है वह सेठ को पता चल जाय तो? रामप्पा को इस बात की ज्यादा चिन्ता न थी। सेठ ने भी क्या यह सब अपने पसे से कमाया है। गाँव वालो को खूब चूसकर ही तो इतना कमा पाया है। उस

कमाई मे क्या इसका हाथ न था ? इसीलिए उसमे इसका भी हिस्सा नही है क्या ?

इन विचारा से रामप्पा के व्यवहार में परिवतन आने लगा। वह जो करता है वह चोरी नही है। उस पर उसका हक है। अब उधार वसूल करते समय वह ऐसा व्यवहार करता मानो वह अपना उधार वसूल रहा हो। जब गुडण्णा के घर से नौकर आया तब उसने अधिकार के स्वर मे ही डाटकर भेज दिया था। उसने मन ही मन सोचा—अब चाहे गुडण्णा भी आकर उसस मागे वह उससे वसूली करने मे जरा रियायत न दिखाएगा। पहले यही उससे सहायता लेता था। अब यही उसकी मदद कर सकेगा। पर गुडण्णा नही आया। और कुछ मँगवाया भी नही। पत्नी के चिढाने पर भी 'वह हरामजादा रामप्पा' कहते हुए दात पीस कर रह गया।

परतु उस दिन गुडण्णा की जगह रायसाहब ही सेठ से मिल थे। उनके सामने ही सेठ ने रामप्पा को डाटा। उनके चले जाने के बाद सेठ ने कहा "रामप्पा, गाव के मालिक वे ही हैं, यह हमेशा ध्यान रहे।" कह कर उसने आख मारी थी। रामप्पा हँस पडा। हँसते समय रामी को वह जो उधार दे रहा था वह याद आने पर और भी जोर मे हँस पडा।

सेठ ने अपनी बात मे कुछ और अथ है यह जताते हुए कहा, 'मने कहा कि वे गाव के मालिक हैं आ ?" कहकर उसने रामी की हँसी मे हँसी मिलाई।

सठ का आख मारना अथपूण था। 'गाव के मालिक' ये शब्द तो राय-साहब क साथ जुड से गए थ। गाव के लोग रायसाहब मे पहले से ही भक्ति और विश्वास रखते थे। यह जानन पर भी कि रायसाहब की सपत्ति दिनो दिन छीजती जा रही है जनता मे तो रायसाहब आदर-णीय ही थे। सपत्ति के घटन के कारण रायसाहब का सुपुत्र ही है, रायसाहब के बाद गाँव की मिल्कियत उस घर मे नही रहेगी। गुडण्णा को देखकर किसी को सम्मान देने की भावना पैदा ही नही होती थी। अक्सर लाग य आपस मे बातें किया करत—रायसाहब के घर का प्रभाव बडी तेजी म घटता चला जा रहा है। रायसाहब का स्वास्थ्य ह्रास भी इसका एक

प्रेरक कारण था। बेटे का व्यवहार, बहिन की मृत्यु, बेटी का वधव्य, इन सब ने एक एक करके रायसाहब को बुढापे की सीमा तक ला खडा किया था। अब तो रायसाहब दुनिया मे होने पर भी न होने के समान यवहार करते थे। घर म वे किसी से भी बात न करते थे। यदि वे किसी से बात करते तो केवल शामण्णा से करते। वे सदा उँगलियो पर कुछ गिना करते या बडबडाया करते, तो यह महसूस होता मानो वे घटती आयु का हिसाब लगात हुए मृत्यु की प्रतीक्षा कर रहे हो। दूसरे लोग उनका वह यवहार देखकर यह सोचत कि वे पूजा पाठ या ध्यान करते हैं। अत उनसे बात न करते। दोपहर के भोजन के बाद सोकर उठते ही वे बाहर बरामद म बैठ जाते। जरा दूर पड तले परम्या बैठा रायसाहब को देखा करता। रायसाहब के पास बैठने वाले को यह महसूस होता कि उनकी दृष्टि सदा कही दूर लगी रहती है। कभी कभी ध्यान आन पर व सोचते, 'गुडण्णा को पढाया जाता तो शायद अच्छा होता। लडका बुरी सगत म पड गया ।' तभी एक लबी साँस छोडते हुए कहते, 'इस लडके के बार म क्या सोचना।' तभी पोते का विचार दिमाग मे आता, 'राम्या को पढाना ही चाहिए। किसी बडे शहर मे भेजना चाहिए। वही एक कमरा लेकर सुब्बी और राम्या को रख देना चाहिए। अब की जापा निवट जाय तभी तो हा सकेगा । गुडण्णा को तो बाल-बच्चा की जरूरत है ही नही। तभी रायसाहब के शरीर मे झुरझुरी सी आ जाती, 'कसा घिनौना काम करन लगा यह लडका ! शूद्रो के सहवास मे भी इसे घिन नही आती। शूद्र ही क्या ?' तभी रायसाहब की दृष्टि परस्या पर पडती। यह देखकर वे गदगद हा जाते—'हरामी कही का! इसका कितना लगाव है हमसे पर यह नामुराद गुड्या ! उसन घर का ही सत्यानाश कर दिया। रायसाहब फिर से लबी सास लेत जो भी हो, हम से अगर किसी का लगाव है तो बस इस परस्या का ही । एसा क्यो ?' रायसाहब के मुख पर तमल्ली की रेखा दौड जाती, 'वह लडका शामण्णा भी हम पसद करता है ।' शामण्णा का विचार आते ही रायसाहब के मुह पर एक प्रकार का भय छा जाता, और एक प्रकार की अनिश्चितता का भाव दिखाई देता, लडका भला है फिर भी कुछ कहा नही जा सकता। अभी जवान है। शाता भी उसकी सगति मे बढ रही है।' तब उसकी याद आत ही रायसाहब के मुख

पर क्रोध झलक पडता। मुख एक क्षण को काला सा पड जाता। उनका विचार था कि बेटी के विधवा होने मे उसी की गलती है, मानो उन्हे तंग करने के लिए जानबूझकर बेटी ने वैधव्य अपना लिया हो। यह विचार आते ही उनका दुखी मन बेटी पर अविश्वास करने लगता। शामण्णा तो भला लडका है। ठीक है पर उससे क्या ? स्त्रियो की सगत ही खराब होती है। शायद यह उस लडके को पता नही। यह शाता उसके चारो ओर मँडराती रहती है। पता नही क्या होने को है ?' वे ऐसे साँस छोडते मानो बुरे विचारो को बाहर फेंक रहे हो। पर इससे क्या हो सकता था, वह विचार उनसे छूटता ही नही था, 'पता नही क्या हो जाय, कुछ भी हो। तब तक उनकी आँखें मुद जायें तो अच्छा है।' शामण्णा को याद करते समय कभी-कभी उन्हे लगता कि यदि वह उसके साथ ब्याह कर ले तो अच्छा है। पर यह विचार आते ही उनके रोंगटे खडे हो जाते 'छि ! यह कैसा जमाना आ गया है ! मेरी बेटी तो विधवा है। उसकी शादी का विचार मैं सहन कर सकता हूँ ? धत मुझे मतिभ्रम हो गया है। पता नही जल्दी आखें मूद लेने का भाग्य मेरा है या नही !'

बार-बार वही विचार आने से रायसाहब के मन मे यह बात घर कर गई कि व ज्यादा दिन जिएँगे नही। वे वास्तव म घबरा गए थे। 'आगे क्या होगा ? उनके बाद घर की व्यवस्था क्या होगी ? बहू, पोते, पोती (तब तक सुब्बक्का के बेटी पैदा हो गई थी), उनके लिए आधार कहा ? गुड्या पर विश्वास करने से लाभ नही। कुछ भी हो जाय घर के बारे म और कर्ज के बारे मे कोई व्यवस्था तो करनी होगी। बैठे-बैठे ही प्राण पखेरू उड जाएँ तो ?' रायसाहब उस विचार को वही छोडकर सामने बैठे परस्या को देखते। 'बेचारा ! मेरे जाने के बाद परस्या का क्या होगा ?' यह विचार भी उनके दिमाग मे सिर उठाता।

ऐसे दिनो म सध्या के समय अपने सामने ही परस्या को पेड के नीचे बिठाकर पेटभर खाना परसवाते। परस्या के गले स कौर मुश्किल से उतर पाता। वह जानता था कि मालिक रात के समय भोजन नही करते। फिर भी यह सोचकर कि उसे खाना खाते देखकर मालिक खुश होते है वह तटस्थ-सा होकर भोजन कर लेता। यह देखकर रायसाहब को खुशी होती। उनके मुख पर एक तसल्ली का भाव उभर आता। यदि उस समय उनके

प्राण चले जाते तो व अपने को धन्य महसूस करते।

उनका समय समीप आ गया है यह विचार समय बीतने के साथ साथ रायसाहब के मन मे घबराहट पैदा कर रहा था। व जिस किसी को देखते, उनके मन म यही विचार उठता। मेरे जाने पर इसका क्या होगा? शामण्णा को देखने पर उनको जरा संतोष होता। लेकिन उससे क्या? प्रतिदिन शामण्णा उनके घर म घटा बठा रहता। फिर भी वह अपना नही है न? यह विचार उठते ही सिर उठाने को भी मन न करता। कभी-कभी व शामण्णा से बात करना चाहते, कई बार उन्होंने बात शुरू की। मन की बात कसे कह? यह न समझ पाने से व जल्दी स वहाँ स चले जाते।

पर उन दिनों हालत बहुत खराब होती जा रही थी। सुब्बक्का की बच्ची अभी गोदी म ही थी। उससे घर का काम पूरा नही हो पाता था। बेटी की रसोई उन्ह रुचती न थी। पोता पाच बरस का हो गया था, उसकी पढ़ाई की व्यवस्था भी करनी थी। सब उन्हीं को करना था। उनके सिवा करने वाला और था भी कौन? उन दिनों गुडण्णा अंधाधुंध खच कर रहा था। जिला लोकल बोर्ड का उम्मीदवार बन गया था। लेकिन उससे क्या लाभ? उसकी किसे जरूरत है? उसके विरोध म पड़ोसी गाव का शेटी खड़ा हुआ था। उससे वैर ही मोल लेना होगा। बुरा जमाना आ गया है। यह सोच-सोचकर रायसाहब हताश हो जाते।

एक दिन शाम का मंदिर गये तो वहीं बठ रहे। अब दुनिया से उनका मन भर गया था। मन म विरक्ति से अधिक उदासीनता थी। पाँवों म डग भरने की शक्ति ही न रही थी। ओढ़ी हुई धोती को उतारकर उन्होंने कमर से कस लिया। हाथो मे सिर थामकर शून्य दृष्टि से देखते हुए मंदिर के बरामदे मे बठ रहे। ताल मे हाथ-पाव धोकर घर लौटता हुआ शामण्णा उन्हें देखकर वहाँ गया। रायसाहब को उसके आने का पता ही न चला। शामण्णा ने भगवान की मूर्ति की प्रदक्षिणा की और चुपचाप रायसाहब के सामने आकर बैठ गया। तब रायसाहब को मानो होश आया। उन्होंने उसकी ओर ऐसे देखा जसे पहचानने का प्रयास कर रहे हो। अब तक रुकी सब बातो का मानो बाँध टूट गया। कमर पर कसी धोती खोलकर उन्होंने शरीर को जरा ढीला छोड़ा। मन की बात कहने का सुयोग अपने आप आ गया। यह सोच कर जरा हिम्मत बँधी और

पूछा, 'क्यो शामण्णा, मदिर की ओर कैसे चले आये ?"

रायसाहब की बात के लहजे को समझकर शामण्णा कुछ हसा और फिर बाला, 'कभी कभी आ जाता हूँ, रायसाहब ।"

"तो यू कहो। तुम्हे भी मांगन की जरूरत है ? आ ! ह ह !!!"

"मुझे क्या जरूरत है रायसाहब, जो है वह गँवाया नही, जो नही है उसकी मुझे समझ नही ।"

क्षण भर को रायसाहब का मुह खुला-का-खुला रह गया । बाद मे बोले, "शामण्णा, कभी-कभी तुम्हारी बात पल्ले ही नही पडती ।"

"समझ मे न आने वाली बात कहू तो मेरी गलती है । य ही जा रहा था, आपका देखा तो आ गया । आप किसी विचार मे खोये हुए थे ? मेरे आने स आपको कोई बाधा तो नही पहुँची ?"

"शामण्णा तुम आ गय, यह बहुत अच्छा हुआ । मैं कुछ सोच रहा था । कई दिन स इसी विचार मे डूबा हुआ था । तुमस कहना चाहता था पर साहस नही हुआ । अब तुम आ गये हो । यह अच्छा हुआ ।"

"मुझ मे जो भी सहायता बन सकेगी वह ।"

"तुम्ह अपने मुह से कहने की जरूरत नही शामण्णा । जिस दिन मैंने तुम्ह देखा उसी दिन मैंने निश्चय कर लिया था कि यह लडका हमारा ही है ।'

"इतनी याग्यता मुझमे ।"

"देखा शामण्णा, बीच मे मत बोलो, बूढो को अपनी बात कहन की जल्दी लगी रहती है । क्यो, जानते हो ? वे ऊपर वाले के बुलाने से पहले बात खत्म कर देना चाहते है । समझे ? बीच बीच मे मत बोलना । अब मुझम कुछ कह देने की कसमसाहट हो रही है । तुम सुनो या न सुनो, मुझे जो कहना है, वह कह ही दूंगा । बीच मे मुह मत खोलना। मेरी बात खतम हान पर भी 'हां या ना' किए बिना चले जाना । तुम्हारे उत्तर की मुझे जरूरत नही । बहुत दिन से तुमसे कहन को मन हो रहा था । अब कहता हूँ, मन हल्का हो जाएगा । इसके बाद जब चाहे मर जाऊँ ता कोई बात नही ।

शामण्णा चुपचाप सुनता रहा । रायसाहब के आदेशानुसार शाति मे बठ कर सुना । मन मे शुरु शुरू मे बाहर से शात दिखने पर भी भीतर

कोलाहल मचा था, 'रायसाहब इतने हठ से कौनसी बात कहने वाले हैं ? इतने गम्भीर होकर बठे हैं । क्या कोई रहस्य और महत्त्वपूर्ण बात है ? अथवा रायसाहब पर कोई नई मुसीबत आन पडी है ?' शामण्णा जानता था कि व कर्ज से बुरी तरह दबे है । 'या कहीं गुडण्णा ने किसी नई मुसीबत मे सब को फँसा तो नही दिया ?' पर शामण्णा ने सदेह को अत तक अपने मे ही दबाए रखा । उसने सोचा, 'शायद उस बारे मे रायसाहब बात न करें । कौन जान ? रायसाहब की शुरू की बाता से शामण्णा का कोई सुराग नहीं मिला ।अत मे उसे और भी सदेह हुआ, 'क्या ऐसा हो सकता है ? शाता और उसके मेलजोल के बारे म लोगो मे कोई काना फूसी तो नही हो रही ?' अथवा उसे रायसाहब की कही बात— अब मैं बहुत दिन नही रहूँगा' ध्यान मे आई । 'बेचारे बूढे हो चुके हैं । जो कुछ मन म है वह किसी से कहकर हलके हो जाना चाहते है। मैं यू ही खामखाह डर गया ।' उसन मन ही मन सोचा ।

रायसाहब का भाषण बे रोकटोक जारी था । बेटे के दुगुण, बहू, पोते और पोती की स्थिति कर्जे का भार, खानदान की इज्जत की रक्षा अपने पूवजो की आनबान । यह सब कहानी उस भाषण म समायी हुई थी। मनुष्य की आशा आकाक्षा रीति रिवाज, शक्ति और वभव, य भी महा भारत के समान रायसाहब मे समाहित थे ।

' मैंने पता नही कौनसे पाप किये थे इन सब मुसीबता के अलावा बेटी को विधवा भी देखना पडा ! पति के घर जा नही सकती । यहाँ उसकी दखभाल कौन करगा '

इनका उत्तर शामण्णा की जबान तक आया पर रायसाहब क मुह न खोलने की बात याद आते ही वह रुक गया । इस डर से कि बहुत देर तक चुप रहे तो शामण्णा बालना शुरू न कर द रायसाहब न तुरत अपनी बात आगे बढाई—

' मैं कहता हूँ उसे कौन देखे हूँ मैं बूढा हो गया चाह तो मुझे पागल भी कह सकते हो । चाह तो मुझे प्रगतिशील कह लो । मैं तुम्ह एक बात कहता हूँ । उस मैं तुम्ह सौंपता हूँ, हँसिया भी तुम्हारे हाथ मे है और कुम्हडा भी । तुम जो रास्ता चाहो अपना सकते हो । पर तुम मरी बहू और उसके बच्चो का बेसहारा न होने दो तो भगवान तुम्हारे अगले

ज"म म   हा   मैंने कहा है कि तुम्हे कुछ बोलना नही है।" शामण्णा को सिर हिलाते देखकर उन्होंने चेतावनी दी, "करार खत्म हुआ, बात भी खत्म हुई।" कहते हुए उँगलियां गिनते कुछ बडबडाते चले ही गये।

*शामण्णा सोच रहा था* 'शाता के व्यवहार म परिवतन क्या हो गया है?' कुछ दिन पहले रायसाहब द्वारा शाता को उसे सौंपने देने के बाद मे शामण्णा शाता को दूसरी ही दृष्टि से देखने लगा था। रायसाहब ने कहा था, 'चाहे मुझे प्रगतिशील समझो!' इस बात का मतलब क्या हो सकता है? शामण्णा तो चुप रह सकता था। इस बात के खुलासे की जरूरत नही थी। शामण्णा को धम का डर नही था। उसने जिस महात्मा के जीवन दशन को अपनाया है उसमे जो "याय नही होता है वह धम नही है। छोटी सी उम्र मे, पति को खोकर इच्छा के विरुद्ध सारा जीवन परावलबी होकर जीने म कौनसा "याय है? शामण्णा की अतरात्मा म शाति न थी, 'उसके साथ यदि याय करना हो तो क्या करना होगा? या उसमे उसका भी हित है? इसी करण उसे "याय दिलाने का हठ तो नही कर रहा है! यह बात तो एक तरफ रही? *उसकी तपस्या का क्या बनेगा।* चार पाँच वष पहले उसने क्या प्रतिज्ञा नही ली थी कि उसे शादी नही करनी, गहस्थी नही बनानी! वह नि स्वाथ समाज सेवक बनेगा। अब? वह ब्रह्मचय व्रत तोडना होगा?' शामण्णा उलझन मे पड गया। ब्रह्मचय शब्द के दिमाग म आते ही उसे कोई रास्ता न सूझता। महात्माजी ने यह नही कहा था कि ब्रह्मचय का अथ यह नही कि स्त्री सगति छोड दी जाए। शामण्णा की समझ म कुछ भी नही आया। अत म शाता को 'जैसी तुम्हारी' इच्छा की दृष्टि से देखने *लगा। तब उसके मन म एक स्थिरता आ गई।*

शामण्णा की इसी दृष्टि ने शाता को डरा दिया था। वह अपने अनुभव से यह समझने *लगी थी कि इन दिनो शामण्णा* जब उसकी ओर देखता है तो उसका मन चचल हो उठता है। ऐसे कुछ मौको पर शामण्णा की ओर देखने मे भी वह डरती थी। ऐसा लगता था मानो कोई *उसे हाथ* पकडकर खीच रहा हो, कभी-कभी तो कदम आगे रखते ही पीछे हटाकर मुह चुका लेती।

शाता को मालूम था कि शामण्णा की उस दृष्टि की भूमिका का अथ

क्या है। इसीलिए वह डरती थी। शामण्णा के मन, रूप और स्वभाव से वह कभी की प्रभावित हो चुकी थी। तब उसकी 'तेरी ही शरण' वाली दष्टि क आह्वान की वह बहुत समय तक उपेक्षा करने म समथ न हो पाई। वह यह अच्छी तरह समझ गई थी। वह ठीक है या ग़लत है यह वह न जानती थी। पर इतना जरूर जानती थी कि सब इसे पाप कहते हैं। शामण्णा भला आदमी था। दूसरो की मर्यादा की रक्षा करेगा। यह सच है शायद वह विवाह भी कर सकता है। पर घर मे पिता और बाहर समाज इस स्वीकार करे तब न? इन दोना को छोडकर और रहने को कौन सी जगह है?

शाता ने अपने मन को तो दढ कर लिया पर उसे अपने मन पर विश्वास नही था। किसे मालूम कौन से क्षण यह मन उसे परवश कर दे। इसी कारण वह शामण्णा का सामना करने से कतराती थी।

यह कैसी यातना! यह कैसी रिक्तता! शामण्णा से भेंट न होने पर वह अपने को अधी सी महसूस करती। कभी-कभी गला इतना रुंधने लगता कि सास लेना ही कठिन हो जाता। चारो ओर की दुनिया खाली खाली-सी नजर आने लगती। कोई विचार हो या बात दोनो म स्पष्टता जाती रही।

कई बार वह सोचती, स्त्री का जन्म ही यातनापूर्ण है परावलबी? प्रतिदिन उसे जो यातनाएँ सहनी पडती है कही यह उस अकेली की ही तो नही? उनके कारण शाता का मन चूर चूर हो गया। स्त्री के जीवन के बारे म सोचते सोचते उसका दष्टिकोण व्यापक होता चला गया। — दष्टिकोण स वह बाकी स्त्रियो को देखने लगी। तब उसकी आँखें खु... उसे लगा अम्मा... यह पराश्रयी जीवन स्त्री को कैसे घोर सकट म ... सकता है? क्या स्त्री का यही भाग्य है? तभी एक दष्टात याद आया।

वह गगी का ही एक दष्टात था। सभी को पहले से ही वह कहा... मालूम थी। घर म छोटी होने स उसने कभी उसके बारे म किसी स कुछ नहीं कहा था पर ऐसी कोई बात न थी जो उसे मालूम न हो। लोग उसके बाद के बारे म बातें करते थे। कुछ ही साल पहले गेनी की एक कहानी बनी थी। वह कहानी भी शाता जानती थी। सभी कहते थे कि गेनी, गगी ये सब छोटी जाति की औरतें हैं। वह भी ऐसा ही समझती थी। ये खराब हैं। अब बात समझ म आ गई थी। उसका मन और उसके विचार

–

गलत रास्ते पर ले जाने को तयार हैं न ? क्या ऐसी स्थिति से वह बच न पायगी ? स्त्री होने के कारण चेन्नी की भांति शरम के मारे गाव छोड अथवा गगी के समान बेशम होकर गाव मे रह ? क्या कोई दूसरा रास्ता नही ? शाता कुछ दिन तक इसी चिंता म डूबी रही। डर भी लगता रहा क्या कोई दूसरा रास्ता नही है ? एक दिन उसे सूझा एक दूसरा रास्ता है। एक स्त्री दूसरी को रास्ता दिखा सकती है। शाता न निश्चय किया कि उसे वही रास्ता अपनाना चाहिए। गगी जसिया को समझा बुझाकर सही रास्ते पर लाना चाहिए। उसकी भी वही अवस्था हो सकती थी न ? वह गगी से कौन बडी है ? शाता ने दृढ निश्चय किया।

एक दिन उसन शामण्णा से अपने मन की सारी बातें कह दी। वह चुपचाप सुनता रहा। सब कुछ सुनाने के बाद शामण्णा के कुछ कहने से पहले ही वह बोली, "भाई साहब आप लाग चाहे जो कहे। मैंने यह निश्चय कर लिया है कि मैं ऐस कामो मे लग जाऊँगी।"

शामण्णा के मन से एक भार उतर गया। 'भाई साहब' कहा न इसने आज से उसका जो निश्चित हो गया। उसने सोचा, अब उसका मिलना जुलना सुगम रहेगा।

दिल हल्का हो जाने से मुख पर मुस्कराहट छा गई। उसने शाता की ओर देखा। उसके मुख पर भी मुस्कान थी।

निरभ्र आकाश म फली चाँदनी की भाति निष्कल्मप थी उन दानो की मुस्कान।

# 10

"कालप्पा, मेरी बात मानने के लिए तैयार हो ?"

"कह दिया न, मालिक, आपकी बात मानने को तयार हूँ। पर आप ही करन क लिए तैयार नही हैं।"

"क्या मतलब ?"

"देखिए, शामण्णा जी, मुझे अक्ल सिखाने वाले आप ही हैं।

एक बात मैं कहता चला आ रहा हूँ। जो काम हमारा है उसे हमे ही करना चाहिए है कि नही ?"

"तुम्हारा काम याने कौन सा ?" शामण्णा ने मुस्कराकर पूछा, 'आप लोगो को इतना अधिकार है क्या कि हमे छू भी सकें ? आ ?"

"रास्ता दिखाना आपका काम है, आपने दिखाया। उस पर चलना हमारा काम है।"

"हा, इतने दिनो तक तुम लोगो को दूसरे रास्ते पर डालकर दुख दिया गया। अब काँटे और पत्थर हटा कर ठीक रास्ते पर आने तक तो हमे आगे रहना चाहिए न ?

कालिया भी हँसकर बोला, "ऐसी बातें मेरी समझ मे नही आती, मालिक।'

"इसमे समझने की क्या बात है ? गाधीजी न कहा नही—तुम लोगो के साथ हमने जो अत्याचार किया हमे उसका प्रायश्चित्त करना ही पडेगा।'

"आदमी जब इतना बडा हो जाय कि अपनी गलती मान ले तो फिर परासचित्त क्यो ?"

"प्रायश्चित्त ? कालप्पा अपनी गलती पर दूसरे हम दड दें तो सजा होती है। अपनी खुशी से आप कष्ट भागें तो प्रायश्चित्त होता है।" अब मैं पीछे हटू तो कैसे ? मुझे तो ऐसा लगता है कि इस प्रसग मे गाधीजी स्वय प्रायश्चित्त करने के लिए आमरण उपवास शुरू करने वाले हैं। ऐसी स्थिति म हम चुप बैठे रहे तो उन पर विश्वास रखने का क्या लाभ ? इसलिए कहता हू एक दिन निश्चित करें मैं आगे चलता हूँ।'

"मालिक, आपके सामने मैं मूरख हूँ। फिर भी हाथ जोडकर एक बात कहता हूँ। जब बच्चा चलना सीखता है तब अगर उसका हाथ पकड कर चलाया जाय तो वह मजबूत नही होगा। उसको अपने-आप चलने दिया जाय तो उसम चलने की सामर्थ्य आएगी।

शामण्णा न छेडने के स्वर म हँसकर पूछा, 'बाप रे ! इतनी बातें करने वाले तुम मूरख हो ?

'आप हमारी दशा सुधारना चाहते हैं। इसलिए यह काम हम पर छोड दें ' यह कहा कर कालिया चुप गया।

शामण्णा विचारमग्न होकर बैठा था। एक तरफ कालिया की बात सत्य लग रही थी। दूसरी ओर उसे यह निराशा हो रही थी कि वह उस काम म आगे नही बढा तो उसका उपदेश बेकार सिद्ध होगा। शामण्णा को यह मालूम था कि वह काम आसान नही है, सभव है उससे कई लोगा को नुक्सान हो जाये। हजारो वर्ष से चली आ रही प्रथा को एक क्षण म दूर करने का प्रयास आसान है क्या ? बातें करना कुछ और चीज है, पर अछूतो का सीधा मदिर मे ले जाने की बात कुछ और है। कालिया का यह कहना एकदम ठीक है कि उन्ह अपने अधिकार के लिए आप लडना चाहिए, पर यह दिखाना हमारा काम नही है कि उन्ह अपन अधिकार के लिए आप लडना चाहिए ? पर यह क्या उचित नही कि हम यह दिखायें कि हम खुशी से उन्हे उनके अधिकार सौंपना चाहते हैं ? इसलिए शामण्णा की यह बडी इच्छा थी कि वह अछूतो के मदिर-प्रवेश आदोलन म भाग ले। इसके अलावा उसके मन मे और एक विचार था। गाव के लाग इस बात को मानने के बदले और चाहे कुछ हो जाये, वे उसे रोकने के लिए तैयार हो जाएँगे। यदि ये लोग केवल कालिया के नेतत्व म मदिर प्रवेश करने लगे तो उसे रोकने मे हिंसा भी हो सकती है। उस समय इसे पीछे रहकर इस पर भरोसा रखने वालो को आहत होते देखत रहना होगा ? इसी उधेड बुन मे वह एक मिनट चुप रहा।

कालिया भी यह बात अच्छी तरह जानता था। उसने जो आदोलन शुरू किया था वह आसान नही। उसे इस बात का डर था कि उसमे हिंसा हा सकती है। इसलिए वह शामण्णा को आगे जाने देना नही चाहता था। उसका विचार था कि शामण्णा गो जैसा सीधा आदमी है। वह क्यो इनके झगडे म पडे ? ऐसे लोग और कुछ दिन रहे तो पता नही कितनो को लाभ होगा ? ऐसा मौका भी आ सकता है कि एक दो लाशें भी बिछ जायें। शामण्णा को बचाना चाहिए। इसके जैसे लोगों के ऐसे रहने या मरन स क्या बनता बिगडता है ? '

कालिया अब अपनी जान तक देने को तैयार था। उसके मन मे यह विचार अवश्य था कि उसकी जाति के लोगो की स्थिति मे सुधार होना चाहिए पर उसके मन मे एक और विचार प्रबल था। उसे अपने बेटे के लिए जीने की हठ थी। फिर भी इस सदभ मे वह अपनी जान देने को

तैयार था। यह जानते हुए भी कि इस सघर्ष मे जान तक जा सकती है, वह यह अगुवा बनने को तयार था। उसे इस प्रसग मे अपने जीवन के बारे में कोई मोह न था। उसने यह फैसला कर लिया था कि इसम जीत गया तो अच्छी बात होगी अगर मर गया तो बेकार की जिन्दगी से छुटकारा मिल जाएगा। वह बार-बार यही कहता, इस प्रकार जीने मे क्या रखा है! उसका मन इतना दुखी हो गया था। जीवन के प्रति आसक्ति उसम मुरझा गई थी। वह भी अपनी पत्नी गगी के कारण। वह जिस किसी काम मे आगे बढता लोग तरह-तरह से ताने कसते, 'कौन? कालिया? वही, वही गगी का घर वाला?" वह इसी रूप म पहचाना जाता। कालिया के लिए गगी का नाम बदहजमी से मुह का स्वाद खराब करने वाली खट्टी डकार की तरह था।

गगी अब गाँव-भर के लिए वेश्या बन चुकी थी। पति जितने जोर शोर से आदोलन म जुटा था उतने ही जोर-शोर से वह वेश्या-वृत्ति म लगी हुई थी। कालिया के उपदेश का असर उस पर उल्टा ही पडा। कालिया के मुह खोलते ही वह तुनक पडती और ताना देती, "तू कमाऊ होता तो तेरे मुह से यह अच्छा लगता।"

'ए गगी, तू मेरी बात सुन, तू कहे तो मैं यह गाँव छोडने को तयार हूँ? कही भी रहा जा सकता है। चमडा कमाने का काम करो तो बडे शहरो म खूब पैसा मिल जाता है।'

'चमडा कमाने का काम क्यो करें? जहाँ हैं वहाँ झाडू देने स भी रोटी मिल जाती है। ऐसी रोटी खाने के बजाय ।"

ऐसी रोटी क्या माने? देख चार आदमी तेरे मुह पर थूकते हैं। रास्ते म निकलता हूँ तो ताने कसते हैं।"

'तानो से शरीर म छेद थोडे ही पड जाते हैं। मेरी कमाई की वजह से ही तो तुम्हारा यह आदोलन ठाठ से चल रहा है।" कहकर गगी तिरस्कार की हँसी हँस पडी।

'कल तेरा बेटा गली म निकलेगा तो दूसरे लडके उसे क्या कहगे। यह तो सोच गगी?

'उन्हें अपने बाप का भरोसा होगा तभी तो कोई दूसरे को कहगा न?"

कालिया अवाक खडा रह गया। कितना भी कहो, फ़ायदा नहीं। क्या मार पीटकर रास्ते पर लाना पडेगा। यह वह जानता था कि वह दूसरे दिन ही भाग जाएगी। कभी-कभी उसका इतना गुस्सा उबलता कि जान से मार डालने का मन होता। अगले ही क्षण हताश हो जाता। वश्या को जान से मार देन पर कोई पीठ नही ठोकेगा। पत्नी की हत्या का अपराधी कहकर फासी चढा दिया जाएगा। इस सब से क्या लाभ ? मन म जो जो काम करने के मनसूबे हैं, व ढह जाएँग और बेटा भी अनाथ हो जाएगा। हालेय, और तिस पर अनाथ तथा रास्त का भिखारी, ऐसी हालत मे उसके बच्चे की क्या दशा होगी। दिन ज्यो ज्यो बीतते गये कालिया हताश होता गया। पत्नी का व्यवहार देखकर उसका जीवन के प्रति माह ही घटने लगा।

दुर्दैव भी किस किस तरह आता है। ऐसी पत्नी स कालिया को न तो घर म सुख मिला और न बाहर सुरक्षा ही प्राप्त हुई। उसे मालूम था कि लोग उसकी पत्नी के बारे मे जो मुह मे आये सो कहते ह। इस बारे मे कुछ भी कर पाना उसके लिए सभव न था। लोगो मे गगी ने खूब बदनामी कमाई थी। एसी स्थिति मे वह कर ही क्या सकता था ? समय क साथ वह लोगो के मुह से बातें सुनने का आदी हो गया था। अब इस बार में उसे कोई डर भी नही था। पर जिस प्रकार कुछ लोगो को बदनामी करने म ही मजा आता है, उसी प्रकार कुछ लोग ऐसे भी थे जो और भी ज्यादा नुकसान पहुँचात थ। यह सोच पाना मुश्किल था कि वे कब क्या कर बैठेंगे। ऐसी गुडागर्दी का डर उसे सतान लगा था।

उसके लिए उचित कारण भी था। गाव मे ऐसे भी दो चार आदमी थे जिनसे कालिया को डर था। उनमे एक गुडण्णा था और दूसरा रामप्पा।

*गुडण्णा तो कालिया से इतना नाराज़ था कि कोई उसके टुकडे टुकडे* भी कर डालता तो भी उसे सताप न होता। जब गुडण्णा चुनाव के लिए खडा हुआ तब उसे पता था कि कालिया से उसे सहायता नही मिलेगी। कालिया मे जो परिवतन आये थे उनकी उसने कल्पना भी न की थी। और इस बात से भी बढकर उसके गुस्से का कारण कुछ और ही था। गुडण्णा का दापत्य सबध अब नही के बराबर था। सरसू (सरस्वती) बेटी

बच्चे के जन्म के बाद से सुब्बक्का गुडण्णा से और भी दूर हो गई थी। पति के अधिकार की स्थापना करने के गुडण्णा के सारे प्रयत्न विफल रहे। वह पहले से ही जानता था कि पत्नी उससे नफरत करती है। फिर भी उसे विश्वास था कि अनिवार्य होने पर वह पति के अधिकार को स्वीकार करेगी। दो बच्चों के हो जाने के बाद से पत्नी का आधार दुगुना हो गया था। वह पति को गृहस्थी के मामले में तिरस्कार की दृष्टि से देखने लगी थी। शुरू शुरू में गुडण्णा ने अपमानित महसूस किया, बाद में उसे कठिनाई होने लगी। उसके बाद जीवन के प्रति घृणा करने लगा। अब बाहर मुँह मारने की जगह न थी। रामप्पा उसका शत्रु हो गया और मौका मिलते ही बदला लेने की ताक में था। इस कारण गंगी के पास भी जाने का साहस नहीं कर पाता था। गंगी का नैतिक पतन अब एक सार्वजनिक विषय था। उसके साथ संबंध रखने पर उसकी इज्जत रह सकती थी? गुडण्णा कालिया पर आग-बबूला हो चुका था। उसका खयाल था कि कालिया ने ही अपनी पत्नी को गलत रास्ते पर चलने को प्रेरित किया। गुडण्णा को यह भी संदेह हुआ कि अपने सुख और सुविधा के लिए कालिया ने जान बूझकर पत्नी से ऐसी कमाई करानी शुरू की, और उसकी गंगी का जीवन बिगाड दिया। अब यह होलेय मंदिर में प्रवेश करना चाहता है। जाय तो सही, देखेंगे। इसी मौके का लाभ उठाकर उसका सिर ही न फाडा तो कहना! गुडण्णा की यही योजना थी।

रामप्पा भी इसी फिराक में था। कारण भी वही था। वह जानता था कि लोग कभी-कभी उसकी तुलना कालिया से किया करते थे। उसकी पत्नी चेन्नी दूसरे की होकर उसे नहीं छोड गई थी? इसीलिए जब वह कालिया को देखता तो उस पर खून सवार हो जाता। किसी समय रामप्पा सारे इलाके का नामी पहलवान था इसलिए उसकी बडी आकांक्षा थी कि गांव की औरतें उस पर रीझें। पर कैसे? वह जितना ही मूछों को ऐंठता औरतें मन ही मन हँसतीं और एक दूसरी से कहतीं, 'उसके बच्चा नहीं हो सकता। इसीलिए तो चेन्नी उसे छोड कर चली गई। ऐसा है यह मर्दुआ।" ये बातें उसके कान में अकसर पड जातीं। इस बदनामी को वह कैसे दूर करे? इसलिए उसने कोई बहादुरी का कार-नामा कर दिखाने का निश्चय किया। शुरू-शुरू में गंगी को पटाने के बाद

खश हुआ।

यह सोचकर उसे जरा खुशी हुई कि उसने कुछ कमाल दिखाया। पर कुछ ही दिनो मे वह घमड टूट गया। गगी सावजनिक वस्तु थी। गली मे पडी चीज को सबकी आख बचाकर जेब के हवाले कर लेना कोई बडी बहादुरी का काम होता है? रामप्पा को इससे तसल्ली नही हुई। उसके जीवन मे उसे ऐसी उलझन मे डालने वाले दो व्यक्ति थे एक गुडण्णा और दूसरा कालिया। गुडण्णा को मार डाले या कालिया को मिटा दे? लागा को तो पता चले। लेकिन उसे पुलिस की पकड मे नही आना चाहिए। उसने निश्चय किया कि कालिया को निबटा देना ही आसान ह। तब से वह जहाँ कही कालिया को देखता जरूर अडगेबाजी करता।

यह सब हो जाने के कारण कालिया का जीवन के प्रति आसक्ति न रही। इसी कारण उसने निश्चय किया कि अस्पृश्यो के मदिर-प्रवेश के आदोलन म उसे अगुवा बनना है। उसे केवल एक विचार विचलित करता था। वह ता मरने को तयार था। अगर वह मर जाये तो भरमा का क्या बनेगा? बापू परस्या तो बूढा हो चला है। इसके अतिरिक्त बापू की नसीहत के अनुसार वह अपने बेटे को पालना नही चाहता था। अब भरमा दस बरस का हो चला है। उसे स्कूल भेजना है पढाना है ताकि बडा होकर वह सिर ऊँचा करके चल सके और चार आदमी उसे नमस्कार भी करें। मालूम नही ऐसी ही उसकी क्या क्या इच्छाएँ थी। पर अगर वह मर गया तो उसके सपन, सपने ही रह जाएँगे? छि! कुछ न कुछ करना ही हागा। बेटे की व्यवस्था करनी ही चाहिए। अगर उसे कुछ भी न हा तो इस मदिर प्रवेश के कायत्रम के बाद यह गाँव छोडकर चला जाना चाहिए। अगर कुछ हो गया तो?

वसे सब तरफ से सोच साचकर कालिया शाता के पास आया था। उसे एक सन्देह था। कभी-कभी वही स देह आशा के रूप म उठ खडा होता था। शामण्णा और शाता की शादी क्या न हो जाए? कई बार इस बात पर उसे आश्चय भी होता। यह इतनी पढी लिखी जाति है। ये ब्राह्मण अपने को प्रगतिशील कहत है पर छाटी उम्र मे पति के मरने के बाद भी दूसरी शादी नही करने देत। शादी हो या न हो, कालिया को

शाता और शामण्णा की जोडी एक आदर्श जोडी नजर आती थी। उसे जितना शामण्णा म विश्वास था उतना ही शाता में भी था। उसके श्रद्धा भरे मुख को देखकर शाता के मन मे एक टीस उठी। उसने अपने आपको विषाद से पूछा, 'क्या उसके विश्वास का पात्र होने की योग्यता मुझम है ?'

बाद म मुस्कराते हुए सांत्वना भरे स्वर मे पूछा, "क्या भई, ऐसा तुम्हें क्या हो गया ?"

कालिया को लगा मानो भीतर की आँधी के झोंके मे हृदय के कपाट खुल गए हो। उसने अपनी व्यथा को, समाज म हो रहे अपने अपमान को एक साथ शाता के सामने खोल दिया। उसकी आँखों से आँसुओं की धार बह रही थी। शाता भी अपने को रोक न पाई। वह भी सिसक पडी। वह बोली, 'तुम पागल हो कालप्पा। क्या तुम समझते हो कि शामण्णा की समझ म यह सब नही आता। पर जिन्हे ज्यादा समझना चाहिए वे ही गलत रास्ते पर चलें तो उसका क्या दोष है ? मैं उसे सब समझा दूगी। तुम बेकार की फिकर मत करो। तुम मदिर जाओ या कही और।' यह कहने के बाद उसका मन हल्का हुआ और होठो पर मुस्कराहट आ गई। फिर दिलासा देते हुए बोली, 'समझे कि नही ? सब पुरुष एक ही जैसे होते हैं। बेकार की बातें करते है। चाहे जहाँ जाओ। तुम्हारी औरत और बच्चे को हममे से कोई न कोई सँभाल लेगा।'

कालिया वही खडा रहा। उसे वही खडा देखकर शाता ने पूछा, 'क्या विश्वास नही हो रहा ?"

विश्वास की बात नही, एक बात दिमाग म आई है।'

ऐसा कौन-सा विचार आया, भाई ?"

'कुछ भी मुश्किल आन पडने पर बडे मालिक से आकर कहा करते थे। पहली बार जिंदगी मे आपके पास आया हूँ। यह कैसी बात है ?"

'यानी ? इसमे ऐसी क्या अनहोनी हो गई ! औं ?'

वह सिर खुजलाते हुए अपने आप बडबडाया, 'जमाना बदल गया। पता नही यह अच्छाई के लिए है या बुराई के लिए ।

कालिया के दिमाग म उठी अच्छाई या बुराई की बात बहुत जल्दी

ही अनपेक्षित रूप से एकदम स्पष्ट हो गई। शाता से मिलकर आने के बाद से कालिया अपना समय बडी तसल्ली से बिता रहा था। अब उसे बेटे की चिंता न थी। उसे यह भी आशा हो चली थी कि शायद पत्नी भी सुधर जाएगी। उसे शाता म इतना विश्वास था। इसी तसल्ली मे उसने मदिर प्रवेश के आदोलन का काय भी जरा स्थगित कर दिया। अब वाहर आना-जाना भी कम हो गया। वह वेटे और पत्नी के साथ ही ज्यादा समय बिताता था। मन जरा हल्का हो गया था। ऐसा लग रहा था कि जीवन म सुखी रहना सभव है। उसे यह अनुभव होने लगा था कि यदि स्थिति ऐसी ही रही तो जीवन मे बराबर सुख प्राप्त करना सभव हो जाएगा। अस्पश्यता, अधिकार, स्त्री पुरुष का सबध—ये सब छोटी छोटी बातें ह। सब क्षणिक है। वैसे अब वह इतना सुखी था कि रात दिन मे भी उसे अतर दिखाई नही दता था।

उस सात्वना भरे वातावरण मे कालिया को अपन चारो ओर के ससार का होश ही न था। इसीलिए उस रात जो हुआ उससे शारीरिक पीडा की अपेक्षा मानसिक आघात अधिक असहनीय लगा।

उस रात सदा की भाति चारो ओर निस्तब्धता थी। झोपडी के भीतर भरमा और गगी सुरक्षित सोए हैं, इससे निश्चित होकर वाहर सोया कालिया एक गव सा महसूस कर रहा था।

नीद मे उसन तरह-तरह के स्वप्न देखे। स्वप्न मे वह अपन लोगो को साथ लेकर मदिर प्रवेश को जा रहा है। पीछे हजारो अस्पृश्य उसका जय घोप कर रहे हैं मदिर के फाटक के दोनो ओर गाव के लोग खडे है। उनके मुख पर आश्चय दिख रहा है। वे कुछ डरे हुए हैं। कुछ लोग गुस्स स लाल-पीले हो रहे हैं। परतु वह किसी बात की परवाह किए बिना आग बढ रहा है। घटा बजाकर उसने मुह उठाया। यह क्या? आकाश म फूल-मालाएँ गिर रही है? बाप रे! एक के-बाद एक कितनी सारी! उसका दम घुटने लगा, वह छटपटाया। यह क्या? क्या इतनी मालाएँ गिरी कि हिलना-डुलना ही मुश्किल हो गया। कितन ऊपर से गिर रही है? बाप रे! इनसे तो चोट लग रही है।

कालिया न एकदम आँखें खोली पर चारो ओर अँधेरा था। उसने इधर-उधर देखना चाहा। वह स्वप्न नही था। किसी ने उस पर कबल डाल

कर कसकर पकड रखा था। साथ ही दबादब ज़ोर से घूँसे मारे जा रहे थे। उसने चिल्लाना चाहा पर चिल्ला न सका। क्योंकि मुह म कपडा गेंद सा बनाकर ठूस दिया गया था। कालिया ने अन्दाजा लगाया कि ज़ोर से कसकर साथ ही घसे बरसाने के लिए दो तीन आदमी ज़रूर होगे। इसके अलावा चिल्लाने पर आने वाला भी कौन था ? बापू तो घर मे सोता ही नही। बाकी बचे बेटा और पत्नी । उनकी याद आते ही कालिया ने घबरा कर उठने का प्रयास किया। पर तभी और भी ज़ोर से घूसे पडे। पत्नी और बेटे पर कोई सकट आ सकता है। यह बात ध्यान मे आते ही एसा लगा मानो उसके शरीर म कोई भूत प्रवेश कर गया हो। कालिया ने पूरी शक्ति लगाकर उठने का प्रयास किया। इस पर और भी ज़ोर से घूस पडे। वह बेहोश होकर ढेर हो गया।

दूसरे दिन से कालिया एकदम बदल गया। उसे इस ढग से मारा गया था कि शरीर पर न कोई घाव था और न निशान। उसने सोचा, यह अच्छा ही हुआ। फिर भी कालिया ने यह अनुभव किया कि यह भविष्य मे आन वाले सकट की पूव सूचना है। दूसरे दिन ही उसने एक उपाय किया। वह बहाने से गगी और भरमा को रायसाहब के पास सुला आया। वह स्वय अपने बापू के साथ रायसाहब के घर के सामने वाले पेड के तले सोया रहा। यह कहना चाहिए कि कालिया ने ठीक समय पर यह कदम उठाया था। उसी रात कालिया की झोपडी जलकर राख हो गई। इसम सदेह नही था कि किसी ने जान-बूझकर आग लगाई है।

उस दिन तो कालिया का हौसला पस्त हो ही गया। अब उसे यह सदेह ही नही रहा कि कोई हाथ धोकर उसके पीछे पडा है। यदि उस रात गगी और भरमा झोपडी के भीतर सोए होते तो ? यह विचार आते ही कालिया काँप उठा। आज झापडी जला दी है। कल को य लोग जान भा ल सकते हैं। मालूम नही इस सबके पीछे कौन है ? यह भी पता नही कि कब फिर से उनका हाथ उठ जाय ? कालिया एकदम डर गया। दूसरे दिन रात को उसन बेटे को अपने साथ ही सुलाया। उस रात कोई गडबड नही हुई।

परन्तु सुबह हाते ही न कालिया दिखा और न भरमा। क्या व दोना जिदा थ ? या जिन्होने झापडी फूकी उन्होंने ही उन दोना को कही ठिकान

तो नही लगा दिया ? कुछ भी पता न चला।

परस्या दुख से व्याकुल हो उठा। राय साहब हताश होकर बड-बडाते, 'कभी भी ऐसी गुडागर्दी नही हुई।'

रायसाहब गुस्से के मारे शिथिल पड गए। कालिया के गाव मे भाग जाने के कारण गाव मे दो चार दिन शोर शराबा रहा और बस ! उस शोरगुल का कोई सिर-पैर नही था। कोई कहता 'गुडण्णा ने भगा दिया।' दूसरा कहता, 'अपनी जाति की श्रेष्ठता को इस हद तक खराब करना ठीक नही।' कुछ लोग उसके पीछे यह बात कहते, 'आदमी को भगाकर उसकी औरत को रख लेने की बात न तो आज तक कही देखी और न सुनी।' गुडण्णा जहा कही भी जाता, लोग उसकी पीठ पीछे कुछ न कुछ बातें बनाते। वह भी कहाँ तक सहता ? वह अपना गुस्सा परस्या पर ही उतारता। उसे मुश्किल-से मुश्किल काम सौंपता तब परस्या रायसाहब की शरण जाता।

रायसाहब अब एकदम निराश हो गए, सन्त से चले आए सबध टूटते जा रहे हैं। परस्या का बेटा, उनके बेटे के जमाने म उसका कमेरा नही रहेगा। कैसा जमाना आ गया है ? यह सोचकर कि उनके आश्रित उनका आश्रय छोडकर भाग रहे हैं रायसाहब दुखी हुए। उनको यह स्पष्ट लगने लगा कि उनके घराने के तिनके बिखरने लगे हैं। दिल कडा करके बहू और पोते को उन्होंने शहर भेज दिया। घर म बेटे से कोई फायदा नही, केवल बेटी रह गइ है। उन्होंने शामण्णा से कहा, "शामण्णा, अकेले क्यो रहते हो ? यही आकर रह जाओ न।" लेकिन शामण्णा ने बहाने से टाल दिया। वास्तव म गुडण्णा इस बात मे आडे आया था। उसने कहा था, 'क्या जी, आप हमारे घर का नाम डुबाना चाहते है ?'

प्रसग न समझकर शामण्णा ने पूछा, 'किस सबध मे कह रहे है ?'

'किस बारे म। आग लगे आपके सबध को और विषय को। जब से आपने हमारे गाँव म कदम रखा आपने जाति धर्म सब भ्रष्ट कर डाला। हमारे कमेरे चमारो को सिर पर चढा लिया। आपका तो इससे कुछ नही होगा। अब हमारे घर में आकर रहना शुरू कीजिए। और हमारे घर को

बदनाम कराइए।'

शामण्णा जरा मुस्कराकर खिसक गया। उसी ने एक दिन रायसाहब को तसल्ली देते हुए कहा 'मैं कहीं रहूँ पर आपसे दूर नहीं रहूँगा।"

रायसाहब जीवन से ऊब चले थे। अब इस जीवन में धरा ही क्या था। बेटा-बेटी और आश्रित सबकी दुरवस्था अपनी इन आँखों से देख ही चुके थे। एक दिन उन्होंने शामण्णा से कहा "शामण्णा, लड़के के स्कूल की व्यवस्था मैंने कर दी अब मेरा काम खत्म हो गया।"

शामण्णा ने मजाक से कहा, "आप घर के बुजुर्ग हैं। जब तक रहेंगे काम लगा ही रहेगा। खत्म हो गया माने?'

खत्म हो गया माने खत्म। शामण्णा, अब मेरे लिए कुछ करना बाकी नहीं मेरे जीने में कोई सार नहीं है।"

"रायसाहब, आपको ऐसी बातें नहीं करनी चाहिएँ।"

बात करने-भर से ही मर जाऊँ ऐसा सौभाग्य मेरा कहाँ? शामण्णा, पता नहीं भाग्य में और क्या-क्या देखना बदा है?'

और क्या देखना है? पोते को बढ़ते देखना है।" यह कहते हुए शामण्णा हँस पड़ा। सुनकर रायसाहब लम्बी-सी साँस खींचकर चुप हो गए। उन्हें यही डर सता रहा था कि उनका पोता बड़ा होकर क्या बनेगा? उसे पढ़ाने लायक पैसे भी तो नहीं हैं। कर्ज भी कितना लिया जा सकता है। इसके अलावा उनके बाद गुडण्णा को कोई कर्जा भी नहीं देगा।

दुखी होकर मन ही मन कहते बेटे से जो सुख मिला वही काफी है। अब पोते से क्या उम्मीद रखनी है।'

रायसाहब आप बेकार की बातें सोचते हैं। आप ही सब कुछ सँभाल रहे हैं। इसलिए गुडण्णा के सिर पर जिम्मेदारी नहीं पड़ी।

बहुत हो गई उसकी जिम्मेदारी। उस पर जिम्मेदारी पड़ी तो लोगों के मन में पत्थर ही पड़ा समझो। यह कहते हुए रायसाहब ने मुड़कर आँखें बन्द कर लीं।

एक बार उस जिम्मेदारी पर से ध्यान हटा, तब उस अछूत लड़की के साथ यह दिमाग में आते ही रायसाहब ने जबान काट ली। मालूम होने पर भी पहली बार यह बात उनके मन में आई थी।

उस बात को वे याद नही करना चाहते थे ।

"शामण्णा उसका तो सत्यानाश हो ही गया । अब उस बच्चे को पढा कर एक रास्ते पर लगा दू तो वाद म कम से कम शाता ही उसकी देख-भाल कर लेगी या तुम ही देखभाल कर सकते हो ।" बेचारे ! रायसाहब कितन थक गये थे । बेटी से यह आशा ! साथ मे उसका नाम भी जोड दिया ! वास्तव म यह घार निराशा के चिह्न है । यह सोचकर शामण्णा ने दयापूण दष्टि से रायसाहब को देखा और कहा

"वैम दखें तो आपको कोई चिंता करन की जरूरत नही, रायसाहब ।"

"क्या कहा ?" अविश्वास के स्वर मे रायसाहब ने पूछा ।

' पोने के लिए आपका चिंता करने की जरूरत नही है ।"

"रायसाहब के मुंह से दो-तीन क्षण तक कोई बात न निकल पाई । उनका गला भर आया था । उन्होंने दो-तीन लबी सांसे ली, बाद मे स्थिर होकर बाले

' शामण्णा पता नहो मैं क्या कहना चाहता था, जाने दो । तुम मेरे सग बेटे से भी ज्यादा ध्यान रखते हो । तुम्ह ऐसी सद्बुद्धि देने वाला गाधी मेरे लिए एक बहुत बडा आदमी है ।' यह कहकर उन्होंने बालक के समान प्रसन्न मुख होकर उसकी ओर देखा और फिर बोलें, "अब कोई रुकावट नही ।"

"रुकावट ? किस बात की रुकावट नही, रायसाहब ?"

"मरन म, मैंन कहा मरने मे अब कोई रुकावट नही ।"

## 11

अब रायसाहब ऐसी स्थिति म पहुँच गए थे कि जब चाहे मर सकते थे । उन्हान कहा था, अब मरन मे कोई रुकावट नही । उसी के अनुसार मृत्यु भी शीघ्र ही उन्हें ले गई । रायसाहब की एक बात पूरी न हो सकी । उन्होंने सोचा था कि वे शातिपूवक बिना किसी व्यथा के प्राण छाड देंगे । पर यह बात झूठी हो गई । केवल एक बात की तसल्ली थी, पर मरने वाले

के लिए वह व्यथ थी। बिना किसी दुख दर्द के बैठे-ही-बैठे उनके प्राण पखेरू उड़ गए। लेकिन इससे किसे तसल्ली हुई?

रायसाहब की मृत्यु की किसी को भी उम्मीद न थी। उम्मीद होती भी कैसे? देश के किसी कोने में किसी घटना के घटने पर उनके उससे अनजान होने पर भी उनके प्राण चले जाएंगे—इस बात की उम्मीद रायसाहब कैसे कर सकते थे?

रायसाहब बहुत पहले से ही समझ चुके थे कि बेटे से उन्हें किसी प्रकार का सुख मिलने वाला नहीं है। वे जिनसे सुख की आशा कर रहे थे वही शाता और शामण्णा उनकी मृत्यु का कारण बने।

'यथा काष्ठं च काष्ठं च समेयातां महोदधौ।' यह कहना रायसाहब की एक आदत सी थी। "समझे, परस्या? दो लकड़ियों के टुकड़े। हम भगवान की सृष्टि में लकड़ी के दो टुकड़े हैं। संसार सागर में तैरते हुए आते हैं, मिल जाते हैं, फिर अलग हो जाते हैं। तुम भी एक टुकड़ा हो, मैं भी एक टुकड़ा हूँ।"

तब परस्या हाथ जोड़कर उत्तर देता, "मालिक के साथ इस परस्या का क्या संबंध हो सकता है?'

तब रायसाहब ऊँचे स्वर में कहते, 'धत्, रौंड़ के! बात ही नहीं समझता है।

परस्या ने ही गलत समझा था। रायसाहब अब एक लकड़ी के टुकड़े थे। देश में बही हवा उस टुकड़े को बहा ले गई।

काल जब रायसाहब को ले गया तब एक दृष्टि से रायसाहब की ही जीत थी इसलिए वे काल के बुलावे पर डरे नहीं। डरने का कारण ही कौन-सा बचा था? बहू पोता और पोती की व्यवस्था हो चुकी थी। सुरेन्द्र के पार की पढ़ाई की व्यवस्था हो चुकी थी। यदि न बड़ी [illegible] राज्य का नौकरी मिल जाय तो बहुत अच्छा होगा। कुछ भी हो [illegible] व्यवस्था में बहू और बच्चों का तो इस [illegible] गुस्सा न [illegible]। रायसाहब को उस पार [illegible] थी। उन्हें समता का [illegible] को कोई समस्या नहीं रहती। उनके [illegible] शामण्णा और शाता का [illegible] हो न गया। इसीलिए उस पार [illegible] और [illegible]। [illegible] उन्होंने [illegible] (सरस्वती) को आवाज दे [illegible] अपनी [illegible]

के नाम कर दी थी कि गुड्या उसे भी न निगल जाय। शामण्णा है, सब सँभाल लेगा। कभी कभी परस्या के बारे मे चिंतित हाते। उस नामुराद लडके को भी क्या इसी समय भाग जाना था? कहना चाहिए कि आज के लडके ही बिगड गए हैं। गुडया ऐसा बना और कालिया यो भाग गया। सब कुछ व्यवस्था हो चुकी थी फिर भी गुड्या को याद करके रायसाहब डरते। पता नही कुलागार किस समय क्या कर बठे। कहा नही जा सकता। बेटे के बारे म उनके मन मे यह डर बठ ही गया था।

पिता के सदेह को गुडण्णा ने यथावत पूरा किया। कालिया का भाग जाना गुडण्णा को अपना अपमान लगा। वह क्यो भाग गया? उसने सोचा, 'यह परस्या की हिकमत है। रायसाहब के दिमाग मे यह भरना चाहता है कि वह मेरे कारण भागा है। साले ने बेटे को भगा दिया। अब यह कहकर कि बहू का कोई सहारा नही, रायसाहब से पैसे ऐंठना चाहता है। बाद मे ये दोनो भाग निकलेंगे। इन लागा की जात ही ऐसी है। कुछ भी हो, जाति का स्वभाव कहाँ जाता है।'

एक दिन गुस्से मे आकर वह शामण्णा से बोला, "क्यो जी शामण्णा, क्या आपने कोई ऐसी जाति भी देखी है जो जिस थाली मे खाए उसी मे छेद करे?"

"क्या बात है गुडण्णा? ऐसी बातें क्यो कर रहे ह? एमा क्या हो गया?" शामण्णा के मुख पर सदेह और स्वर म अनिश्चितता थी।

'क्या हुआ पूछते है आप! यह सब आप ही की कारस्तानी है। ऊपर से ऐसे दिख रहे हैं जसे कुछ जानते ही न हा?"

"किस बारे म कह रहे हैं आप? अगर मेरी गलती हुई ता म मान लूगा।'

'वाह साहब वाह! हमारे शामण्णा तो बडे साधु हो गये है। ट्र बात तक का पता तक नही फिर भी गलती मानने को तयार हैं। इधर देखिए जनाब। आप मान गये ता यह न समझ लीजिएगा कि बडा मेहरबानी कर दी मुझ पर समझे? पूछते हैं, कौन सी बात? इतने दिन आपने उसे पट्टी पढाइ और सिर चढाया, अब भाग गया न?'

"कौन? उस कालप्पा की बात कर रहे हैं?

'कालप्पा क्यों कहते हैं? वह होलेय, हरामजादा कालिया। मारी

ज़िंदगी हमारे घर की जूठन खाता रहा। अब सब समेट कर भाग गया।"

शामण्णा ने ज़रा तसल्ली से कहा, "रायसाहब, दुखी क्यों होते हैं? एक ज़माने में बेटा बाप की बात सुनता था, अब यह चलन नहीं रहा। पत्नी पति की आज्ञाकारिणी थी, अब वह भी नहीं रहा।"

"आप कहना क्या चाहते हैं?"

"इसी प्रकार नीची जाति वालों ने ऊँची जाति वालों की बात मानना छोड़ दिया है।"

ओह हो! यह लेक्चर मेरे सामने मत झाड़िए। पुराण सुनाने वाले पंडित की तरह वहाँ जाकर कहिए, श्रोता जैसे लोग सुनेंगे।"

गुड्डण्णा के यह कहकर चले जाने के बाद शामण्णा दंग रह गया। सोचा यह कैसा कमीना आदमी है। मैंने इसको ऐसे ही छोड़ दिया। इसकी ऐसी गंदी जबान काटकर गाँव के मुख्य द्वार पर लटका देनी चाहिए। धिक्कार है ऐसे लोगों पर। अगर मैं भी उसके साथ मुकाबला करने लगूँ तो उसी जैसा हो जाऊँगा। जाने दो। दुनिया में दुष्टों का मुकाबला करने के लिए हिमालय के समान सहन शक्ति होनी चाहिए। इतनी मुझ में नहीं। यह सोचकर शामण्णा वहाँ से चला गया।

धीरे धीरे गुड्डण्णा पर पागलपन सा सवार हो गया। ऐसे में पिता ने सुब्बक्का को बच्चों के साथ शहर भिजवा दिया। तब से गुड्डण्णा बड़बड़ाता फिर रहा है लड़के की पढ़ाई के लिए उसे शहर भेजा है! इस बूढ़े की ठगी मेरी समझ में नहीं आती क्या? काहे की पढ़ाई? कैसी पढ़ाई? यह पढ़ाई जब मैं छोटा था तब कहाँ गई थी। पढ़ाई वढ़ाई की बात ही बकवास है। असल में घरवालों का मुझ पर विश्वास नहीं है। मैं इस घर का कुछ नहीं। देखना हूँ इनका खेल कहाँ तक चलता है।

गुड्डण्णा को पत्नी और बच्चों से कोई लगाव नहीं था। उनके जाने से मानो उसकी बला ही टली पर उसके मन से यह लालसा नहीं गई थी कि घर में रहकर सब कुछ मिल जाना चाहिए। अब तो गाँव वालों का भी उस पर से विश्वास उठ गया। घर में कोई भी उसको अच्छा नहीं लगता था। स्वभाव में चिड़चिड़ापन बढ़ता गया। अपनी बहिन और परस्या पर वह अपनी चिड़चिड़ाहट उतारकर हल्का महसूस करता। पिता के सामने पड़ता ही नहीं था। शामण्णा भी उससे दूर ही रहता। सुब्बक्का के बच्चे

के साथ शहर चले जाने के बाद से शांता की जिम्मेदारी बढ़ गई थी। ·
लिए उसमे ताल ठोककर लडाई करने मे उसे आसानी हो गई थी।

बहिन पर गुडण्णा का गुस्सा रोज-ब रोज बढता ही गया। कालि
के अपने बेटे को लेकर गायब हो जाने के बाद गंगी को जब यह विश्
हो गया कि अब वह नही आएगा तो वह हताश हो गई। अब उसकी स
मे आया कि चाहे जैसा भी था, पति के रहते उसे एक सहारा था।
उसके पति का कोई पता नही। उसे जो जैसे चाहे तग कर सकता था,
देखकर गंगी ने शांता का सहारा लिया। कालिया के प्रति वचनबद्ध हो
शांता ने गंगी को स्नेह से देखा, सहारा दिया। अब गंगी ने रायसाहब
गोठ के पीछे एक छप्पर डाल लिया था और वह वही रहने ल
रायसाहब जब पिछवाडे जाते तो कभी-कभार उनकी नजर उस पर पड
शांता इसलिए जरा घबराई थी। तब रायसाहब कहते, "ये लोग अब
म कहाँ तक आने लगे हैं।" पर उसे अनिवार्य समझ कर उन्होंने स्वय
उधर जाना बद कर दिया। गंगी को सुरक्षा मिली। इस बात ने गुड
के गुस्से को और भडकाया।

गुडण्णा सोचता, पत्नी और बच्चे तो गए! क्या घर मे म उ
किसी तरह का हक नही होना चाहिए? जाने दो, बेकार की जिम्मेद
टली। पर सदा से सहायता के लिए उसका मुह ताकने वाली गंगी भी
उसे देखकर छुआछूत मानने वाली ब्राह्मणी की तरह दूर-दूर
लगी है।

एक दिन वह बहिन पर उबल ही पडा, "उसका सिर मुडवा पर व
पुराण सुनाने क्यो नही ले जाती?" वह जानता था कि यह सब उ
बहिन की कारस्तानी है। इसके लिए उसे जितना भी तग किया ज
तसल्ली नही होगी।

बहिन को चुप देखकर उसने कहा "क्या? उस काम के लिए शाम
को पुरोहित बनना होगा?"

वह बोली, 'भइया, झगडा करना ही है तो हम आपस मे क
बाहर वालो को क्यो बीच मे घसीटते हैं।"

"अच्छा! यानी मुझे शामण्णा का नाम भी नही लेना चाहिए।
शामण्णा बाहर का हो गया?"

"लोगा की दृष्टि से मैंने उन्हें बाहर का कहा। वह व हमारे लिए अपने ही हैं।"

'हाँ, हाँ, हमारे लिए व अपन हैं! इसीलिए तो लोग जो मुह म आय बकते फिरते हैं। क्या मैं नही जानता—शामण्णा तुम्हारे लिए अपना है!'

"भइया! लागा का कहना कोई नई बात है? कोई कुछ भी कहे उससे डरने वाली मैं नही। यह गुण मुझम है। यह मैंने तुमस ही सीखा है।"

तब गुडण्णा गुस्से मे आकर चीखने चिल्लाने लगा, "तुम लाग अपने को मुझसे ज्यादा अक्लमद समझते हो। तुम्ही भले लाग हो। मुझ लफगा समझते हो। मैं तुम्हारे सब खेल समझता हू। मेरी पत्नी और बच्चा को निकाल दिया। अब बदनाम करके मुझे भी बाहर निकाल दो। बाद म घर का मालिक शामण्णा बन जाएगा। इतना करने पर भी मालूम नही वह तुमसे शादी करेगा या नही। तो क्या तुमने यह सब पाठ गगी स सीखा?'

शाता ने कहा, "वह क्या करती? रोती? वह किससे कहे? अपने आपम रोती उसे तसल्ली कौन देता। वह सुबकते सिसकते अपने आपसे कहती 'किसी तरह यह जिंदगी तो काटनी ही है।"

गुडण्णा का क्रोध तो रोज ब रोज बढता ही जाता। सब उससे बचने का यत्न करते। पर कभी-कभी मजबूरी म परस्या उसके सामने पड ही जाता। वह पूछता "कौन है बे तू? परस्या यह सोचकर चुप रह जाता कि मालिक गुस्से म है। गुडण्णा डाटकर कहता, 'कौन है बे तू? कहाँ स आया?" बेचारे परस्या को शरम महसूस होती।

उसे मजबूर होकर कहना पडता 'मैं हूँ मालिक, परस्या, पाव लागू।

गुडण्णा अत्यत आश्चय स कहता, "कौन? परस्या? यानी हमारा वह परस्या! अरे! तू यहाँ कैसे?"

परस्या धीरे धीरे उन बेमतलब की बातो का आदी हो गया। उसने जवाब देना ही बद कर दिया।

'मैं पूछता हूँ, तू यहा कैसे आया?" तू भी कालिया के साथ नही गया? कैसा मूरख है तू! लगता है तू बट स भी हाशियार है। बडा चालाक है तू, क्यों? मालिक के सब बचे खुचे पर हाथ साफ करने का तू पाठ रह गया है।"

एक दिन ऐसे कहा तो परस्या क्या जवाब देता। तब परस्या की चुप्पी से चिढकर आपे से बाहर होता हुआ बोला, "सारी जिंदगी जूठन खान को मुँह बाये रहता था। अब जवाब देने को मुँह नही खुलता।" यह कहते हुए उसने अपने हाथ का बरतन उस बूढे पर दे मारा। परस्या के सामने के दो अगले दात टूट गये और खून बह निकला। उस रात परस्या से खाना न खाया गया।

रायसाहब बोले, "खा भी सुअर मेरे जाने के बाद पता नही यह लोग जूठी पत्तले भी तुझ तक फेंकेंगे या नही।'

तब परस्या बोला, "जबान मे स्वाद नही रहा, मालिक।"

कल शामण्णा को दिखाना। शायद वह कोई दवा दे दें।" यह सुनकर परस्या ने हँसने की कोशिश की पर गाल अकड जान स दद हुआ। इस पर वह बोला, 'मालिक, आप कहा करते थे न, उसी प्रकार यह लकडी का टुकडा सड जाएगा। दवा से क्या बच जाएगा?"

"सभी मुझसे ज्यादा समझदार हो गये।' कहकर बडबडाते हुए रायसाहब वहा से चले गये।

घर म गुस्सा करके गुडण्णा का जी न भरा। घर मे उसके सामने कौन जवाब द सकता था। इस कारण गुडण्णा अपना गुस्सा किसी न किसी बहाने बाहर के लोगो पर दिखाने लगा। गाँव के लागा के सामने उछल-कूद करने लगा। किसी-न-किसी बात को लेकर कभी किसी किसान को डाँटता या कि किसी दूसरे से मार पीट कर लेता। रास्ते म अगर कोई गाय-बैल आ जाता तो उस पर पत्थर फेंकता।

शुरू शुरू मे शामण्णा के लिहाज क कारण लोग चुप थे। पर गुडण्णा यह समझा कि लाग उसके डर से चुप रहते है। अब उसको रोकने-टोकने वाला कोई न था। शाम को घर लौटने वाली या पानी भरन आने वाली औरता पर वह आवाजें कसता, इशारेबाजी करता और धीरे धीरे अश्लील बातें भी कहने लगा। एक दिन शाम को जब घर आ रहा था तब पीछे से दो आदमिया ने आकर मुह मे कपडा ठूसकर खूब ठुकाई की और उसकी धोती तक उतारकर ले गये। इस अपमान से गुडण्णा आग-बबूला हो गया। एक दो दिन तक वह बकता रहा 'मैं जानता हूँ, यह किसकी कारस्तानी है। मैं उस बदमाश का अच्छी तरह पहचानता हूँ, हरामजादा!

सामने से नही आया। पीछे से हमला किया कायरो ने !" पर इस बकवास से किसी पर कोई असर न हुआ।

उसने कुछ लोगों को बताया, "यह सब रामप्पा की करतूत है। वो मेरी जूठन खाकर बडा हुआ है।"

एक दिन सेठ की दुकान के सामने बैठकर बकने लगा, "यह रामी की ही करतूत है। मुझे पक्का विश्वास है। पीछे से आकर मारने वाले मर्द नहीं होते। मैं जानता नही क्या ? इस गाँव मे वह कौन है जो अपनी जोरू तक को रख नही सका !"

उस रात रायसाहब के घर पर बडे-बडे पत्थर गिरे। यह देखकर रायसाहब हक्के-बक्के रह गये। उनके मुह से निकला, 'हे भगवान, यह देखने के लिए जिन्दा रहने से तो अच्छा था, मैं मर ही जाता।'

अगले सप्ताह ही बठे-बैठे रायसाहब के प्राण-पखेरू उड गय। पर जसा उन्होंने चाहा उसी प्रकार उनको जीवन से छुटकारा नही मिला।

एक घटना ऐसी भी घटी जिस पर रायसाहब का कोई वश न था। शामण्णा से बात करके रायसाहब कुछ तसल्ली पाना चाहते थे। इन्ही बातो के दौरान उन्ह देश की कुछ बातें भी मालूम हो जाती थीं। पर उस तरफ आसक्ति न होने से उन्होने उस ओर कभी ध्यान नही दिया था। शामण्णा ने एक दिन रायसाहब को बताया, "रायसाहब, सरकार ने गाधी जी को गिरफ्तार कर लिया।" यह कहकर वह चुप रह गया। उन्होंने आगे कोई प्रश्न ही नही पूछा। शामण्णा के मन में बडी उथल पुथल मची थी। वह बिना बताये रह नही सकता था, वह फिर बोला, 'रायसाहब, मैंने कहा सरकार ने गाधीजी को गिरफ्तार कर लिया।"

तब रायसाहब ने पूछा, "क्यो शामण्णा, कुछ ही दिन पहले तो गाधी जी लदन गये थे न ?'

'इस बार बडी लडाई होने वाली है।'

लडाई ? अब लडाई कहाँ ? इस बार किसके साथ ? अब जर्मनी या रूस के साथ ?'

'हमारे देश ही म, रायसाहब, युद्ध तो हमारे देश म होगा, अंग्रेजो और हमारे बीच।"

"अरे! क्या बात कहते हो शामण्णा ? हम क्या खाकर उनस लडेंगे ?"

"रायसाहब, आप नही जानते। गाधीजी ने अगर एक बार सत्याग्रह शुरू कर दिया तो "

"शामण्णा, बेकार की बातो मे क्यो दिमाग खपाते हो ? हम चुपचाप रहना चाहिए। कितने दिनो मे यह गाधी की बात चल रही है। खाली बातें ही बातें है। और अब यह उपवास ।"

"इस बार उनके पीछे लाखो जेल जाने को तैयार खडे है।'

"हो सकता है। दुनिया म सब प्रकार के लोग होते है।"

"इस बार हर एक गाव म सत्याग्रह करने का निश्चय हो चुका है। इस गाव म भी होगा।"

"क्या भाई ? इस गुड्या न उस बदमाश राम्या के बार म रपट की है और पुलिस आई है। अब ऊपर से यह दूसरा झगडा ।" रायसाहब यह न समझ पाये कि आगे क्या कहना चाहिए। शामण्णा को उनस आगे बात करने की इच्छा न हुई।

अगले दो-तीन दिनो मे ही एक शाम जब रायसाहब मदिर जाने को तैयार थे तभी शामण्णा और शाता सामने दिखाई दिये। रायसाहब चकित रह गये। उन्हे गुस्सा भी आया और बोले, 'यह कैसा अत्याचार ! शाता के माथ पर सिंदूर ? यह क्या, जो बात देखना नही चाहता था वही सामने आयी ! यह कैसी नीति है ? यह कैसा धर्म ?' ये सब बातें उनके मन मे उठी तभी वे "यह सब क्या है ?' कहकर डाटना ही चाहते थे कि माम अटक गई।

'हम दोनो को आशीर्वाद दीजिए।' कहकर शामण्णा ने हाथ जोडे।

तुम्हे कोई धर्म और नीति समझाने वाला नही क्या ?"

"रायसाहब, यही धर्म है। देश सेवा ही आज का धर्म है।'

'ठीक है, लेकिन शाता तुम्हारे साथ क्या है ?'

तब बेटी बोली, "मर लिए भी यही धर्म है।"

शामण्णा बोला, "जो देश जन्म देता है, उसके लिए स्त्री-पुरुष म कोई भेद नही होता है।'

रायसाहब की समझ म कुछ भी नही आया। उन्होंने पूछा, "क्या है ? तुम लोगो ने क्या किया है ?"

"आज शाम को हम दोनो सत्याग्रह करन ..."

'ओं ?" उन्होंने इतना ही कहा था कि उनकी टाँगें काँप उठीं। खड़े रहने की शक्ति जाती रही। तभी पास से गाधीजी का जयघोष सुनाई दिया।

"देर हो गई। आशीर्वाद की बात रहने दीजिए।" कहते हुए शामण्णा ने उनके पाँव छुए। शांता ने भी उसका अनुकरण किया। और दोनों वहाँ से चले गये।

पसीने से ठंडे पड़े रायसाहब के पाँव पर आँसू की एक गरम बूँद पड़ी। पता नहीं वह शामण्णा की थी या शांता की।

प्रश्न पूछने के लिए साँस नहीं, उत्तर देने के लिए शब्द नहीं, रायसाहब वहीं गिर पड़े।

उस रात को पुलिस शामण्णा और शांता को गिरफ्तार कर दूसरे गाँव ले गई।

दूसरे दिन सुबह गाँव वाले रायसाहब की देह अंतिम यात्रा के लिए ले गए।

# 12

अरे! इसे देख तो!" कहते हुए कालिया ने अपने हाथ की पत्रिका उठाई। उसने इधर-उधर देखा, कोई न था। धत्, तेरी की! यह लड़का फिर कहाँ चला गया?' उसने कहा ही था कि सामने से लड़का आता दिखा। कालिया ने अधिकार से पूछा, 'कहाँ गये थे भरमा?'

एक आदमी का बक्सा वहाँ उठाकर ले गया था। दो आने मिले।" कहते हुए भरमा ने अभिमान से दुअन्नी दिखाई।

'धत् तेरी की! तेरी जातिगत विशेषता तेरी रग रग में बसी है।" कहते हुए कालिया मानो अपने आप बड़बड़ाया।

इसका क्या मतलब, बापू?"

'तेरा सिर! मैं कहता हूँ, तू चुपचाप बैठकर पढ़ाई कर। पर तू है कि बार-बार उठकर मजदूरी करने चल देता है।'

"तुम काम नहीं करते ?"

"पगला कहीं का ! तेरी पढाई के लिए ही तो मैं काम करता हूँ। ले इधर देख। देखा, मैंने तुझे बताया था न कि शामण्णा ने मुझे पढना-लिखना सिखाया है ?"

लडके ने कुतूहल से पूछा, "कौनसा शामण्णा ?"

वाह बेटा ! बबई आये अभी चार ही दिन हुए है, इतने म ही ऐसे पूछ रहा है मानो यहीं पैदा हुआ हो। शामण्णा कौन होते, अरे वही हमारे बिट्टर वाले ! मैं बताया करता था न ?"

वे ! वही जो शाता दीदी के साथ काम करते थे ?"

हाँ। अब उन दोना ने एक और बडा काम किया है।"

"क्या ?"

"सत्याग्रह करके जेल गये हैं।" कालिया ने बेटे को बडे अभिमान से हाथ की पत्रिका दिखाई।

कालिया बिट्टूर की याद आते ही गव से फूल उठता। उसने शात जीवन की खोज मे गाव छोडा था, पर वह रोज अपने म एक सूनापन महसूस करता। किसी तरह बबई पहुँच गया था। इधर-उधर भटककर चमडा कमाने का काम उसे मिल गया था। साथ ही उस चमडे से तैयार जूते हर रोज शाम बेचने की एजेंसी भी मिल गई थी। वह काम भरमा को मिलना चाहिए था। मालिक ने भी उसके लिए बहुत प्रयास किया। भरमा को एजेंसी देने से कम कमीशन मे काम चल जाता। लेकिन कालिया नहीं माना।

'भरमा काम करेगा ? पागल हो गया है क्या ? जा बे मूरख। इसी लडके के कारण इतनी दूर भाग आया।" वह बडबडाया। भरमा कोई काम नहीं करेगा। बबई जैसे महानगर म अस्पश्यता जैसी चीज नहीं। भरमा को स्कूल मे दाखिल कराना है। लेकिन कौनसे स्कूल मे ? बेटा कौन सी भाषा पढेगा ? कन्नड का अक्षर-ज्ञान तो वह करा सकता था। अत मे उसने एक बडे स्कूल म बच्चो को पढते देखा। अपने बेटे को भी उसने वही दाखिल करा दिया। वहा की भाषा दूसरी थी। होती भी क्यो न ? खर, पढाई ही मुख्य बात है। भाषा तो केवल साधन है, साध्य प्राप्त करना है। साधन भले ही कसा भी रहे। यही बात कालिया क मन मे घर

किये वठी थी ।

तभी सत्याग्रह शुरू हुआ । रोज जलूस निकलत, रोज लाठा चाज हाता, कभी कभी पुलिस गोली भी चलाती । पास कही भी शारगुल होता ता भरमा उस देखने भागता । कालिया को घवराहट होना । जब बटा उसके लिए प्राणा से भी अधिक प्यारा था । जब भरमा पास न हाना ता उसे ऐसा लगता मानो वेजान हो । जब बेटा पास होता ता कालिया का बिटटूर की याद आती । वटा कुतूहल से प्रश्न पूछता । कालिया उस रोचक ढग से जवाब देता ।

हाथ की पत्रिका पर उँगली रखकर कालिया ने कहा, "दखा, सत्याग्रह करके य दोना जेल चले गए ह ।"

वेटे ने पूछा "तो वापू वहा भी पुलिस इन लोगा का लाठियो से पीटेगी ?

'वहाँ क्या मारेगी ? सारी-की सारी पुलिस वडे बडे शहरा म इकट्ठी हो गई है ।'

सबको मिलकर पुलिस की पिटाई करनी चाहिए ।"

कालिया न गव से कहा 'ता भरमा, तुम बडे वहादुर बनत जा रहे हो । तुम पुलिस की पिटाई की वात कह रहे हो । सत्याग्रह का मतलब क्या है, मालूम है ?'

लडके ने तिरस्कार और बचपने के स्वर म कहा तो चुपचाप खड खडे मार खान का मतलब भला क्या होता ?'

मतलब क्या ? तो क्या तुमने उसे कायरता समझा है ? मारत समय अकडकर चुप खडे हो जाओ तो मारन वाले को ही शरम आती है ।'

भरमा मजाक उडाते हुए बोला "तुम्ही बता रहे थे कही उस गुडण्णा को शरम आई ? '

इस पर कालिया हँसकर बोला, "बित्ते भर का लडका, और बात कसी करता है । साँझ क समय उस गुडण्णा का नाम क्या लेता है ? यह कहकर वह अपन काम म लग गया ।

वास्तव म कालिया को किसी भी समय गुडण्णा को याद करन की इच्छा न थी । गुडण्णा की याद उसके लिए नरक की यातना क समान थी । उस भूलना चाहन पर भी वह भूल नही पाता था । अब ? शामण्णा

और शातक्का जेल गए है। शातक्का ने उसकी पत्नी की देखभाल करने का आश्वासन दिया था। उनके जेल जाने के बाद उसका क्या हुआ होगा? उसने कही पूरी तरह गलत रास्ता तो नही पकड लिया? गुडण्णा केवल उसी का शत्रु नही। ऐस लोग दुनिया भर के शत्रु होते है। ज म ज म क वैरी। बेचारे! बापू का क्या हुआ होगा? कालिया दुखी हुआ। वह जानता था कि उसके भाग आने का सारा गुस्सा बापू पर उतरेगा। पर वह निरुपाय था। बटे के लिए उस ऐसा करना पडा।

कालिया ने बेटे की ओर देखा। बेटा पत्रिका पढ रहा था। वह उसी का बटा है। दस बरस का हो गया है। स्कूल जाता है पढता है। परीक्षा मे पास होगा। बी० ए०, एम० ए० करके बडी नौकरी करेगा। कालिया की आंखो न अपने बट म उस विश्वरूप के दशन किए हाग।

कालिया को अब अपन अस्तित्व तक का भान न था, हर बात म भरमा ही भरमा। भरमा के लिए वह अपना जीवन खपाए जा रहा था। उसने भरमा को हर प्रकार का सुख और सुविधा दी थी, बच्चे का मा की याद तक आने न दी थी।

कालिया ने कभी उसका जिक्र तक नही किया था।

तभी उसने लबी सांस लेकर कहा, 'पता नही बिट्टूर म अब क्या-क्या हो रहा है ?"

रायसाहब के अतिम सस्कार के तुरत बाद गुडण्णा ने सबसे पहले पत्नी और बच्चा को बुलवा भेजा। परस्या उन्हें लाने गया था। आते समय गाडी के पीछे पैदल चलता हुआ आया था।

मुब्बक्का को ससुर यानी मामा की मत्यु से बडा आघात पहुँचा। खबर सुनन ही वह फूट फूटकर रो पडी। बेचारा परस्या क्या सात्वना देता! वह सिर नीचा करके दरवाजे के सामने बठा रहा।

दिल हल्का होने के बाद सूजी आंखो से सुब्बक्का न परस्या को देखा फिर स दु ख उभर आया। उसकी दीन अवस्था को देखकर गत वैभव और अधकारमय भविष्य दोनो सामने आ खडे हुए। उस दिन शाम तक बीच-बीच मे बातें करती और चलने की तैयारी करते हुए वह बेचारी अपने भविष्य के बारे म सोचती रही। वह अच्छी तरह जानती थी कि पति के घर म सुख नही। फिर भी स्त्री के लिए पति का नाम एव आधार है

जो कुछ है, वह चाहे पसद हो या न हो उससे सिर पर छाया ता है ही ? पर सुब्बक्का को पता था कि उस पड की छाया नाम मात्र की है। उसने निश्चय किया कि चाहे कुछ भी हा वह बच्चों को लेकर अलग रहेगी। उनकी पढाई जारी रखेगी। घर चलाने को भले ही उसे नौकरी क्यों न करनी पडे।

अब परस्या ही उसका अपना था। दूसरे दिन रास्त भर वह अपन दिल की बातें उससे करती आई। पर परस्या के एक बार भी हाठ न हिले।

वह बोली, "परस्या, मौका पडा तो कही काम करके घर चलाऊगी पर गाव मे नही रहूँगी।" तब परस्या ने सिर उठाकर उसे देखा। सुब्बक्का उसे दस साल की बच्ची जैसी लगी। उसकी आँखा म आसू आ गए। उसने आँसू छिपाने का यत्न किया पर आसू बह ही निकले। सुब्बक्का को पछतावा हुआ। उसने मन ही मन कहा 'यह उसने क्या कर दिया ? उसका भी दिल दुखा दिया। आग लगे, मेरे जीवन से किसी को भी सख नही। फिर भी वह अपनी उत्सुकता को रोक न पाई। उसने पूछा, "क्यो परस्या, क्या हो गया ?" परस्या न सोचा, आख मे धूल पड गई कह दू ?' पर वह बोला "पता नही क्यो, एकदम मालिक की याद आ गई।' यह कहते हुए उसने लबी सास ली। तब सुब्बक्का ने मन मे सोचा बेचारे को मैंन क्या कह दिया ? फिर उसने पूछा, 'मैंने कुछ कह दिया क्या ?' परस्या ने इकार म सिर हिलाया तो इस तरह क्यो रो पडे ?"

अब वह चुप ही रहा। 'परस्या, अब आगे से तुम्हे अपने मन की मुझसे और मुझे तुमसे कहनी हागी। हमारा और कौन है ?' कहती हुई सुब्बक्का फफक-फफककर रो पडी और उसने पल्लू से मुह ढाप लिया।

परस्या रुआसा होकर बाला नही बेटी, तुम्हारी बाता से मुझ मालिक की याद आई। मारे दुख के परस्या के मुह से शब्द ही नही निकल पा रह थे। फिर भी वह बोला, 'जब तुमने कहा न तब मुझे एक बात याद आ गइ। एक दिन गुड्डण्णा ने कहा था मैं पढने जाऊँगा। तब रायसाहब ने कहा था, पढकर क्या करेगा ? हमारे खानदान के लोग नौकरी करेंगे क्या ? आग परस्या का गला रुँध गया आवाज न निकली।

इसक बाद बिट्टूर पहुँचने तक दोनो मे से कोई न बोला।

छह सात वर्ष का रागण्णा सब सुन रहा था पर उसकी समझ म कुछ न आया और वह गाडी मे ही सो गया।

बिट्टूर पहुँचते तक सुब्बक्का के लिए एक और मुसीबत मुह बाये खडी थी। घर मे गुडण्णा के सिवा कोई न था। गुडण्णा बिस्तर पर पडा था। उसके हाथ-पाव मे दद था और सिर पर पट्टी बँधी थी। सुब्बक्का डर गई, 'क्या हो सकता है?' पति से पूछने मे भी डर लगता था। बिट्टूर से वापस जाने तक भी सुब्बक्का को गुडण्णा के बिस्तर पकडने का कारण पता न चल सका। बिट्टूर से जाते हुए रास्ते मे परस्या से ही पता चला।

वह बोला 'मालकिन, घर म कुछ रौनक ही नही रही।"

सुब्बक्का बिट्टूर छोडकर जाने के कारण बहुत दुखी थी।

बडे मालिक के न रहने से सब उलट-पलट हो रहा है।'

सुब्बक्का कुछ विश्वास से बोली, "हर चीज का एक जमाना होता है, परस्या। उसने किसी को नही छोडा। वह बताकर आता नही और बताकर जाता नही।"

परस्या ने ऊबकर लेकिन हठ से कहा, "अपनी करतूतो से अपना भाग्य बिगाडकर जमाने को दोष देना कोई अच्छी बात है क्या? छोडो सुब्बक्का।'

सुब्बक्का ने उसी की ओर भय भरी दष्टि से देखा।

उसने जरा हठ से ही अपनी बात आग बढाई 'कल की वह वारदात गुडण्णा की वजह से हुई।"

सुब्बक्का ने कुतूहल भरी आँखो से उसकी ओर देखा।

"तुम्हें मालूम है न, सुब्बक्का! सिफ एक दिन जब कोई देखने वाला न था, कि यह सब हो गया। एक दिन के लिए मैं तुम्ह बुलाने गया था। दूसरे दिन ही हम आ गये। उस एक दिन मे इसन यह कमाई की।'

"कही गिर पडे क्या?"

'वह गिरने वाला आदमी है क्या? अगर वही अपने गिरने की बात ही हो तो भी दूसरो से धक्का लगवाता है।'

"तो? किसी से झगड पडे क्या?"

"झगडा-वगडा कैसा? जहाँ गुडण्णा वहाँ झगडा।"

"अरे, अपनी ही गाये जा रहे हो। मैं पूछती हूँ। हुआ क्या ?" अपने को न रोक पाकर सुब्बक्का ने जरा खीझकर ही पूछा।

"मैं क्या बताऊँ बिटिया ! तुम जैसी बिरामन बेटी के सामने 'समझ लो यह हो गया। वह रामप्पा को गालिया बककर आया था। रात को दो जना ने आकर उसकी धुनाई कर दी। मैं कहता हूँ इसे अकेला नहीं छोडना चाहिए।"

'क्या मतलब ?'

'यही कि अगर वह बिट्टूर मे बना रहा तो ठीक नही होगा।"

'बच्चो की पढाई का क्या होगा ? उनके दादा के मन म यही एक बात थी।'

पढाई की जगह कुछ न कुछ करके एक-दो खेत छुडवा लिये जाय ?"

"परस्या, यह सब मरदो के काम है। ये घर मे कैसे रहते हैं, यह तो तुम्हे पता है ही। उन्हे छोड मरद के नाम पर यही एक बच्चा है। मैं औरत हूँ और साथ म बच्ची भी लगी है। गुजारा कैसे करूँ ! ऐसी हालत मे हम जसा का पढ लिखकर नौकरी करना ही भला है। तुम्हारा क्या ख्याल है ?

मै क्या कह सकता हूँ, मूरख चमार ! लेकिन गुडण्णा को अकेला छोडना मुझे कुछ वाजिब नही लगता।"

चार दिन देखते हैं। अगर उन्हे अक्ल आ जाय तो साथ ही रहेगे। जिसके पल्ले बँध गई हूँ उसे छोडने से कैसे चलेगा ?"

घर गृहस्थी के बारे मे बाते करते कराते रास्ता कट गया। अन्त म एक प्रसग आने पर परस्या बोला 'सुब्बक्का, तुम्हारा क्या ख्याल है ? इस गुडण्णा को कभी अक्ल आएगी ?

छोडो भी बेवकूफी की बातें मत करो।" सुब्बक्का ने उसे मजाक से झिडकी दी। बहुत दिन बाद दोनो पहली बार हँसे।

गुडण्णा को अक्ल आये यह बात चाहने वालो म कालिया भी एक था। पर उसके सोचने का ढग कुछ और ही था। शामण्णा और शाता के सत्याग्रह की खबर सुनकर कालिया सोच रहा था कि बिट्टूर म और क्या क्या हो रहा होगा ? इन्ही बाता के सिलसिले म कालिया को गुडण्णा

की याद आई। जब यह भरमा जितना था और गुडण्णा उससे तीन-चार बरस छोटा था तब वे दोनो मिलकर खेला करते थे। उसी बचपन के खेलो मे कालिया को यह महसूस हुआ कि यह अछूत है। भरमा को देखने पर कालिया को वह सब याद आ गया। लबी सास लेकर कालिया सोचता 'अगर गुडण्णा ढग से रहता तो दोनो मिलकर सत्याग्रह कर सकते थे। अगर पुलिस उसे जेल म डाल देती तो वह क्या करता ? क्या चुप रहता ? शामण्णा के साथ मिलकर सत्याग्रह न करता ?

कभी-कभी य बातें सोचते सोचते कालिया का सिर घूम जाता, 'अगर गुडण्णा मे अक्ल होती तो वह वही बना रहता। इसका मतलब यह हुआ कि उसकी दुप्टता से उसे लाभ नही हुआ ? छि ! यह कैसी बात ? यह सोचकर वह सिर झटक देता। यदि वह बिटटूर मे बना रहता तो उसके बेटे का क्या बनता !'

कालिया को कभी कभी विषाद घेर लेता। भरमा की मा होती तो कितनी मुसीबत हो जाती ? माँ होती क्या मतलब ? अभी तो है न ? पर उससे क्या फायदा ? बेटा उसे मा कहकर चार आदमियो के बीच छाती तानकर चल सके, ऐसी मा होती तो बात थी। अगर गुडण्णा को इतनी सदबुद्धि होती ता उसका घर कितनी आसानी से चलता ?"

"आसानी क्या खाक ?" कहकर वह अपने आप तिरस्कार से हँसता। होलेय होकर उसका पैदा होना ही गलत था। जब से वह उस जाति मे पैदा हुआ तभी से गाडी गलत रास्ते पर चल पडी। जब तक यह बात रहेगी किसी का सद्बुद्धि आने से फायदा ?'

पर शामण्णा तो बडे आदमी है।

"क्या रे भरमा ?'

पिता के प्रश्न से भरमा चौक पडा क्योकि वह समझा नही किस सन्दर्भ मे प्रश्न पूछा गया है।

'क्या बात है बापू ?' भरमा ने जरा घबराहट से कहा। यह सुनकर मानो कालिया को होश आया। वह जोर से हँस पडा। अकेला हो जाने स बठे-बठे मेरा ध्यान गाव की ओर चला गया।

"तुम्हे सदा गाव की बात ही याद आती रहती है। इस बबई से अच्छा था क्या बिटटूर ?'

"अच्छा था ? शाबाश बेटा ! यह मुझसे पूछ रहा है ? यानी तू अब उसे इतना भूल गया ?

"नीद मे उठा कर ले आये । मुझे तो सिर्फ यही बात याद है ।"

"बाप रे ! इसका तो मतलब यह हुआ कि तुझे बडा होकर हमारी याद भी नही रहेगी ।"

खुशी से और गर्व से भरमा का मुह खिल उठा । पिता रोज यही बात कहा करता था । अत वह जरूर बडा आदमी बनेगा । उसने कुछ ही दिनो मे बडा बनने का निश्चय किया ।

अब कालिया ने एक कमरा किराये पर ले रखा है । सुबह से शाम तक जी तोडकर मेहनत करता है । कमरा लेने के बाद उसने एक जून खाना छोड दिया । भरमा के लिए दोनो वक्त खाना और एक बार चाय । उसे देखकर बाप को ऐसा लगता मानो उसका अपना पेट भर गया हो । बेटे को पढाना चाहिए । कुछ भी हो, उसमे किसी प्रकार की बाधा नही आनी चाहिए । उसे पढ लिखकर बडा आदमी बनना चाहिए । किसी को ऐसा स्वप्न म भी महसूस नही होना चाहिए कि वह होलेय है । बेटे को बडी से-बडी नौकरी मिलनी चाहिए । यदि इतना हो गया तो कालिया न सोचा कि उसका जन्म सार्थक होगा । कभी-कभार बेटा काम मे हाथ बँटाने आता तो बाप उसे मना कर देता ।

भरमा कहता "जरा जल्दी खत्म हो जाय इसीलिए मैं आया हूँ ।'

कालिया अपना तर्क देता, जल्दी ! मैं ही जल्दी खत्म कर देता हूँ । तू क्या हाथ डालता है ?'

भरमा हसते हुए पूछता 'इसमे क्या गलती हो गई ?"

तुझे आगे चलकर पता चलेगा । एक बार हाथ लगाया तो खत्म ही समझ । हाथ से मेहनत करने वाली जाति ही दूसरी होती है । और पढे-लिखो की जाति ही दूसरी ।'

भरमा को अपने बारे मे और थोडा बहुत पिता के बारे म अभिमान उत्पन्न हुआ ।

कालिया का एक पक्का विश्वास था कि हाथ से मेहनत करने वाले छोटी जाति के होते हैं । यदि कोई इसे उसकी मूर्खता कहता तो वह तार्किक की भाँति वाद विवाद से हरा ही देता । वह कहता "देखिए, मैं

हाथ से मेहनत करता हूँ। इसलिए आपने मेरी बात का मजाक उड़ाया। आपने मुझे मूर्ख कहा। इसमें आपकी गलती नहीं। मैं जब से पैदा हुआ तभी से जानता हूँ। मैंने होलेय बनकर मेहनत की, मालिक बनकर उन्होंने मुझसे मेहनत कराई। इसमें तकरार की क्या बात है? अब बात समझ में आ गई है। मेरा बेटा पढ़ेगा, अब उसे आगे हाथ से मेहनत करने का मौका ही नहीं आएगा। हमें अपनी गलती आप सुधारनी चाहिए या नहीं।'

'बेटे के लिए शरीर को घिसाना उसके लिए प्रसन्नता की बात थी। कई तरह के बहाने बनाकर वह बेटे के लिए मेहनत करता। उसके कपड़े साफ सुथरे हों इसलिए कपड़ों को अच्छी तरह साबुन से धोकर सुखाता। यह काम करने में वह अपने में एक अभिमान का अनुभव करता। धीरे-धीरे कमरे में ही बेटे को ऊँचा स्थान मिलने लगा। जिस चीज को भरमा मांगता कालिया वही उसे देता। उसे भरमा अपना हक समझकर स्वीकार करता। कभी-कभी वह पिता पर गुस्सा करता। कालिया दुखी होकर मुंह लटका लेता।

"हाँ, तुम्हारा कहना ही ठीक है।" कहकर छोटे बच्चे की तरह वह चुप रह जाता। तब भरमा अपने व्यवहार पर लज्जित होकर बात खत्म करने को 'रहने दो बापू' कह देता।

वह साफ-साफ कहता, 'मैंने कहा न? यूं पैदा होने से ही यह मूर्खता मुझमें है।' तब भरमा को यह बात अच्छी न लगती। वह यह बताना पसंद न करता कि वह होलेय के घर में पैदा हुआ है।

वह अधिकार और हठ से कहता, "रहने दो बापू।"

बाप-बेटे दोनों विट्टूर को भूलने का प्रयास कर रहे थे।

बच्चों के लिए ही शरीर को खपा देने वाली गुरुवक्का अब नजर में आ गई थी। रामण्णा अभी छोटा है। वह बड़ा होकर बुढ़ापे में उसका आधार बनेगा? तब तक वह जिएगी भी या नहीं? फिर वह अपने को आश्वस्त करती—मरना नहीं है मुझे, नहीं तो बच्चों की क्या दशा होगी? कम से कम रामण्णा छोटी मोटी नौकरी करने लायक तो हो जाए। नागी की शादी हो जाय तो वह निश्चिन्त होकर आँखें मूँद सकती है। इस बारे में बहुत सोचते रहने से यह बात उसके जीवन का ही एक अंग बन गई थी। तभी

एक और विचार भी आता। वह कहती, 'बेटे की नौकरी लग जाय और बेटी की शादी हो जाय और वह सुहागिन ही मरे, बस इतना ही चाहिए।' यह बात दिमाग में उठते ही वह लंबी सांस लेकर कहती, 'यह औरत का जीवन भी क्या है? मरी जैसी औरत भी सुहागिन रहते मृत्यु चाहती है! मैंने जीवन में कौनसा सुख देखा और कौनसा सुख देखने वाली हूँ! फिर भी सुहाग की लालसा? औरत के लिए और कोई आधार भी तो नहीं।' पर जब वह बच्चा को देखती तब उसे लगता कि कोई आधार है। तब उदासी की जगह तसल्ली की भावना आ जाती, 'अरे! इस समय तो इनके लिए मैं ही आधार हूँ।' कहकर अपने विचार पर स्वयं मुस्कराती और काम में लग जाती।

बेटे को पढ़ाना चाहिए। पढ़ाना कोई बड़ा प्रश्न नहीं, पर उसे जल्दी पढ़ना चाहिए, और उतनी ही जल्दी नौकरी भी लगनी चाहिए। सुबह शाम दोनों वक्त पेट भर खाना मिल जाय यही बहुत है। कमाना और बचाना, मरने के बाद यह सब साथ थोड़े ही जाता है।

मुव्वक्का के यही चार वेद थे। एक से रहा तो दूसरे से उसे तसल्ली मिलती। दिन बीतते बीतते ये बातें उसके स्वभाव का अंग बन गई थीं। उसके आचरण में भी यही बातें दिखाई पड़ने लगी थीं।

मां और मामा दोनों चले गये। और कोई अपना नहीं, पति भी ऐसा है। उससे दूर रहने में ही भलाई है। बच्चे छोटे हैं वह अकेली है। यह सोचते ही मुव्वक्का फिर घबरा उठती। आदमी को कोई न कोई बीमारी तो लगी ही रहती है। यदि वह बीमार पड़ जाय तो उसके बच्चों को मुट्ठी भर भात पकाकर देने वाला भी कौन है?

हताश होकर कहती, 'भगवान है, वह सब सँभालेगा। उसी ने पैदा किया है वही सँभालेगा।' यह वह ऐसे कहती मानो भगवान को ही याद दिला रही हो।

जब मन बहुत दुखी हो जाता और उद्विग्न हो उठती तो कहती, 'पता नहीं मन में शांति जैसी कोई चीज नहीं। ऐसा क्यों होता है? पता नहीं क्या होने वाला है? दाईं आँख फड़क रही है।'

मुव्वक्का के हृदय की घबराहट और बढ़ने लगी। वह खीझकर बोली, 'आग लगे इस घबराहट को।'

उसका हृदय सदा यही कहता, बच्चा को अनाथ नही होना चाहिए। वह सुहागिन ही मरने की इच्छा स जीती थी।

अत म बच्चा के प्यार की विजय हुई।

एक दिन परस्या आया। उसने बताया, "बिटिया, अब कुछ भी बाकी नही रहा।" वह दोना बच्चा को गले लगाकर रोने लगी। सुबक्का का सौभाग्य सिंदूर पुछ गया था।

# 13

गुडण्णा ने मरने मे भी नाम कमाया। बिट्टूर ही नही बल्कि चारा ओर के दस कोस तक के गावो म कभी किसी ने ऐसा अमानुपिक हत्याकाड नही देखा था। गुडण्णा की हत्या की बात सारे जिले भर मे फल गई। पता नहीं, कहा की पुलिस आई सारे गाँव वालो से प्रश्नो की झडी लगा दी। लेकिन उन्ह कत्ल के बारे मे कोई सुराग न मिला।

एक सुबह गुडण्णा दिखाई न पडा। इस बात पर किसी को आश्चय नही हुआ। कुछ लोगो ने सोचा शायद शहर गया होगा। वह औरत को छोडकर रह पाने वाला आदमी नही। आज कल मे आ जाएगा। उसकी अनुपस्थिति किसी को खली नही। पर उस शाम खेत से लौटने वाले किसी ने या किसी राहगीर ने पेड से लटका एक धड देखा। दोना बगला मे से रस्सी निकालकर धड को लटका दिया गया था। उसका सिर नही था और नीचे पाव भी न थे। लोगो की भीड इकट्ठी हो गई। अगले दिन सुबह पुलिस आई। यह भी पता न चला कि उसे पहले किसने देखा। आसपास ढूढने पर पुलिस को दूसरे अग भी मिल गये। गाव वाला न गुडण्णा के शव को पहचान लिया।

सुब्बक्का के बच्चो समेत बिट्टूर पहुँचने तक पचनामा करके शव को जला दिया गया था। भाग्य से उसे विस्तार से घटना मालूम नही हुई। किसी तरह यह खबर शामण्णा तक पहुँची। शायद किसी अधिकारी ने बताया होगा। शामण्णा ग्यारह दिन की पैरोल पर जेल से आया।

साहब की मृत्यु से लेकर अब तक की सारी बातें उसे मालूम हुइ। वह यह न समझ सका कि अब क्या करे। तब तक पुलिस दो-तीन बार आ चुकी थी। किसी की बात सुनकर पुलिस ने परस्या और गगी को तग किया था। शामण्णा ने उन दोना को सात्वना दी। गुडण्णा की अतिम क्रियाएँ निबटाने के बाद ही तो अगली बातें सोचनी थी।

अब सुब्बक्का का प्रश्न सामने आया। शामण्णा ने सोचा, उसका शहर मे रहना ही ठीक है क्योकि घर सेठ के पास गिरवी पडा था। समस्या सुब्बक्का के खच की थी। उसे खच भर को मिल जाए तो काफी था। उसने सुब्बक्का को सब सामान पहुँचाने की जिम्मेदारी ली। रायसाहब न काफी कज की बात कही थी। परतु किसी रूप म बच्चा को पढान की उनकी इच्छा थी। शामण्णा न समझाया, "अब ये सब बातें रहने दीजिए। रोने से कुछ नही बनता।' अत मे उसने सारी व्यवस्था करके सुब्बक्का और बच्चा को शहर भेज दिया।

अब एक बात उसके ध्यान मे आई। रामप्पा गाव मे नही था। उसके बारे मे गाँव वाला ने पुलिस को एक शब्द भी नही बताया था। शामण्णा ने भी कोई बात न उठाई। वह चुपचाप अवधि समाप्त होते ही पुलिस के सामने हाजिर हो गया।

शामण्णा और शाता जेल से छूटे कि नही? या वे दोनो उसे भूल ही गये। सुब्बक्का यही सोच रही थी। अब उसे कोई अपना सलाह दन वाला चाहिए। जेवर अपनी बेटी और बेटे के लिए बचाकर रखन चाहिएँ या बच्चा के पालने-पोसने और शिक्षा के लिए खच कर देन चाहिए? पर उसके स्त्री-हृदय ने किसी रूप म खानदानी जेवरा को बचाकर बच्चा के लिए रखने की बात सोची।

पर माँ के मन ने सोचा यह किसके लिए? घर मे खान को तो है नही। दिन भी काटने हैं। इसे रखकर क्या करना है?

मन में सघष चलता रहा। निणय लेने को किसी की सलाह की जरूरत थी। कोई यह बताने वाला चाहिए था कि बेचन म काई बुराई नही। पर सलाह दने वाला था कौन? वैसे जरूरत किसकी थी? शामण्णा ने बताया नही था कि उसके ससुर की इच्छा क्या थी? अत म उसने जेवर

बेच दने का निश्चय किया।

वह सारे जेवर सामने रखकर रोई।

चौदह वर्ष पुरानी कहानी ! आज के युवक—बी० राम (भरमप्पा) और रागण्णा की यह कहानी कैसे मालूम हो सकती है ?

ऊपर उठती पाच छ फुट ऊँची लहरो को देखकर कौन कह सकता है कि अतुल समुद्र को जानता है ?

एक क्षण जी कर दूसरे क्षण ही मुरझा जाने वाला प्राणी सतत चलने वाली सष्टि को कैसे समझ सकता है ?

अपने को जिस बिट्टूर की याद थी उसी को असली बिटटूर मानकर बी० राम ने कहा था, "मैं बिट्टूर को अच्छी तरह जानता हूँ।"

रागण्णा को यह आश्चय था कि उसके सुख-दुख की भूमि बिटटूर को दूसरा कस जान सकता है ? पर दोनो यह न जानते थे कि बिटटूर सतत है प्रवहमान है।

अपनी उँगलियो पर दिखाई देन वाली पसीने की बूदा का सष्टि कहा जा सकता है ? इस सृष्टि म सतत परिवतन होने पर उनका बोध नही होता। ससार ही मूल प्रकृति का स्वरूप है।

तब सुब्बक्का की समझ मे कुछ आया। पर इतनी गहरी बातें कौन समझ पाता है ? उसने सोचा, हमारी स्थिति कहा-से-कहा आ पहुँची ?

पर एक सदेह मन मे उठा ! क्या कोई परिवतन हुआ ?

रायसाहब की छवि रागण्णा के मुख पर है।

सरस्वती की छाया सरसू के मुख पर विद्यमान है।

अत मे सुब्बक्का ने खीझकर यह सोचा, इस कमबख्त जीवन मे कुछ नही बदलता।
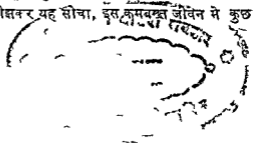
# पुरुष

क्या भगवान है ?

यह प्रश्न बहुत बडा है, पूछने वाली भी छोटी नही।

यह प्रश्न पूछने वाली स्वयं सुब्बक्का है, रघुनाथ राय की बहू, गुडण्णा की पत्नी, दो बच्चो की ज़िम्मेदारी सँभालन वाली विधवा, जिसन अभी तीस भी पार नही किय है। उसन किसी जमाने मे वभव देखा था। पर अब घर बार बेचकर अवास्थिति को पहुँच चुकी है। वही सुब्बक्का यह पूछ रही है।

सदा के समान लोग कहते हैं 'जब से दुनिया पैदा हुई, शायद एक की कही बात दूसरा सुनता आ रहा है। भगवान है।'

किसके लिए ? किस लिए ?

जन्म से ही निरतर कष्ट और वेदनाओ से ग्रस्त सुब्बक्का का यह कहने से विश्वास नही होता। सब कष्टो स बडी भी एक चीज ह, और वह है देव। नाम भला नाम रखन भर स ही क्या वह वस्तु, जो है ही नहीं, अस्तित्व मे आ जाती है ?

इस तक को जिस तरफ चाहे ले जा सकते हैं। सुब्बक्का की स्थिति म यह एसा ही था।

रागण्णा चार दिन से बुखार से तप रहा है। लोग उसे विषम ज्वर कहते है। लडके को होश नही है, मुह पर कांति नही है, होठ सूख है। आखें बद हैं। बटे की इस स्थिति का दखन पर माँ का कलेजा मुह का आता है और दिल धडकन लगता है। अबोध छोटे बच्चे को और वह भी उसके अपने जाये बच्चे को ऐसी यातना क्या ? इसलिए सुब्बक्का साफ कहती है, "भगवान है ही नही।"

दूसरे ही क्षण सुब्बक्का भगवान पर भीतर-ही भीतर अपने अविश्वास पर शरमाती है। क्या वह भगवान पर विश्वास रखकर यह नही सोच रही है कि बेटा ठीक हो जाएगा। वैद्य नही, डाक्टर नही, कोई दवा-दारू नही। और यह सब हो भी तो कैसे, इसके लिए पैसे कहा ?

'भगवान ही ठीक करेंगे।' वह यही विश्वास लिए बैठी है।

रागण्णा बुखार की तेजी के कारण आँखें मूदे पडा है। सुब्बक्का को डर लगता है। वह बार-बार उसकी नाक के आगे हाथ रखकर देखती। सास देखकर जरा तसल्ली होती। माँ की पीठ से चिपकी बच्ची यह सब कुतूहल से देखती रही। उसने पूछा, 'यह क्या कर रही हो माँ ?"

'ऐसे देखने से यह पता चलता है कि बुखार कम हो गया या नही।" सुब्बक्का ने यह बात बच्ची को तसल्ली देने को कही।

कैसे ? मुझे भी दिखाओ। देखू तो ? कैसे हाथ रखते हैं ? ऐसे ? इससे क्या होता है ?' बच्ची प्रश्नो की झडी लगा देती।

कितनी देर झूठी तसल्ली दी जा सकती है ? फिर भी सुब्बक्का कुछ-न-कुछ कहती जाती "देखा, सास गम लगती है न ? कल इससे भी ज्यादा गम थी। आज बुखार कम है।'

पता नही बच्ची समझी या नही। पर उसे जरा तसल्ली हुई। सरसी जरा जरा-सी देर मे आकर नाक के सामने हाथ रखकर देखती और कहती

'माँ, देखा, अब गरम नही, माँ देखो, अब एकदम गरम नही, माँ देखो सास ही नही चल रही है।'

सुब्बक्का एकदम घबराकर देखती और कहती, 'पगली है, यह इतना भी नही जानती कब क्या कहना चाहिए।' पर मन म वह भी डर जाती है। फिर अपने को तसल्ली देते हुए कहती है, 'बच्ची ही तो है ! इसके कहने म कुछ थोडे ही हो जाएगा !"

बिस्तर पर पडे रागण्णा की बगल म कई बार वह पत्थर की मूर्ति सी बैठकर बच्चे को एकटक निहारा करती। ऐसे समय म कभी-कभी सुब्बक्का एकदम वर्तमान को भूल जाती और चुपचाप पडे बेटे के मुख को देखती रहती। यह भगवान का क्या खेल है ! मेरे पेट से जन्मा बच्चा मेरे सामने एेसे तडप रहा है। पैदा होते समय कितने जोर से रोया था और

अव कमा चुपचाप पडा है।" यह सोचती हुई सुब्बक्का थूक निगलती और रागण्णा के माथे पर हाथ रखती, उसका सिर सहलाती।

बच्चे को देखते देखते उसके बचपन के चित्र मा की आखो के सामने घूमने लगते।

पहले पहल डग भरते हुए कितना शोर मचाता था। घुटनो के बल इतनी तेजी से चलता कि घुटने ही छिल जाते थे।

रागण्णा दूसरे बच्चो की अपेक्षा जल्दी चलना सीख गया था। वैसे उसके दूसरे बच्चे भी कुछ जल्दी ही चलना सीखे थे।

पहले दिन खडे होने की कोशिश की तो धप से गिरा था और कितनी जोर से चोट लगी थी? मेरी तरफ देखकर जानबूझकर दो तीन बार गिरा था, शतान!

सुब्बक्का कभी कभी सोचती, बच्चा के बडे होने म कितनी आफतें आती है। लकिन पदा होने वाले बडे होते ही है, गिरते है, लडखडाते हैं, मुह क बल गिरते हैं। यह सब शायद मजबूत होने के लिए ही होता होगा।

ऐसे म ही कभी-कभी यह विचार भी कौंध जाता। शायद बच्चे बीमार भी इसीलिए पडते होगे, ताकि बडे होने पर मजबूत हो जाएँ।

तब लबी सी सास लेकर कहती "भगवान की सष्टि विचित्र है।'

पीठ पीछे गले मे बाहें डालकर चिपकी सरसी की ओर जब माँ का ध्यान म गया तो उसने धीरे से उसे खीचकर गोद मे लिटा लिया ताकि उसके विचार क्रम मे बाधा न आने पाए।

सुब्बक्का शामण्णा और शाता को ही अपना सहारा मानती थी। पर बहुत दिन से उनका समाचार नही मिला था। जब वह महसूस करती कि उसका कोई नही तो शाता को अपना समझकर उसी को याद कर लेती। उसी के साथ पली-बढी जो थी। मामा की लडकी, अपनी सगी ननद मा की सगी भतीजी इस प्रकार उसके साथ अनक सबध याद करके सुब्बक्का को और भी तसल्ली होती। उसे लगता, उसके अपने काफी रिश्तेदार है। और भला ऐसा क्या न सोचती? शाता का स्वभाव ही ऐसा है। वह कम बोलती है पर बहुत काम करती है हर काम म आगे आगे। शाता न एक बुद्धिमानी की उसने पढना लिखना सीख लिया। अगर वह भी पढ लेती ? हा, अगर वह भी पढ जाती तो उसने बच्चा को कितना

लाभ होता ।

बार बार वह लबी सांस लेकर कहती, भगवान की सष्टि अगाध है। शाता बहुत चुस्त है, पर अपनी चुस्ती का क्या उपयोग कर, उस बेचारी के बच्चे ही नही। उसके बच्चे है पर वह इतनी चुस्त नही, जिससे उसके बच्चा को लाभ हो सके ।

अगर अब भी पढले ? अभी वह तीस बरस की भी नहीं हुइ। लेकिन उसकी जैसी औरत इस उम्र मे पढना शुरू करे तो लोग क्या कहग ?

शामण्णा भी तो पढा सकते हैं। पर शामण्णा की कोई खबर ही नही, शाता का भी कुछ पता नही। उन दोनो की याद आन पर सुब्बक्का को बडा आनन्द मिलता। शामण्णा और शाता, य दोनो नाम है जो अक्सर उसकी जुबान पर एक साथ आते हैं ।

पता नही कैसे-कसे विचार उस पर हावी हो जाते। एक दार्शनिक के समान वह यह कहकर अपन को तसल्ली देती कि किसी के बार म मनुष्य क्या कह सकता है। कहाँ शामण्णा और कहाँ शाता ? दोना का क्या मुका बला ? पता नही, वह किस गाँव स यहा आकर बस गया था ? वह भी पति खोकर, अब तक उससे अपरिचित रही, दोनो एक जगह मिल ।

अरे, मामा जी कहा करत थे न कि लकडी के दो टुकडे कहा से तरते हुए आकर मिल जात है फिर अलग-अलग तैरते हुए चले जात है ।

पर सुब्बक्का को लगता, यह बात दूसरी है । पुरुष और स्त्री कही न-कही मिल तो सकते हैं लेकिन उनका फिर अलग-अलग हो जाना ? यह गुत्थी सुब्बक्का की समझ म नही आती। एक बार मिले स्त्री पुरुष के फिर स अलग होने की कल्पना उसके मन म उभरती आक्कलिग [1] जाति म ऐसा कर देत है।' यह विचार आते ही उसे वही झटकन का यत्न करती।

पर ? सुब्बक्का को डर लगता। ऐसे ऐसे विचार क्या दिमाग मे उठ रहे हैं ? हाँ, शाता की याद आई थी न ?

वह अपने आपको कोसती अरे, 'मैं भी कभी पागल हूँ ! क्या पति क साथ मेरी अक्ल भी चली गई ?'

1 किसाना म एक जाति। उत्तर भारत के जाट क समान।

शाता जैसी लडकी के बारे मे मैं क्या सोचने लगी ?

उन दोनो के बीच ऐसा कुछ नही होगा ।

शामण्णा ऐसा आदमी नही लगता अब अपने पति का चित्र सुब्बक्का के सामने उभरा । उसने सोचा, शामण्णा ऐसा बेशम आदमी नही ।

असल म शाता अभी छोटी है । शादी तो हुई पर उसने एक दिन भी पति का सुख नही देखा ।

सुब्बक्का को स्वय मालूम नही था कि पति का सुख क्या होता है । पति के साथ इस प्रकार रहना क्या पति का सुख है ?

बच्चे पदा कर लेना ही क्या पति का सुख है ?

जो पदा होता है, वह बढता भी है ही । पर क्या बढना ही सुख है ?

सुब्बक्का सोचती, उसके दिमाग मे ऐसे विचार क्यो उठते है ? पर विचार उसका पीछा नही छोडते थे । उस यह विश्वास था कि इन प्रश्नो का उत्तर ढूढना सभव नही । पर इन प्रश्ना के पूछने के शब्द बदल जात तो ऐसी तसल्ली महसूस हाती मानो उत्तर मिल गया हो ।

जब वह यही बात दुख से याद करती कि शाता को पति का सुख नही मिला तो फिर उसके मन म यह सदेह उठता क्या शामण्णा के साथ कुछ हो गया हागा ।

सदेह नही । मन म यह इच्छा होती अगर कुछ हो ही जाय ता बुरा क्या है ?

लेकिन यह पाप है । छि ! छि ! एसा पाप शाता से कर पाना सभव नहीं ।

यह क्यो पगली की तरह उल्टे-सीधे विचार मन म ला रही है ।

सु बक्का के दिमाग मे अजीब-अजीब से विचार उठा करते। उसने जब भी यह सोचा कि उसका अपना कोई नही तभी शाता और शामण्णा का उसे ध्यान आया । तभी से ये उल्टे सीधे विचार उसके दिमाग म आन लगे।

लेकिन कभी कभी उसे लगता कि केवल वह याद ही इस मानसिक स्थिति का कारण नही । उसके प्रतिदिन के अनुभव इसका कारण हो सकते हैं ? क्या वह ऐसी दु स्थिति मे पहुँच गई कि आखा से देख दूसरा का सुख

भी सहन न कर सके ?

ऐसे मौके पर सुब्बक्का की आँखें भर आती और उसे उनमे जलन महसूस होने लगती।

क्या उसकी मानसिक स्थिति ऐसी हो गई कि वह दूसरो का सुख सहन न कर सके ?

तब उसके पुराने अनुभव उसकी आँखो के सामने आ खडे होते।

अपने सगे मामा के घर मे रहने की यादें ! कसी सुखद यादें ! पिता को तो दखा ही नही ! उन्हे खान का दुख भी नही था। जन्म से ही मा और मामा की याद ! साथ ही गुडण्णा—वह भी एक याद मात्र ही थी। वभव से भरा घर ! गाय-भैंस, ढेरो घी-दूध नौकर चाकर—सुब्बक्का का बचपन स्वग सा था। उसने कसा सुखी जीवन खो दिया था। क्या उसके हिस्से का सुख वही समाप्त हो गया था। यही नही, खेलने कूदने को साथी भी थे। किसी बात की कमी न थी। ज्यो-ज्यो बडी हुई उसने शाता को अपनी बहिन ही समझा। जिस घर म पली वही ससुराल बन गया। सगे मामा रघुनाथराय ही ससुर बने, माँ सरस्वती ने ही शादी के बाद सास की तरह घर-गृहस्थी का पाठ पढाया। जिस घर की वहू बनी थी उसी घर की जिद्दी बेटी भी थी।

सुब्बक्का ज्यो ज्यो याद करती त्यो-त्यो पुराने दिन उसकी आँखो के सामने आ खडे होते। लेकिन अत मे आकर अब यह स्थिति ! जिस घर म पली बढी और जहाँ शादी हुई उसी को अपना न कहकर और अत मे छोड कर आने की स्थिति ! आने जाने वाला को मुक्त हस्त से देने वाला हाथ अब दूसरो के सामने फलाने की नौबत आ गई है ! क्या इस दुनिया मे इतना अन्याय हो सकता है ? उसन जो सुख देखा था वह एक सजा के समान लगता। उसने पूव जन्म मे ऐसा कौनसा पाप किया था ? क्या बाद मे आन वाले दुख को पूण रूप मे समझने के लिए ही भगवान न उसे सुख दिया था ? वह भी कोई बात नही। दुख के समुद्र मे डूबी रहे तो भी एक तसल्ली रहती है। पर भगवान न वह समाधान भी तो नही दिया। उसकी स्थिति तो पिंजरे म फँसे चूहे के समान है। केवल चूहा पिंजर म फँसा है पर पास मे ऊधम मचाने वाले बच्चो को देखकर और घबराता है। उसकी स्थिति भी ऐसी ही है। आँखो क सामने लोगो का सुख दिखाई

दे और पास ही म उस दुख के पिंजरे म फँसा दिया जाए तो भला वह कस सहन करेगी ? ऐसी स्थिति म दूसरा की स्वतन्त्रता और भी अखरती है।

सुब्बक्का क मन म जब इस प्रकार क विचार आते है तो उस लगता कि दूसरो का सुख दखकर उस क्यो डाह होती है। शायद दूसरा का सुखी जीवन देखकर कुढत रहना ही उसके भाग्य म बदा है। दूर स देखना, उनके सुख म भाग न लेते हुए दखना, यही उसकी नियति है। कोई उपाय भी तो नही है उसके पास एसी स्थिति से बचने का। यह उनके घर की नौकरानी है। दूर से ही उनके घर का सुख देख सकती है ? यह उनके घर की रसोई बनानेवाली है। उनके वभव का शताश भी उसके भाग्य म नही है।

साहूकार रघुनाथराय की भाजी, रायसाहब की इकलौती बहू आज दूसरे के घर म रसोई का काम करती है।

बच्चो स भी कौनसा सुख है ?

बच्चा के लिए ही तो वह शिवप्पा नायक के घर म रसोई का काम कर रही है।

## 2

बच्चा स क्या सुख है—यह प्रश्न कालिया के सामन नही था। वह कभी-कभी अपने आपस कहता, 'भरमा न होता ता शायद मैं फासी लगाकर मर जाता।' कालिया को दिन भर मे एक बार भी पेट भर खाना नही मिलता। लकिन उसस क्या होता है ? न मिला तो क्या हुआ ? शाम को स्कूल से आये भरमा को आँख भर कर देखने स ही उसका पेट भर जाता है। कभी कभी कालिया को आश्चय होता। बिट्टूर मे रहत उसन अपने बापू स कई बार सुना था 'पढाई ता बिरामना के लिए है।' इस वह बात सत्य लगती थी। दूसरा को पढाई लिखाई सीखने क लिए समय भी कहा ? कालिया का अपने बापू की याद आई। सुबह उठत ही साहूकार के घर के सामने और आसपास की गलिया म झाड़ू देना। बाद म सा

के घर का वासी खाना खाना। उसे खाकर निवटते ही लकडी चीरन का काम तयार रहता। उसे खत्म करके दोपहर को वापस झापडी मे जाना। वहा भी कुछ न कुछ काम रहता ही था। वाद म साहूकार के घर के सामने किसी काम की प्रतीक्षा म बैठे रहना। पता नही साहूकार किस समय कौनसा काम बता दे? साहूकार के खेत पर जाना, उनके सदेश दूसरे गाव तक पहुँचाना, सेठ को बुला लाना—कुछ-न-कुछ लगा ही रहता। अँधेरा होने पर झापडी म जाकर दो घटे वाद फिर साहूकार के घर की रखवाली के लिए उसके घर के सामने सोना। इन सव कामो के बीच पढना लिखना सीखन का अवकाश कहाँ? तभी उस एक बात याद आई। वह जब छोटा था तब एक बार गुडण्णा की किताव मे चित्र देख रहा था। तब बापू ने उसे धमकाया था "अबे, ओ पागल, वहा क्या कर रहा है?"

तव उसन उत्तर दिया था, 'पुस्तक मे चित्र देख रहा हूँ बापू।"

'चित्र ही है या कुछ और ?'

"नही बापू पेड पर कौवा बैठा है। नीचे सियार ताक मे है।"

उसने धमकाया था "हूँ, कौवा और सियार! तू क्या समझेगा रे? छोड उस।'

गुडण्णा कहता है, "ऐसे ही देखते रहने से कुछ तो समझ म आ ही जाएगा।'

वाह बेटा! गुडण्णा ने कहा और तुमने मान लिया। उसे समझने के लिए ज म-ज मातर के पुण्य चाहिएँ। पुस्तकें ही पढनी थी तो हमारी जाति म क्यो पदा हुआ?

"इसका मतलव ?'

मतलब क्या? जा, जाकर उस पत्रार को बुला ला। कहना माँ जी ने फौरन बुलाया है।"

कालिया अनमना से चला जाता। ज्यो ज्या बडा हुआ, उसे भी यह बात सही लगी थी। इसके साथ ही साथ उसने अनुभव किया कि उसकी जाति के लोगा के लिए पढना लिखना बेकार है। पर अब बेटे का देखकर कालिया को आश्चय होता। भरमा स्कूल जाता है यही नही बल्कि वह पढाई म तेज है। कभी-कभी वह मन मे सोचता—क्या इससे लाभ भी होगा? हमारी जाति वालो को बहुत पढ लिखकर करना भी क्या है? साथ

ही सोचना थोड़ा पढ़ना लिखना आ जाय, यही बहुत है। कई बार मन मे यह भी विचार उठता कि अब भरमा पढ़ना लिखना सीख गया है। उसे काम म लगा देना चाहिए। परन्तु बेटे का उत्साह देखकर खयाल आता, चला थाड़े दिन और सही। एक ओर यह उत्साह कि बेटा पढ़ रहा है और दूसरी तरफ उसे सब के सामने यह मान लेन मे डर लगता और शर्म भी आती। इस बारे मे वह अकेला बैठे-बैठे सोचता कि अब क्या करना चाहिए? यही एक बात हमेशा उसके दिमाग मे चक्कर काटा करती। 'यह मान ले कि भरमा पढ लिख गया और यह देखकर तू खुश हो रहा है कालिया। कल भरमा बड़ा हो जाएगा। बाद म ? उसे अपनी जाति का काम तो आता नहीं। दूसरे उसे काम देंगे नही ! तब आगे क्या होगा ? इसीलिए तू गव मत कर कालिया। जरा सोच।' वह अपने को चेतावनी देता। दिन बीतते-बीतते कालिया का धैय जवाब देने लगा। यह प्रश्न सामने आते ही उसके रागटे खडे हो जाते कि कल को भरमा क्या करेगा ?

उस दिन का अनुभव वह भूल नही पाता। कब का? कौनसा ? अकस्मात उनस पहली बार भेंट हो गयी थी। उनकी आवाज म ही घबरा उठा था। उसने कल्पना तक न की थी कि वे उसे मिल जाएँगे। बेटे की पढाई की खुशी मे वह गाँव की बात ही भूल गया था। भरमा के लिए पेंसिल या कागज लाने दुकान पर जा रहा था कि तभी किसी ने उसकी भाषा म पुकारा "कौन ? कालप्पा है क्या ? कालप्पा ! पलक झपकते ही उनको पहचान गया। तब कालिया का अपने विगत समस्त जीवन का चित्र एकदम आखो के सामने स गुजर गया। वह फिर से विट्टूर वाला कालिया बन गया। वह एक कदम पीछे हटा पर चादर ऊपर न होने पर भी उस दाना हाथा मे पकडने का प्रयास करके, सिर झुकाकर बोला, "कालिया पाव लागे महाराज।" इतना कहकर वह अचेत-सा हो गया। शायद वह राह म ही जमीन पर माथा टेकने वाला था। आखो म अँधेरा-सा छा गया। कुछ देर बाद उसे होश आया।

"छि ! पागल कहीं का ! उठा।" कहते हुए उन्होने उसे उठाया। वह उस स्वप्न समझकर काँप उठा। आँखें खोलकर देखा, वह स्वप्न नहीं था। वास्तव मे उसे जिसने हाथ थामकर उठाया था वह शामण्णा थे।

शामण्णा के एकदम छू लेने पर उसे ऐसा लगा था मानो वही स्वय

मैला हो गया हो। वह उछलकर पीछे हट गया।

शामण्णा ने पूछा, "क्या कालप्पा, इतने दुबले कैसे हो गये ?" पता नहीं क्या हुआ कि शामण्णा की बात का उत्तर देने को उसने मुह खोला तो गला भर आया, आखों में आँसू आ गये, हिचकियाँ आने लगीं। अभी वह स्थिति समझ भी न पाया था कि सिसक सिसककर रोने लगा। रास्ता चलते लोग घूरते हुए चले जा रहे थे। तब कालिया को कुछ शर्म आयी। शामण्णा बड़े होशियार व्यक्ति हैं। "नहीं, नहीं," कहते हुए वे उसे पास ही सँकरी गली में घसीटकर ले गये।

अक्सर उसे यह सब याद आता तो हँसी आ जाती। उस दिन वह ऐसे क्या रो पड़ा ? भरमा के बारे में सोचते सोचते उसका मन औरतों जैसा नाजुक हो गया था। यह याद आने पर वह अपने आपमें शर्म भी महसूस करता। उसे मालूम था कि शामण्णा का स्वभाव बड़ा सरल है। क्या इसीलिए वह रो पड़ा ? शामण्णा के सँकरी गली में ले जाने से उसे जरा तसल्ली हुई। वहीं कोने में एक दुकान थी। 'चलो, वहीं एक तरफ बैठकर जरा बात करते हैं। बहुत दिन हो गये बातें किये।" कहते हुए वे मुस्कराते हुए उसे दुकान में ले गये। कालिया फिर डर गया। उसके पाँव उठते ही न थे। पहले भी वह उसी दुकान में—और वैसी कई दुकानों में—चाय पी चुका था। पर शामण्णा के साथ जाने का साहस नहीं हो रहा था। आपके साथ कैसे जा सकता हूँ ?' यह बात उसकी जबान की नोक तक आयी पर उसने अपने को रोक लिया। बापू जो कहा करता था, वह झूठ नहीं। हमारी जाति और है, उनकी जाति और। तब उसे यह महसूस हुआ था। शामण्णा के साथ दुकान के भीतर बैठे हुए उनकी जबान से उसकी जाति का नाम कहीं निकल पड़ता तो ? शायद उसके मन की बात शामण्णा ने ताड़ ली होगी।

उन्होंने पूछा 'कहीं जरूरी काम से तो नहीं जा रहे थे ?' बेचारे शामण्णा जी ! उनके ऐसे पूछते ही शर्म सी आयी। सिसकियाँ लेता आँखें पोंछता उनके पीछे पीछे दुकान में चला हो गया। दोनों आमने सामने कुर्सी पर बैठ गये। उसने सोचा, 'देखा बेटा कालिया यह बंबई है। यहाँ आकर शामण्णा के सामने कुर्सी पर बैठा है।' मन ही मन हँसी आई। शायद वह हँसी शामण्णा ने भी देखी होगी।

'क्यो ? हँस क्यो रहे हो ? चलो, रोना तो बद हुआ । उनके यह कहते ही दोनो हँस पडे । तभी शामण्णा ने दूध और केले मँगवाये ।

शामण्णा ने केला छीलते हुए पूछा, 'क्या बात है कालिया, इतने बुझे बुझे-से क्या हो ? '

"नही तो, ऐसा तो कुछ नही है ?" कहकर कालिया हँस पडा । सामने रखे दूध और फल देखकर उसके मुह मे पानी भर आया । शाम का खाना और बाहर खाना खाए, पता नही कितने दिन हो चुके थे ।

शामण्णा ने पूछा, "बेटा तो अब स्कूल जाता होगा ? '

इस प्रश्न से वह चकित हो गया था। भला क्या जवाब दे । बच्चा स्कूल जाता है या नही । उसने सोचा, अगर उन्होंने कह दिया कि उसे स्कूल मे पढा कर क्या करोगे तो उसके सिर पर मानो आसमान ही तो टूट पडेगा। पर शामण्णा उसी के गाव के है और उनके पूछने पर 'नही' कहकर झूठ बोलना भी तो मुनासिब नही इसलिए उसने यह कहकर बात टाली, "भरमा स्कूल जाने की ज़िद ज़रूर करता है।"

"तो बडी अच्छी बात है । तुम चिंता मत करना कालप्पा ! जहाँ तक पढता चाहे उसे पढाओ । पढने मे है कैसा स्कूल मे ?"

'बहुत तेज़ है जी ।" उसने कहा और जीभ काट ली । यह बात उसने इस प्रकार गर्व से कही थी कि शामण्णा ने यह मान लिया कि लडका स्कूल जा रहा है । उसने यह भी सोचा कि शामण्णा ने उसे गाना-बाना मे पकड लिया ।

' कालप्पा, अच्छा हुआ तुम मिल गए। भरमा जहाँ तक पढना चाहे उसे पढाओ । किसी बात की चिंता न करना । स्कॉलरशिप मिलेगी । मैं तुम्हारी सारी व्यवस्था करा दूगा। बच्चे को आगे बढना चाहिए। समय।'

' मैंने किसी तरह की रोक नहीं लगाई है उस पर शामण्णा जी ।

'उसका स्वास्थ्य कैसा है ?'

'भगवान की कृपा से सब ठीक है ।"

पर तुम तो दुबला गये हो। बेटे की बहुत फिक्र है क्या ' —उन्होंने हँसते हुए पूछा ।

कालिया पहले तो कुछ हिचकिचाया कि पूछे या नहीं, पर फिर हिम्मत करके पूछ ही लिया ' माँ जी कैसी हैं ? '

"व रागण्णा को लेकर शहर चली गयी हैं। रागण्णा भी स्कूल में पढता है।'

'अच्छा, और हमारी शाता वहिन कैसी है ?"

"अच्छी हैं ?" शामण्णा ने हँसते हुए बताया, "उन्होंने और मैंने मिल कर एक आश्रम खोला है।'

कालिया को फिर सशय हुआ कि शादी के बार म पूछे या नही, अत म पूछ ही लिया

'बच्चे कितने है ?'

शामण्णा न कहा 'बच्चे ? फिलहाल आश्रम मे दस बच्चे है।"

उसन सोचा, शायद वे बताना नहीं चाहते। फिर भी पूछने की क्या जरूरत है। शादी तो हो ही गई होगी। बच्चा की बात तो उन्होंने उडा ही दी। इकट्ठे रहते है या अलग-अलग है ? जो भी हो, अपना-अपना स्वभाव है। हमें क्या लेना देना है ? यह सोचकर वह चुप रह गया।

'तुम्हे जब किसी बात की जरूरत हो तो बेटे के हाथ से चिट्ठी डलवा दना। स्कालरशिप या फीस सब की व्यवस्था हो जाएगी। हमारे आश्रम का नाम 'मोहन आश्रम' है।"

तो यू कहिए, गाधीजी के नाम पर आश्रम का नाम रखा है।"

'हूँ।

शामण्णा ने दूध और फल क पसे चुका दन के बाद दो केले और खरीद और कहा, 'भरमा स भी मिल लेना तो अच्छा था।" पर कालिया की काई प्रतिक्रिया ही न हुई।

तब शामण्णा बोले "जान दो फिर कभी आकर मिलूगा। उसे ये फल द दना और कहना हम भूले नही।"

कालिया का गला भर आया। कितने लोग उसके बेटे की चिंता करत हैं।

शामण्णा क जाने क बाद वह पता नही कितनी दर तक वहीं खडा रहा। पहले तो उस लगा मानो कुछ मिल गया हो पर थोडी दर बाद ऐसा महसूस हुआ कि कुछ खो गया है। वह उनसे कुछ और भी बातें कर सकता था। गाँव क बारे में पूछ सकता था। पर जब तक शामण्णा सामने रहा, तब तक उस मुह खोलने की हिम्मत नहीं हुई। मुह खोलना तो दूर, सामन

कुर्सी पर बठने मे भी शम आ रही थी। उन्होने कहा था "बेटा जितना पढना चाह पढाओ।" इस बात पर उसे और भी शम आई। उन्होने मन-ही मन कहा यह न सोचा था कि यह चमार की औलाद जाकर न जाने किस किससे कहेगा। गाँव क लोग यह सुनकर कालिया ने अपने बेटे को अगरेजी इस्कूल मे भेजा है, हँसेंग।

कालिया यह कल्पना करके हैरान हो गया कि गाँव के लोग शामण्णा के सामने जब यह सब कुछ कहेगे तो कितना हँसेंगे।

वह पसीने पसीने हो गया। गाँव के लोग—सब—गगी भी, उसकी पत्नी गगी, भरमा की माँ।

उसे लगा मानो सरदी से शरीर काप उठा हो। उसके यहाँ रहने की सूचना भी शामण्णा गगी को दे सकते है। अगर उसे पता लग जाय कि भरमा पढाई मे बडा तेज है तो वह रडी यहा आ भी सकती है। खैर, आना है तो आ जाय। ये बातें उसके मुह से जोर से निकल पडी। उसने तुरन्त इधर उधर देखा। तब तसल्ली हुई कि उसकी ओर किसी का ध्यान नही था। घर लौटते समय कालिया ने सोचा कि शामण्णा किसी से कोई बात नही कहेगे। क्योकि उन्होंने गाँव की बात ही नही उठाई। उन्होने तो सिफ उसी के बारे मे पूछा था। गाँव का तो क्या, किसी का भी नाम तक नही लिया। धीरे धीरे कालिया को इस बात पर विश्वास हो गया कि शामण्णा उसकी भेंट का जिक्र किसी स न करेंगे।

फिर जब उसने घर आकर भरमा को खेल दिये तो खुद भी शामण्णा से भेंट का जिक्र नही किया। शामण्णा से भेंट होने के बाद कालिया बेटे के बारे मे और भी कई मनसूबे बाधने लगा। अब कोई भी उसक बेट को उससे दूर नही कर सकेगा। कौन कर सकता है ? यह सोचकर उसे कुछ इत्मीनान हुआ। अब भरमा का और कोई नही, केवल यही है। यह सोचते सोचत दिना दिन उसका साहस बढने लगा और उसे खुशी भी होने लगी।

उसके बाद स कालिया ने गगी को बिल्कुल भुला दिया।

# 3

पर गगी कालिया का भूल नही सकती थी। गुडण्णा के मरन क बाद गगी की दशा सूखकर झडे फूल के समान हा गई। पौधे पर लगे फूल का कोई सूघकर देखे तो उसके खराब होने का डर नही होता। इतना ही नही, आने-जाने वाला के टहनी झुकाने पर भी उनके छोडते ही फूल फिर भी वही अपनी जगह सीधा हो जाता है। गुडण्णा के रहते वह पौधे पर लगे फूल की तरह थी। अत म एक बार गुडण्णा से बदला लेने के लिए रामप्पा न उस फूल को पौधे से तोडकर नीचे डाल दिया था। रामप्पा गाव का पहलवान था अब वह पहलवानी छोड चुका था। लेकिन अब जबकि कुश्ती मे दूसरे को दबोचने की शक्ति उसमे नही रह गई थी पर उम कोई खेद न था। अलबत्ता इस बात का गम जरूर था कि उसकी पत्नी चेन्नी उसके काबू मे न रही?

वह कितन ही दाव जानता था पर पत्नी कर एक भी दाव न चला। जब लागा के तानो न उसे त्रस्त कर दिया तब चिढकर उसने गगी को अपन वश म किया। पर गगी पौधे से ताडकर नीचे फेंका हुआ फूल थी। रास्ता चलते सभी लोग उसे कुचलकर निकलत थ। लकिन फूल तोडकर फेंकने वाले हाथ म उसकी खुशबू तो रहती ही है। रामप्पा के बार मे गगी यही साचती थी। अब रामप्पा भी नही रहा। उसी ने गुडण्णा का खून कर दिया था। लोगा का कहना है वह इसीलिए फरार हो गया है। यही कारण था कि गगी को कौन रामप्पा? कहन का नाटक रचना पडा। नही तो वह पुलिस के पजे मे न फँस जाती! अब वह नया सहारा ढूढ रही थी।

वास्तव मे वह इतनी बेसहारा भी नही थी। उसका ससुर परय्या उसका एक सहारा था पर उसे यह मालूम न था। परय्या कई बार कहता, "यह गदी लडकी हमारे घर कस आ गई?" उसकी वशभूषा और बनाव-सिंगार दखकर साचता पता नही वह जानती है या नही कि यह काम खराब है और चुप रह जाता। कई बार अपनी जाति की निन्दा करता और कहता, कुछ भी हा, अपना बेटा अपनी आखा के सामन रहता वही

बहुत था। अब वह भी दूर हो गया। बड़े मालिक भी न रहे, छोटी मालकिन गाँव छोड़कर चली गई। मुकुन्दा था मारा गया। यह सब सोचकर वह लंबी साँस लेता। अंतत वह इसी फैसले पर पहुँचा कि अब उसका गगी के सिवा कोई नहीं है। घर में एक औरत होने से शोभा रहती है। शाम को घर लौटो पर घर में दिया तो जलता मिलेगा। लेकिन यह लड़की? सारी औरत जात ही ऐसी होती है। अब मेरा भी क्या रह गया? लाला के पड़कर यह लड़की बिगड़ गई। अब तो अक्ल आ गई होगी।' यह परम्या का दृष्टिकोण था।

"रोटी खा ली गगी?" ससुर के यह पूछने पर गगी को पहली बार लगा मानो डूबते को तिनके का सहारा मिल गया हो। तब वह हैरान होकर बोली "जी!"

मैंने कहा, 'रोटी खा ली?'

'नहीं।"

क्यों भूख नहीं लगी?"

'पता नहीं क्यों? माँ जी का घर बेचकर गाँव से जाना देखकर "

यह कहते हुए गगी फूट पड़ी।

"मालिक कहा करते थे, मनुष्य लकड़ी के टुकड़े के समान है—तैरता हुआ आता है और तैरता हुआ जाता है। पता नहीं कहाँ से आता है और कहाँ जाता है। हम तो किनारे पर खड़े होकर देखने वाले हैं।" यह कहकर परम्या ने लंबी साँस ली। फिर याद आने पर उसने कहा, "उठो, रोटी खा लो।'

'कल सुबह खा लूंगी। इस समय पेट में कुछ अजीब-सा हो रहा है।"

शाम के झुटपुटे में उसने बहू को गौर से देखा। उसे यह देखकर तसल्ली हुई कि उसकी बहू को कुछ अक्ल आने लगी है। तब उसके मुख पर हँसी की एक रेखा दौड़ गई। वह बोला, "अब भरमा का जल्दी पता लगाना चाहिए।"

बूढ़े ने चोर निगाह से बहू की ओर देखा। उसकी [illegible] ही उसने भरमा का नाम लिया था। उसने सोचा था कि [illegible] लेने पर गगी के मुख पर जो प्रतिक्रिया होगी उससे पता [illegible]

यह उसे कितना चाहती है। गगी ने कोई उत्तर न दिया।

उसने अपने को समझाया। वह शरमा रही है।

गगी ने एक शब्द भी न कहा।

'मैं अपने बेटे को बुला लाऊँगा, इस चुड़ैल का क्या है?' अपने आप से यह कहकर उसने दाँत पीसे और वहाँ से वह बड़बड़ाता हुआ चल पड़ा कि भरमा का पता लगाना ही पड़ेगा। वैसे तो कालिया का भी पता लगाना है। जो भी हो, घर में एक मर्द तो चाहिए ही। मैं अब कितने दिन का हूँ।

*वह बात मानो परस्या की भविष्यवाणी ही बन गई। उसके दो ही दिन* बाद गगी को किनारे पर खड़े होकर दूसरी लकड़ी को तरते हुए देखना पड़ा। बिना किसी हारी-बीमारी के बैठे-बैठे ही परस्या की जीवन-लीला समाप्त हो गई।

कुछ लोगों के मुँह से निकला, वह रायसाहब को छोड़कर जीवित रहनेवाला प्राणी नहीं था।"

कुछ और बोले, 'उसका दिल ही टूट गया था।

कुछ औरों ने कहा, "गगी की राह का काँटा था, उसने विष देकर मार दिया होगा।"

गगी रोती बैठी रही, "हाय! कहकर गए थे कि भरमा को ढूँढ़कर लाऊँगा।"

गगी परस्या की इस बात को कि घर में एक मर्द तो होना ही चाहिए बहुत याद करती। उसे डर था। वह अपने को भी जानती थी, उसी प्रकार वह यह भी समझती थी कि लोग भी उसे जानते हैं। गाँव में उसका मान नहीं है यह सोचकर वह कुछ दिन तक गाँव के भीतर ज्यादा नहीं गई। कभी-कभार दुकान जाती तो सिर नीचा करके मिट्टी का तेल, नमक आदि ले आती। शुरू शुरू में डर लगता था। बाद में आश्चर्य होने लगा। उसके प्रति लोगों की दृष्टि में अजीब सा परिवर्तन आ गया था। किसी ने कहा "परस्या ही अंतिम आहुति है क्या? जिस पर भी इसकी नजर पड़ती है उसकी छुट्टी हो जाती है।" धीरे धीरे लोगों का यह कहना उसके कानों में पड़ा। यह कैसी उल्टी बात थी, कोई भी

उसकी तरफ आख उठाकर नही देखता। बातें करने वाले लोग उसे देखते ही चुप हो जाते। दुकान के सामने वह चाहे जितनी देर भी खडी रहे कोई भी बात न करता। बिना किसी से बात किये और बिना मिले बाले रहना उसके लिए सभव न था। जब वह लकडी बीनने जाती तो चरवाहे बच्चे मिलते। उन्हे देखकर वह हँसती और उनसे बात करने का प्रयास करती। वे भी आपस में हँसी मजाक करते रहते पर उसकी बात का जवाब न देते। उन्ही मे एक पद्रह-सोलह बरस का लडका था। एक दिन उसने उससे लकडी का गट्ठर उठवा देने को मदद मागी। उसने हैरान होकर इधर उधर देखा। उसने जरा नज़ाकत से कहा था। लडके के मन में तनिक सकोच हुआ होगा पर उसे कुछ करने का साहस नही हुआ। फिर भी वह बोला, 'तुम्हे कैसे छुएँ?''

'क्यो रे चालाक, मुझे क्या हुआ है?' कहते हुए उसने पल्ला खोल कर छाती को ढापा और पल्लू को कमर पर कस लिया।

अपने मन की हलचल प्रकट न करते हुए उसने कहा 'नही, यह नही। तुम्हारी जात को कैसे छुएँ?' मैंने सिर्फ यही कहा।

वह बोली, चल पागल! औरत की कोई जात नही होती।' वह लडका घबराकर नौ दो ग्यारह हो गया। गगी कोसते हुए बोली, 'नामर्द कही का!'

उस दिन से गगी घबरा उठी। उसे लगा, वह एक ऐसी स्त्री—जिसे कोई छूना नही चाहता। जिसका सहारा कोई मर्द नही, ऐसी बेसहारा। उसने मन मे कहा, अगर किसी मर्द का सहारा होता तो मैं उनकी खुशामद क्यो करती?' अब गगी गाव छोडने को, यहा तक कि कुछ भी करने को तैयार हो गई।

यह बात हुए दो वर्ष बीत गए पर गगी बिटट्टूर मे है। वह कई बार दुखी होकर सोचती, इस मसान से तभी निकल जाती तो चली ही जाती। अब तक भी उसे छोड नही पाई।

वह क्या जा नही पाई यह उसे मालूम था। इसीलिए वह कभी कभी दुखी भी होती। क्या नही गई? शामण्णा और शाता दोनो जेल से छूट-कर आये थे। उन्होंने ही उसे भी काम से लगा दिया।

"जब वह दुखी होकर कहती, "आग लगे इस गाम को, मुफ्त म चक्कर म डाल दिया ! इनका बेड़ा गर्क हो !"

कभी कभी यू भी कहती, "वैसे मुझे भी यह सब कैसे पता चलता ?"

सच है। गंगो को कुछ पता नही था। शामण्णा शाता गाँव आये। गाँव म एक रौनक आ गई। उनके आने के दिन कितना बड़ा उत्सव-सा हुआ। शामण्णा अगर जिद न पकड़ता तो उनका जुलूस अवश्य निकाला जाता। लोग बहुत जोश म थे। रघुनाथराय का घर टूट जाने से कई लोगो का दुख अवश्य हुआ होगा। कुछ लोगो का इस बात की खुशी हुई, भले ही मन्वी हो, उनका नाम तो बच गया। वह घर अब रायसाहब का न था शाता वहाँ नही रहती थी। चाहे जहाँ रहे, रायसाहब का नाम तो बच गया।

लोगो ने सोचा एक असली जुलूस जरूर निकालना चाहिए।

कुछ लोगो ने कहा, "असली जुलूस भी निकाल देना चाहिए।"

'यानी ?'

तब कुछ लोग हँसकर बोले, 'यानी का क्या मतलब ? दोनो की शादी हो जानी चाहिए।"

तब किसी एक ने समझाया 'अरे पागलो ! उनकी जात म एक बार पति मर जाय तो लड़की के लिए दुनिया ही खत्म समझो।'

तब कोई बोला, "चल बे, उस लड़की ने तो पति की परछाईं भी नही देखी, शादी कसी ?"

तब कोई बड़प्पन से कहने लगा, "अरे, हमे इस सबसे क्या मतलब ? लड़का लड़की पसद कर लें तो शादी अपने आप हो जाती है।"

"उसम रुकावट क्या है ?

'यह किसके हाथ म है ?

"किसी के भाग्य के बारे मे कोई क्या कह सकता है ?"

इस सारी चर्चा के बाद लोगो ने यह तय किया—"हम तो जुलूस जरूर निकालगे।" पर शामण्णा न उन्ह रोका, जिद भी की पर उस दिन लोग जोश ही म थे।

कुछ लोगो का विचार था कि शाता और शामण्णा की शादी हो चुकी है अथवा हो जाएगी। गगी का भी ही यही खयाल था।

आगे यह निश्चय हुआ कि दोनों एक साथ रहकर एक आश्रम चलाएँगे। लोगों ने यही समझा कि शादी तो अवश्य होगी। शामण्णा ने गगी को आश्रम म ही काम दिया था। पूछने वालो के सामने वह अभिमान से कहता 'यह हरिजन लडकी है क्या यह उसके मुह पर लिखा है?" हरिजन कह कर जाति को बदल देने के बाद से मानो गगी का पुनर्जन्म हो गया हो। जाति का नाम बदलने के बाद से उसके व्यक्तित्व मे ही परिवर्तन आने लगा। मानो सारे गुण नाम से सम्बन्धित हो। पर उसने यही समझा था कि उसका नसीब ही बदल गया। धीरे-धीरे उसमे अपने जीवन के प्रति आसक्ति लौटने लगी। 'क्या यह उसके मुह पर लिखा है।' शामण्णा के मुह से यह सुनने पर वह पुलकित हो उठी। उसे यह सोचकर अपने पर गर्व हुआ कि अब भी उसके मुह पर रौनक है। रोज दात साफ करती, नहाती, ढग से कपडे पहनती। उसे कभी-कभी शाता के बारे मे अजीब सा लगता। क्या उसके प्रति शातक्का के दृष्टिकोण मे परिवर्तन आ गया है। कई बार उसे देखकर वह शामण्णा से कहती, 'बालिया को जल्दी ढूढ कर ले आना चाहिए।' यह सुनकर गगी को लगता मानो उसके स्वप्नों की पतग एकदम कटकर जमीन पर आ गिरी हो। वह सोचती, यह लोग ऐसी बातें क्यो करते हैं। मैं यहाँ सुख से हू। य मेरा सुख क्या छीनना चाहते है? बाद मे उसे डर भी लगा और धीरे धीरे सन्देह भी होने लगा। उसे शाता पर गुस्सा भी आया। उसका अपना कोई सुख तो है ही नही, वह दूसरो का भी सुख नही देख सकती।

शाता सुखी नही है इस बारे मे गगी को कोई सदेह न था। शुरू शुरू म उसे इस बात की कल्पना न थी। उसका विश्वास था कि उन दोनो की शादी हो चुकी है। उसने सुना था कि वे जिस जेल मे थे वह किसी बडे शहर म थी। पर उसे धीरे धीरे उनकी शादी के बारे म सदेह होने लगा। वह इस निर्णय पर पहुँची थी कि उनकी शादी नही हुई होगी। तभी गगी को अपने जीवन पर गर्व का अनुभव हुआ। जो भी हो, उसका एक पति है। यह विचार आने से वह अपने को शाता म बडी मानने लगी। लेकिन गगी के मन मे अब भी सदेह था। शादी के बिना यह गृहस्थी चला रहे है। कैसे लोग हैं ये? दोनो मे क्या सबध है। अब उसे इस बारे म सदेह ही नही रहा।

इतना सब होने पर भी शादी क्यो नही करते ?

इस प्रश्न का उत्तर ढूढने पर गगी को बहुत बडा सबूत मिला।

शामण्णा, शाता किसी भी बात को तैयार नही थे।

ये कैसे लोग है ?

यह सोचकर वह डरी कि लोग इस तरह भी रह सकत हैं ?

अब वह इस बारे म छानबीन करने लगी कि ये लोग ऐसे क्या हो गए ?

शाता की ही गलती है। गगी को इस निणय पर पहुँचन म देर नही लगी।

शामण्णा के बारे मे उसे सदेह ही नही था।

मद जात ! क्या वह नही जानती ? आचल की हवा लगते ही गला फाड कर खाँसने वाली जाति ! अरे ! सब मद एक से होते है । फिर भी यहा ऐसा कुछ नही हुआ होगा। वह रोज शाता को देखती है। इस जीव म औरत का आकपण है कि नही। गगी के हिसाब से शाता म वह आकषण नही था।

लेकिन शामण्णा तो मद जात है।

गगी के मन म हलचल मच गई। 'उसके मुह पर लिखा है क्या ?' शामण्णा के इस वाक्य का अथ अब उसकी समझ मे आया।

उसने सोचा अरे य तो मेरा मुह देख रहे है।

तब से गगी के मन म शामण्णा के प्रति दया की भावना उत्पन्न हुई। 'अरे इस विचार न सुख ही नही देखा है ?' तब उसे शाता पर गुस्सा आता।

जो भी हो लोग बातें बनाते हैं। मेरा क्या जाता है ? यह सोच-सोच मन मे तक करती। शामण्णा ने सुख नही देखा, पर यह शाता, पति के बिना भी घर वाली कैसे बन गई।

अत म गगी एक निणय पर पहुँची। शामण्णा के हर काम मे सहायता करने लगी। एक बार जब वह बीमार पडी तो शामण्णा न उसकी नब्ज देखी। गगी आँखें मूदकर बठी रही। उसे डर था कि आँखें खोलते ही शामण्णा हाथ छोड देगा।

तब से गगी शामण्णा को फाँसन के चक्कर म पड गई। बेचारा !

इसने तो शाता को ही देखा है। और समझा है कि सभी औरतें एक जैसी होती हैं।

एक बार शाता दो दिन को सुब्बक्का से मिलने गई। गगी ने सोचा, तो आखिर म भगवान ने कृपा कर ही दी।

उस रात गगी बुखार का बहाना बनाकर शामण्णा के पास गई। शामण्णा ने नब्ज देखी, उसे बुखार न था।

उसने कहा 'बुखार तो नही है।'

गगी बोली 'फिर भी कुछ हो रहा है जी। बेचैनी सी लग रही है।"

उसका शरीर काप रहा था। सास गम थी। शामण्णा आराम से उठ कर उस उसके कमर मे लिवा ले गया। उसे लिटा कर चादर उढा दी।

"अभी बुखार नही। आराम करो नही तो चलने फिरन से बुखार हो जाएगा।" यह कहकर दरवाजा बद करके चला गया।

अरे अब पता चला यह कैसा मद है ! गगी न सोचा।

शाता सुब्बक्का से मिलकर वापस आई। यह सोचकर कि इनके लिए कौन खपे। गगी जरा दूर-दूर ही रहती। दोना इधर-उधर की बातें किया करते थे। इसकी ओर देखकर भी बात करते थे। गगी न छिपकर सुना।

"मैं साचती हूँ, गगी का सुब्बक्का के पास भेज दू तो अच्छा रहेगा।" यह शाता का स्वर था।

उसने मन मे कहा, 'क्यो बहिना, इस आदमी के साथ गुलछर्रे उडाने है क्या ?' और वहा से चली गई मानो उनके रहस्य को वह अकेली ही जानती हो।

शामण्णा ने पूछा 'सुब्बक्का का क्या कहता है ?

शाता हँस पडी, 'मैंने सोचा, वह बहुत कष्ट मे है, गगी को भेज दें तो वह कम से कम घर के काम मे हाथ बटाएगी।

शामण्णा ने तुरत कहा, 'तो भेज दो।"

"भेजना क्या है ! वह तो अस्पृश्य है। घर के काम म क्या हाथ बटाएगी। सुब्बक्का ने कहा था।' लेकिन यह बात सुनने को गगी वहाँ न थी।

# 4

सुब्बक्का हैरान थी कि गगी को कैसे रखें? उसने कहा था कि वह हरिजन है। शाता उस बात पर क्यो हँस पडी थी। पता नही उसने क्या समझा था, जब उसने गगी को भेजने को मना किया तो मालूम नही क्या समझा?

यह बात याद आने पर सुब्बक्का के मन मे सदेह उठा। उसके पति और गगी का सबध उसे मालूम था और भी सभी को मालूम था। शाता भी जानती थी। 'क्या इसीलिए उसने मना किया? क्या शाता ने मन मे यही समझा होगा? वैसे देखा जाय तो यह बात अभी तक मेरे ध्यान मे नही आई थी। मर्दो की आदतो को मन मे रखे तो वह चला चुकी जिंदगी। उसमे ये ' सुब्बक्का ने मन म सोचा।

सच्ची बात तो यह है कि उसकी जाति के कारण वैसा कहना पडा था। जमाना बदल गया है, पर यह मानने को मन तयार नही होता है। यह उस जाति की औरत से घर का काम कैसे कराये? शाता को भी यह विचार कैसे आया। लोगो को कैसे पता चल जाता है कि अमुक जाति है? लोग कुछ भी कहे, मन म डर तो रहता ही है न? मुह से हरिजन कह देने से किसी का अस्पश्य होना झूठ तो नही हो जाता?

सुब्बक्का को हँसी आ गई। रागण्णा ने पूछा "अस्पश्य माने क्या होता है?'

होता क्या है सब उस पगले को बताना पडेगा क्या?— यह प्रश्न सुब्बक्का ने अपने आपसे पूछा। उसने उस बताया था, 'अस्पृश्य के माने हैं न छूने योग्य। तब उस मूख ने पूछा था, कितने दिन तक नही छूना चाहिए? उसे गुस्सा आया पर साथ ही हँसी भी आ गई थी, उनकी अस्पश्यता के लिए कोई समय-सीमा निर्धारित नही है। उन्हे जीवन भर नही छूना चाहिए।'

मतलब ?

'मतलब क्या? जन्म स लेकर मरने तक हम उन्हे छू नही सकते?"

'यानी मरने के बाद हम उन्हे छू सकते हैं क्या?'

"धत पगले ! ऐसी बुरी बातें नही कहते।"

"नही मा, मैंने कहा उनके मरने के बाद ।"

"मरने के बाद। अरे पगले ! मरने के बाद स्वग जाते है। बाद मे उन्हे कैसे छुओगे ?"

यह बात बहिन ने बडप्पन के स्वर मे भाई को बताई।

बेटी की बात सुनकर सुब्बक्का अवाक् रह गई थी। वह यह सोचकर हैरान हो गई कि भगवान बच्चा के मुह से कैसी कैसी बातें कहलाता है।

"मा, मेरी बात ठीक है या भैया की बात ?'

"चुप बैठ ! हर बात म बीच मे कूद पडती है।'

'बहिन को ऐसा डाटना नही चाहिए बेटा।' बेटे को यू समझाने पर भी उसका अधिकार भरा स्वर सुनकर सुब्बक्का को मन ही मन खुशी हुई थी। उसन भगवान से प्राथना की थी।

"हे भगवान जल्दी बडा होकर राग्या घर सँभालने लायक हो जाये !" रागण्णा को एक छोटी नौकरी मिल जाए और सरस्वती की शादी हो जाए तो वह तीथयात्रा पर जा सकती है। सुब्बक्का ने इस प्रकार अपने जीवन का उद्देश्य निश्चित कर लिया था।

बेटी ने जिद करते हुए कहा, "माँ मरने वाल स्वग जाते है कि नही ?'

'स्वग गगी जसे लोग " सुब्बक्का ने एक लबी साँस ली और कहा, *"उन्होन पूव जन्म मे पाप किया है उन्ह अपने पापो से छुटकारा पाने के* लिए पता नही कितने जन्म और लेने पडेंगे। तब तक उन्ह स्वग नही मिलेगा।" न जाने छोटी सरस्वती की समझ म कुछ आया या नही, पर उसका मुह उतर गया।

"पिछले जन्म मे पुण्य किये होन्ते तो ?"

"तो ब्राह्मण बनकर जन्म लेते।"

उसकी यह बात सुनकर रागण्णा सोच म पड गया। उस छोटी उम्र मे सोच म डबे उस बच्चे की भौंह खिची हुई थी और बिना लकीरो वाला माथा और उसका चेहरा बहुत सुदर लग रहा था।

'तो हमने पूवजन्म मे पुण्य किए होंगे ?'

बेटे की यह बात सुनते ही सुब्बक्का को ऐसा लगा मानो किसी ने

छुरा भोंक दिया हो। इतनी छोटी उम्र म बच्चा पता नही अन्दर-ही-अन्दर क्या कुछ सहन कर रहा है। उसके स्वर म आश्चय था और आवाज मे दद भी।

उसकी बात का क्या उत्तर दे।

मैं तो खुद अनपढ हूँ, रागण्णा। मेरी समझ म ये सारी बातें नही आती। तुम जल्दी जल्दी पढ लो, तब तुम समझ जाओग। और फिर मुझे भी तुम्ही समझा देना।" कहते हुए उसने उसका सिर सहलाया।

'मा झूठ बोलती है, तुम्हे बहला रही है, वह सब कुछ समझती है।" सरस्वती न कहा। मा को भैया का सिर सहलाते देखकर सरस्वती को अच्छा न लगा। मा का हृदय यह समझ गया। वह हस पडी।

एक दिन रागण्णा हाथ मे कुछ लिए हुए था। वही सरस्वती भी लेना चाहती थी। उसने मागा तो रागण्णा "मुझे पकड" कह कर भागा। सरस्वती जहाँ की तहा खडी रही। तुझे चाहिए तो मुझे छूकर ले।"

'अस्पृश्य कही का!' गुस्से स कहकर लडकी ने अपने आसू रोकने की कोशिश की। यह दश्य देखकर सुब्बक्का को फिर याद आ गई। उसे लगा शाता उसे कैसे छूती होगी? कहावत है न, काले कुत्ते को सफ़ेद करने के लिए भले ही नदी का सारा पानी धोने मे लगा दो पर वह नही बदलता। वही स्थिति इस जाति की है। जन्म से मिली चीज है।

शाता ने कहा था, 'जाति वाति सब झूठी बातें है।"

शाता ने यह सब कहाँ मे सीख लिया।

वैसे कोई किसी को छूने नही जाता है और देखकर दूर भी नहीं हटता। एक-दूसरे से निकटता हो या सम्बन्ध हो तो छूने की बात उठती है। यह शाता का तक था। तो क्या हुआ। पता नही यह कब स चला आ रहा है? आज क्या हम तक म इस बदल सकते हैं?"

इस पर शाता न गुस्से से कहा, "बदलना-बदलना क्या, अगर तुम नही चाहती तो बता दो। जाति-वाति सब कहने की जरूरत नहीं।

'हम कहने की जरूरत नहीं बहिन, वह सब तो साथ ही लेकर पैदा हुए है।'

यह सब झूठ है। झूठ-मूठ म जाति का नाम क्या बदनाम किया जाए। दुनिया म ऐसे भी दुष्ट लोग हैं जो अपनी जाति के होने पर भी छूने

लायक नहीं।' शाता के यह कहने पर उसे बुरा लगा था। क्या उसने घुमा-फिराकर उसी को दुष्ट नही कहा था ?

यह बात शाता न गुस्से म कही थी। अपनी ही जाति के लोग भी अस्पश्य हा सकते हैं। मतलब ? कभी यह भी सभव है ? सुब्बक्का यह सोच कर अपनी हँसी न रोक पाई।

पर अब ? सुब्बक्का को हँसी नही आई। उस लगा कि यह बात शाता ने गुस्से मे नही कही थी। इसम सच्चाई थी। आग लग इस सच्चाई को। यह सब ता उसकी आपबीती थी। एसे लोग भी है जो अपनी जाति के लोगा को भी छूना पसन्द नही करत और न छूने का मतलब है, उनसे घृणा करत है।

'उस दिन रागण्णा के साथ क्या हुआ ?' वह दश्य याद आते ही आखा स आसू गिरन लगते, कैसे दुष्ट लाग हैं। बचारा बच्चा। उसके साथ क्या ऐसा ही व्यवहार करना चाहिए था ? शाता की बात झूठ नही। उसन सोचा और एक लबी साँस ली।

वह बात याद आते ही सुब्बक्का को गुस्सा आता, उनको शाप देने की इच्छा होती पर ।

मैं राग्या की माँ हूँ, मेरे शाप की ओर कौन ध्यान देगा ? एक बार उनक लडके का फिर से पानी-वानी पीने आने ता दो। मै भी बता दूगी।

पर सुब्बक्का जानती थी। वह लडका या काइ दूसरा लडका इसके यहा आते ही नही।

फिर भी यह मन से यही चाहती थी कि वह आए और इसीलिए उसके मन मे यह खयाल आया कि आएगा क्या नही ? रोज एक साथ खेलत हैं। जरूर आएगा। पर एक बार अगर सचमुच मे ही आ जाय तो । वह मा है। बच्चो पर क्यो बडो का गुस्सा उतारा जाय उसने सोचा।

इतन पर भी सब बच्चे इक्टठे खेलते हैं। बच्चो का कोई दाप नही। यह सोचकर सुब्बक्का अपने को तसल्ली देती।

मैं रागण्णा से साफ-साफ कह दूगी कि किसी के घर जाने की जरूरत नही है। कमीनी कही की ! उसने मेरे राग्या को देखकर कहा पता नही किस जाति का लडका है। बाहर ही ठहर। उपर से पानी डालती हूँ।

छींटें न गिरें। क्या वह केवल इतना कहकर चुप हो गई थी ? किस किस जाति के लडका के साथ खेलता है ? यह बात उसने जान बूझकर कही ताकि राग्या भी सुन सके। उसन मर बेटे के बारे म यह कहा। कैसी जाति ? बिटट्टूर क दशपाडे के सामने यह किस खेत की मूली है ? धूप म खलकर, प्यास लगन पर पानी पीने के लिए आनवाले बच्चा से यही कहा जाता है ? पानी के लिए जान दो वह अपना पाप अपने साथ ले जाएगी।

सुब्बक्का को मालूम था कि उसका गुस्सा बेकार है। वह जानती थी कि उसक बेटे क गद कपडा को दखकर ही उस औरत ने ऐसा कहा था।

हाँ, हम गरीब है। तो क्या अस्पश्य भी हो गय ? क्या हमारा घराना भी झूठा हो गया ?

मैंन राग्या स कह दिया, दुबारा उनके घर म पाँव रखा ता अच्छा न होगा।

य सब मन को तसल्ली दने की बातें है।

पर उसके मन म यह बात बैठ गई शाता की बात झूठी नही है। शाता ने कहा था दुनिया म ऐसे दुष्ट भी हैं जो अपनी जाति क लोगा का भी छूना नही चाहते हैं। तो यह अस्पश्य है ? वह बात दिमाग म उठते ही सुब्बक्का का शरीर काँप उठता। फिर भी रागण्णा के उस अनुभव की याद आते ही यह विचार मन म बिना उठे नही रहता।

गगी अस्पृश्य है पर वह ? यह भी अस्पृश्य है ? गगी क समान ? "यह विचार उठन पर सुब्बक्का को गुडण्णा की याद आई। गुडण्णा स कौन-सा सुख मिला ? बच्चा का मुँह देखकर ही पति को सहन करना पडा। क्या उन्होने एक दिन भी रागण्णा को गाद म खिलाया ? सरस्वती क होन क बाद ता वह गृहस्थी स ही ऊब गई थी। यह सब ठीक है लकिन इससे क्या ? अब वह बेसहारा है। सबकी नजर उस पर रहती है। सुब्बक्का को अब गुडण्णा की याद हो आई भीतर का सुख भल न था निठुर तो था। भल ही मार मन ही पीटे पर इतना ता पूछते थ कि रोटी खाई या नही। उनका पूछना ही बहुत था मन ता हल्का हो जाता था। पता नही मरे किस जन्म के पाप हैं ? यह सुनकर कि पूर्व जन्म क पापों से ही चमार बनकर पदा होते हैं राग्या न कहा था कि हमन तो पूर्व जन्म म पुण्य किय थ। पता नहीं मैंन कैसा पुण्य किया था। सु बक्का

को इस बारे म सोचना असह्य लगा। आग लगे ऐसे पुण्य को। वह अस्पश्य हैं गंगो की भांति। विचारों के साथ-साथ उसके आंसू भी बह निकले। जिन यादों से बचना चाहती थी, वे भी एक एक करके आंखों क सामने नाचने लगी।

रागण्णा को स्कूल म जाना है, फीस देनी है। पुस्तकें भी चाहिएँ। पस कहाँ ? शिवप्पा नायक बिना कुछ कहे और बिना किसी को बताए सहायता कर रहा है पर इससे क्या ? एक खाना पकाने वाली को दी जाने वाली मजदूरी की भी सीमा होती है न ? लोग भी क्या कहेंगे ?

सुब्बक्का के पास रहने का एक छोटा सा कमरा था। बच्चा और उसका वही स्नानघर था, वही रसोई और वही सोने का कमरा। मालिक मकान सज्जन व्यक्ति था और अधेड उम्र का था। वह कभी किराया मांगने न आता था। वही स्वयं रागण्णा क हाथ भिजवा दिया करती थी। पर मालिक ने कभी तकाजा नही किया था। इस कारण सुब्बक्का क मन मे उसके प्रति आदर था। वह कभी कभार आकर केवल इतना भर पूछता, "मकान कहीं से चूता तो नही ? घूसो ने कहीं छेद तो नही बना दिए ?" सुब्बक्का कोई उत्तर न देती। कभी कभी रागण्णा दुकान स उसके लिए चीनी, सुपारी आदि ला देता। तब वह कहता, 'अच्छा तुम तो बड होशियार बच्चे हो।"

उस दिन सुब्बक्का सदा की भांति घर बच्चों के जिम्मे छोडकर काम पर गई थी। शिवप्पा के घर का काम करने म उसे कभी ऊब महसूस न होती थी। उसका हाल ही म विवाह हुआ था। अपनी नयी गृहस्थी की उलझनो मे फँसे पति पत्नी सुब्बक्का की ओर देखते ही न थे। उनक सुख को देखकर वह भी खुश होती। सदा की तरह ही वह उस दिन भी काम करके तीन बजे के समय मालकिन से कहकर घर लौटना चाहती थी। वह उसके कमरे मे गई। कुछ कहने को उसने मुंह खोला ही था तभी कमरे म ।

आग लगे, यह दृश्य आंखो से हटता ही नही। याद करने पर शर्म आती। आँखें मूदते ही वही दृश्य आ खडा होता। कैसे सुखी थे व पति पत्नी। यह भी क्या करें ? पति-पत्नी की प्रेमपूर्ण छेडखानी देखने म आनंद आता है। पर उसे देखना क्या गलत हो गया ?

दबे हुए को कैसे भूले ?

मुन्नक्का मुस्कराती हुई घर लौटी। दरवाजे पर ताला लगा हुआ था। चाबी रखने की जगह म चाबी लकर उसने दरवाजा खोला। मन-ही मन हँसती हुई वह बोली, 'व दोनों बदर कहाँ चले गये ?"

उस समय उसे अकेली रहने की इच्छा थी। अपनी सुध-बुध ही न थी। कई तरह की मीठी मीठी यादें उसे सता रही थी। पर इतन म ही उसे होश आया। उसे एसा लगा जैस उसका जीवन ही समाप्त हो गया हो। दिल जार म धडकन लगा। वह हैरान हा गई। उसने आँख उठाकर दखा, सामन मकान मालिक खडा था। उसन एकदम आवाज दी, "रागण्णा, सरसू! और अपन को सँभाला।

तब मकान मालिक ने कहा 'व दानों सिनमा गय हैं।"

सुब्बक्का की समझ मे प्रसग ही न आया, न हीं बात भी समझ म आई। वह हैरान होकर देखने लगी।

'बच्चे छोटे हैं। कम से-कम एक दिन तो देख लें, इसलिए मैंने पसे देकर भेज दिया। वह कदम आग रखने को ही था कि सुब्बक्का की निगाह आग क दरवाजे पर पडी।

'हाँ चाहो तो दरवाजा बद किए देता हूँ।' उसने कहा और दरवाजे की ओर बढ़ा ही था कि सुब्बक्का पिछल दरवाज स खिसक गई। इसके बाद? पता नहीं इसके बाद क्या हुआ। शाम को बच्चों के सिनेमा से लौटन क बाद उसन उनकी खूब पिटाई की। क्या? यह क्या हुआ, उसकी समझ म नहीं आया। उसने सोचा, मन म जो गद विचार उठे थ उसके मुताबिक सजा मिली।

[illegible] बच्चा का गोद म सुलाकर रात भर रोती रही। तब पति की याद आई साथ ही गगी की भी।

क्या लोगों की दृष्टि म उसम और गगी म कोई अतर नहीं? क्या उस भी लाग गगी जसा ही मानते हैं?

[illegible] क मर जान पर उस गुस्सा आया। पति क [illegible] क कारण बचारा [illegible] की क्या स्थिति होगा! इस विचार क आत पर सुब्बक्का का यह लगता हुई कि कम-स-कम उसक बच्चा ता है। पर बेचारी वह!

सुब्बक्का क मन म फिर स सन्देह उठा—गगी को वहाँ स हटाना

चाहती है। क्या ? क्या यह हो सकता है ? शामण्णा और शाता ऐसे रहते होगे ?

गगी को भी सदेह हुआ। अरे ! मुझे यहाँ से भेजना चाहती है यह चालाक औरत ! क्या ? कुछ न-कुछ तो होगा ही। लोग यू ही थोडी कहते है ?

कालिया को भी सदेह था। याद आते ही आश्चय होता। जब पूछा गया कि बच्चे कितने हैं तो उन्होंने बात ही उडा दी। इसका मतलब कुछ तो होगा ही, वह सोचता। भले ही मुह से न बताएँ पर लोगो से भी छिपा सकते है क्या ?

कोई-न कोई स्थायी व्यवस्था करनी चाहिए। चाहे ऐसे रहे या वैसे, पर छिपकर नही रहना चाहिए । पर यह उनसे कैसे कहें। आज नही तो कल अगर कुछ हो जाय तो क्या लोगो की जबान रोकी जा सकती है ! सुब्बक्का सोचती।

## 5

भला लोग बातें बनाये बिना रहेंगे ? इतना ही क्यो ? शाता तक जानती है कि लोग जरूर बातें बनाएँगे। पर क्या करे, उसमे लाचारी है ? यह विचार उठते ही एक लबी साँस लेकर वह काम मे लग जाती।

करना क्या है ?

इस प्रश्न का उत्तर देना इस परिस्थिति मे सभव नही। शाता सोचती, 'यह कैसी मानसिक स्थिति है।

उसकी स्थिति ऐसी थी जैसे कोई चौराहे पर खडा हो, एक राह पर कुछ दूर जाने के बाद यह पता लगता है कि यह राह ठीक नही। तब उसे डर लगता। तेजी से दौडकर वापस लौटकर वह उसी चौराहे पर आ खडा

होता। फिर दूसरे रास्ते पर चलता फिर वही संशय और डर और अंत मे फिर लौटकर उसी जगह आ खड़ा होता।

'काश ! पिताजी होते !'

कभी कभी मन मे यह विचार भी आता। लेकिन होते तो क्या होता ? वह उससे पूछने नही और वह उनसे कह नही पाती। पर एक बार पहले उन्होने उसके बिना पूछे ही कहा था

'छि कैसा बुरा विचार है ? किसी को यह आभास मिल जाय तो वह सोचेगा कि मैं और एक शादी करने को तैयार हूँ।'

पर क्या वह उस बात के लिए सचमुच, ईमानदारी से तैयार है ?

कई बार वह अपने आपसे पूछती, 'तुम्हारे मन मे क्या हो रहा है, क्या कम-से कम इतना तो मालूम है तुम्हे ?'

'अरे उसे कौन जानता है ?' कहते हुए वह उस विचार शृंखला को ही तोड देती।

किसे मालूम ? मन यदि एक निश्चय पर पहुँच जाय तो आगे क्या होगा—शायद यह डर उसे भी रहा होगा।

मन मे क्या है यह जानने तक वह प्रयास भी नही करती। पर एक बात निश्चित थी। उसे सचेत रहना चाहिए, नही तो उसका मन ही उसके साथ विश्वासघात कर सकता है।

'आग लगे मेरे मन को, मैं ही पागल हूँ। कहते हुए कई बार वह अपने आप को कोसती, 'मैं अपने मन को लेकर क्या करूँ ? पता नहीं। उनके मन मे क्या है ? कौन जाने ?'

शामण्णा के मन की बात तो दूर, वह यहाँ से आया ? क्या आया ? इतना भी वह न जानती थी। और पूछा भी कैसे जाय ? फिर भी उसने प्रयास किया था। अधिक पूछने मे पता नही वे क्या समझ बैठें ? कौन जाने उनके मन मे कोई सन्देह हो जाय तो ?

शामण्णा ने एक बार प्रसगवश बताया था कि वह कालेज मे था। मन मे कुछ हुआ और यहाँ आ गया।

यानी यहीं थे मन मे कुछ हुआ और यहाँ पहुँच गये।' यह कहते हुए शरम डर और बनावटी हँसी से शांता ने अपनी बात वहीं समाप्त कर दी।

इस पर शामण्णा भी हँस पडा था, "और क्या कहूँ? कालेज मे दूसरा वष था। उसी साल, एक दिन अकेला बैठा था। एक मिनट को, सुध-बुध भूल-सा गया था। वैसे मुझे होश था। सारा ससार मानो थम गया था। दुनिया, एक नयी दुनिया म जिसम कुछ पुराना न था। मुझे कुछ सूझा और मैं ऊब उठा। किस वजह से ऊबा था, यह पता नही।'

यह बात शाता के लिए पहली आत्मीयता-भरी बात थी। वह क्या [illegible] तक भी सजीव वस्तु-सी है? शामण्णा के मुख पर सात्त्विक कान्ति थी, आँखो म चमक थी और शायद उन्ही आँखो से दो एक बूँदें टपक भी पडी थी। उसम कितना तेज था, शायद उसे उसके सामने [illegible] ही न रहा होगा। वह स्तब्ध थी। पता नही कितनी देर [illegible] रह। तब अपने प्रश्न के उत्तर की तरह शामण्णा न [illegible] बढाई। शायद उसे उसके अस्तित्व का भान ही न [illegible]।

'सब से बोर हो गया था। किताबें पढना [illegible] लिखना। य पढाएँगे? हम इनसे कुछ सीख [illegible] होना था। और इस पढाई से किसी का क्या [illegible]

सूर्य हमेशा से अपने समय पर [illegible] पक्षी अपने विशिष्ट स्वर म बोलते [illegible] पढने स दुनिया म क्या परिवर्तन [illegible] बनाई है। मैं मानव के बनाए [illegible] से चल पडा।"

निकल पड़ी। शामण्णा बोला नही—बहुत देर तक बोला नही। फिर उसने एक लबी सास ली। वह ऐसे घबरा गई थी मानो उसने असमय मे बादल की गरज सुन ली हो।

उसने कहा था, "मुझमे कोई आसक्ति बची नही थी।"

यानी ? बाद म कितनी ही बार उस वाक्य को याद करके शाता ने उसका अथ ढूढने का प्रयास किया था।

अपनी आखो से ही देख रही हूँ। जिस किसी काम को हाथ म लेते हैं, उसमे किस तरह जी-जान से जुट जाते हैं। फिर भी कहते हैं, कोई आसक्ति नही।'

अरी पगली ! 'आसक्ति नही है' नही कहा था। 'बल्कि आसक्ति बची नही थी, कहा था।

यानी ? कही इसका मतलब यह तो नही कि बाल बच्चे नही थे ?

तेरा सिर। तुझे तो बस एक ही खयाल रहता है ! पता नही, उन्होंने कौन-सा विचार बताया था ?

कुछ भी हो, अब उनम आसक्ति है कहो।

है।

यानी ?

धत् ! इन बातो को सोचते-सोचते एक दिन मैं पागल ही हो जाऊँगी। फिर वह गुस्से से सिर झटककर सब कुछ भूलने का प्रयास करती।

क्या वे मेरे मन की बात जानते नही ? छि ! कितना घिनौना विचार है ! कम-से-कम पिताजी को याद करके खानदान की इज्जत तो मुझे रखनी चाहिए।

लेकिन वह हठपूर्वक कहती कि उसके व्यवहार मे ऐसी कोई भी बात नही जिससे खानदान की इज्जत को बट्टा लगे।

यह कैसी बात ? वह विधवा है।

हाँ, सुब्बक्का भी विधवा है।

पर सुब्बक्का अपनी गृहस्थी खीच रही है। तुम्हारी तरह ।

*मेरी तरह ? मैं क्या कर रही हूँ ? मेरा अपना कोई परिवार नहीं।* इसम भी क्या मेरी ही कोई गलती है ?

तुम्हारा परिवार नही यह किसने कहा ? सुब्बक्का तुम्हारे भाइ की

पत्नी, तुम्हारी सगी बुआ की बेटी, दो बच्चों को लेकर खट रही है '

हाँ।

ऐसे मौके पर वह शामण्णा से पूछती, "बहुत दिन हो गए, सुब्बक्का से मिले, मिल आऊँ ?"

वह एक दिन म सुब्बक्का से मिलकर लौट आती। फर्ज पूरा करन को चली तो जाती पर वहाँ पहुचते ही लौटने की तडप उठती। जाने का समय आते-आते पता नही क्या-क्या बकती । कभी कभी गगी भी साथ रहती। लौटती बार रास्ते भर अपनी और शामण्णा की बातें ही किया करती।

'पता है, उस दिन उन्होंने क्या किया ? उसी दिन एक बात और भी हुई थी। उसे उन्होंने कितने मजे ले-लेकर बताया था। गगी पता है ? उनकी हिम्मत का क्या कहना ? जेल म उन्होंने एक बार खाना ही छोड दिया था। पता है क्यो ?" उसकी बातों का सिलसिला इसी तरह जारी रहता। उसे यह भी ध्यान न रहता कि एक ही बात को वह बार-बार दोहरा रही है।

गगी कभी कभी कह भी देती, ' जानती हूँ मालकिन, पहले भी आपने बताया था।" पर वह ऐसे म उत्साह से कहती, "पहले कब बताया था री ? आज बातो म बात निकल आई इसीलिए तो याद आ गई।'

कई बार गगी साथ न होती। तब वह ऐसे भागी आती मानो कोई किसी खोई हुई चीज को ढूढने दौडता है। लौटते ही सब बातें शामण्णा से कह देने की उत्कंठा बनी रहती।

वह कई बार कह भी देता, ' थोडा आराम करो, खाना खाते समय बताना।"

"मैं कोई पैदल थोडे ही आई हूँ। वही तो बता रही थी। रागण्णा कितना होशियार हो गया है जी। सुब्बक्का को कम से कम इस बात की तो खुशी है। जरा मेहनत की जाए तो बच्चे को अच्छी नौकरी मिल जाएगी।"

"और नही तो क्या ? आखिर कहाँ तक पढ़ेगा ? सुब्बक्का भी कब तक कष्ट उठाएगी।'

'जान भी दो। यह पता नहीं कब तक होने वाली बात है।"

'और भी एक बात है बताना ही भूल गई थी।"

इसी प्रकार उनकी बातो का सिलसिला चलता रहता। शाता को आखिर बात समझ म आ गई। सारा दिन मौका न मिल पाने के कारण वह देर तक उससे बातें करना चाहती है।

इसम क्या बात है? सुब्बक्का और बच्चो के लिए उन्होने कितना कष्ट उठाया, यह बात उनके सिवा और किससे कहूँ।

पर आते ही तुरत उन्ही के सामने क्यो बक-बक करने की क्या आवश्यकता है?

यह सब बकवास है, तुम्हे उनके सामने बैठकर उनसे बातें करना अच्छा लगता है। इस मानसिक सघर्ष को महसूस करके वह अपने को पागल कहती। "मुझे किसी भी चीज के प्रति आसक्ति नहीं", उन्होंने स्वय ही तो कहा था। यही सोचकर वह एक लबी साँस लेती।

इन दिनो शाता को अपने बारे म कोई सदेह नही रहा। शामण्णा की आखो के सामने रहने पर ही उसे तसल्ली रहती। वह कभी काम पर पास के गाँवो म जाता तो शाता के सब काम रुक-से जाते। अँधेरा होने तक अगर शामण्णा न लौटता तो गगी कहती, "बाबूजी के लौटने का टम तो हो गया पर अब तक आये नही?"

'आ जाएगे काम पर गये है, काम निबटाकर ही लौटेंगे।" कहकर उसे बडप्पन से समझाती। पर अगले ही मिनट गगी तसल्ली देने के लिए कहती, 'काम न निबटा तो शायद वहो रह जाएँ।"

तब वह जरा डरकर कहती, 'वहाँ कहाँ सो रहेगे। आने को तो कह गये है।'

एक दिन काफी रात हो गइ। शामण्णा नही लौटा था। राह देखने वाली गगा को डाँटकर भीतर भेज दिया और स्वय दरवाजे पर खडी होकर बाट देखने लगी। शामण्णा लौटा, हाथ पाँव धोकर खाना खाने को तयार हुआ। क्या देखता है दोपहर का खाना तक चूल्हे पर ही रखा था। तब उसने पूछा, "यह क्या? ऐसा लगता है जसे दो बार खाना बनाया है'

तब उसे कितनी शर्मिंदगी-सी महसूस हुई। पर उनके पूछने पर ही उसका उस ओर ध्यान गया था।

तब उसने कहा, "दोपहर मे देर हो गई थी, इसलिए मैंने खाना ही नही खाया।'

देर हो गई, ऐसा कौन-सा काम था?"

'काम नही, आप चले गये। यह सोच रही थी कि पता नही वहाँ क्या काम होगा? आप कब तक लौटेंगे।"

"अच्छा मेरे जाते ही तुम मेरे लौटने के बारे मे सोचने बैठ गई?"

नही आप आज जिसके लिए गये वह काम भी तो ऐसा ही था।"

उसमे चिन्ता की क्या बात थी? गाव के लफगो ने दोनो को एक दूसरे के विरोध मे कर दिया था। वैसे वे दोनो बुरे नही। बीच मे कोई समझाने वाला चाहिए था।

उसके इस तसल्ली-भरे रवैये से उसे खीझ हुई।

"आपको तो सब ठीक ही लगता है। हम यहाँ रहते है वहाँ मालूम नही लडाई झगडा हो जाए हमे यही चिन्ता हो जाती है।"

यह सुनकर शामण्णा हँस पडा था। यदि वह जरा और हँसता तो वह रो पडती।

"हाँ, झगडा भी हो सकता था, मारपीट हो सकती थी। खून भी हो सकता था। हाँ, तुम्हारी कल्पना बडी दूर तक जाती है। अगर इतनी कल्पना शक्ति है तो बैठी-बैठी कोई कविता, नाटक या उपन्यास क्यो नही लिखती?" यह कहकर वह जब हँसा तो वह भी उसके साथ हँस पडी।

उसने सोचा—उन्होने कहा था कि मैं लेखिका क्यो न बन जाऊँ।

यह बात याद करके उसे हँसी आती—मैं लेखिका बन सकती हूँ! पर उस समय हँसी नही आई थी। उस समय एक तरह का गर्व महसूस हुआ था। शामण्णा की बात मे इतना विश्वास था। उस बात को सुनने की उसमे आतुरता थी। क्या उन्होने उसे लेखिका बनने की प्रेरणा दी। तब उसने क्या सोचा था। पर एक बात याद है। साहित्यकार बनने की तैयारी मे उसने कुछ पुस्तकें पढने का यत्न किया था। पर वह वही ठप्प हो हो गया। चाहे कोई सी भी किताब लेकर बैठती या पृष्ठ खोलती तो

शामण्णा की तस्वीर उसकी आँखो के सामने आ जाती। यह क्या ? ऐसा क्यो होता है ? उनके साथ रहती हूँ, उनसे रोज बातें करती हूँ पर ऐसा क्या होता है, यह समझ म न आता।

एक दिन पढना छोडकर लिखने बैठी थी।

'बाप रे ! स्फूर्ति का भूत चढ गया मालूम पडता है।" वह चौक पडी।

शामण्णा पीछे खडा उसका लिखना देख रहा था। डर के मारे दिल काप उठा।

हाथो ने उस कागज का यत्र की भाति गुडमुडी बना दिया।

शामण्णा मुस्कराकर चला गया।

कैसा अनथ हो जाता यह क्या लिख रही थी ?' उसने कागज का गुडमुडी को खोलकर देखा। धत् ! कैसी बेशम है वह ! ऐसा पत्र लिखन पर कोई क्या कहगा ?

तब से शाता का मन चक्कर चूर हो गया, 'उसे अपना रहस्य साफ-साफ स्वीकार कर लेना चाहिए था। शामण्णा को उसका मन किसी ढग से चाहता है। मन ही क्या ? कितनी ही बार उनकी आवाज सुनकर उसके रोगट खडे नही हुए ? पुस्तक देते समय या ऐसे ही मौका पर उसक हाथ नही काँपे थे। सामने बैठकर बातें करते समय कितनी ही बार उसक मन मे यह विचार उठन से कि अभी य उठकर यदि मुझे बाँहो म बाँध लें तो ?' —उसका सारा शरीर काँप नही उठा ? कभी कभी आँखा के सामने अँधेरा छा जाता तब तो डर के मारे उसका बुरा हाल हो जाता। आँखा के सामने अँधेरा आने पर यदि व उस थाम लें तो।

कभी कभी गुस्से और निराशा से कहती, "इसका सत्यानाश हो। कभी भी आँखा के सामन ऐसा अँधरा नहीं आया।'

'लाग बातें करें तो इसम गलत क्या है ?' यह प्रश्न वह अपने आपसे पूछती पर अब उस लोगा का डर नही अपना ही डर था। अपन ही लोगो का डर था। कुछ भी हो वह विधवा है। ऐसा कुछ सोच नही सकती। पिता की आत्मा को शाति मिल सकती है ?

परन्तु विधवा का पुनर्विवाह गलत तो नही ? समझदार लोगो का यही कहना है।

गलती का यहा प्रश्न नही। यहाँ तो घराने की इज्जत का प्रश्न है, पिता की आत्मा की शाति का प्रश्न है।

जब मर्यादा का प्रश्न उठता है तब बात ही खत्म हो जाती है। यह सोचकर लबी सास लेती।

वह पागल है दिन मे सपने देखती है। यहा मर्यादा का प्रश्न कहाँ उठा? आत्मा की शाति का सबध कहा? अभी ऐसा मौका भी कहा आया? उनका कहा झूठ नही। बैठे-बैठे ही वह कल्पना किये जाती है।

'उनके' मन मे ऐसे विचारो के लिए शायद कोई जगह ही नही है। यह सोचकर वह थोडी देर के लिए समस्या हल कर लेती।

# 6

शामण्णा के मन मे जगह तो थी और बहुत थी। किसी एक अतृप्ति के कारण, इस जीवन म कदम रखने के कारण शामण्णा के मन म अनेक विचारो के लिए जगह थी। क्या वह जगह काफी न होगी?

कई बार विचारो के ताडव के कारण शामण्णा का मन जर्जरित हो उठता।

मेरा मन गरीब की गृहस्थी बन गया है। वह कई बार यह बात विषादपूर्ण हँसी से कहा करता। छोटा घर, बच्चे बेहिसाब लेकिन मन हवा की तरह चचल होता है। चाहे जितनी जगह मिले, उसम समाता ही जाता है। यही विचार उसके मन मे बार बार उठता। यही उसका सिद्धात था। कई बार वह यह सोचकर हँस पडता। कुछ भी हो दिल पेट स बडा है। यह एक खुश किस्मती है। दूसरे, जन्म भर के विचार भर लेन स भी मन को अजीर्ण नही होता। पेट भरा रहन स तसल्ली रहती है। मन भरा रहने से क्या तसल्ली नही होगी? पेट भरन स कौन सा समाज आगे बढा है। अगर तसल्ली रहे तो कदम आगे रखन का प्रश्न ही नही उठता। मन अगर नही भरता तो कोई चिंता भी नही रहती। धत्! यह कैसे उल्टे विचार? यह सोचकर कि उसे किसी मे भी सतोष नही तो एक

दार्शनिक की भाँति यह सिद्धांत मान लेना चाहिए कि असमाधान में ही मोक्ष है।

उसे तसल्ली नहीं थी, कभी भी नहीं। नहीं, शायद पहले थी। एक दिन एक छोटा-सा धक्का लगा। उस धक्के से मन अब तक स्थिर नहीं हो पाया, एक शराबी की तरह।

यह उस समय की बात है जब वह विद्यार्थी था। किस विषय में? Binomial theorem मानो? कौन जाने यही नाम बताया था। वही उसने सीख लिया। यह सिद्धांत बड़े महत्त्व का है। यही बताया था उसे। उसने जब अध्यापक से पूछा तो उन्होंने कहा था, "ऑफ कोर्स इट इज वेरी इम्पार्टेंट।' यह सोचकर कि शायद अकेले उसकी समझ में न आया हो। उसने दूसरे विद्यार्थियों से पूछा। सबने वही बात कही। Binomial theorem परीक्षा में भी आई थी। वह उसका महत्त्व बता नहीं सका। दूसरे सब खुश थे। हर एक से पूछा। सबने कहा, 'अरे पागल! यह तो हमेशा से इम्पोर्टेंट है। उसे याद क्या नहीं कर लिया?"

उस दिन उसे शर्म महसूस हुई। इसलिए नहीं कि उसे सवाल नहीं आया। बल्कि इसलिए कि वह कैसा धोखा खा गया था। महत्त्वपूर्ण हो तो याद करना जरूरी होता है।

उस बात ने उसे झिंझोड़ दिया था। वद महत्त्वपूर्ण हैं। शायद इसीलिए लोग उन्हें याद करते होंगे। याद केवल शब्द ही करने नहीं होते। अपितु यह भी सोचना होता है कि वे महत्त्वपूर्ण हैं। लेकिन?

लेकिन क्या?

शिक्षा का उद्देश्य क्या है?

ज्ञान प्राप्त करना।

ज्ञान? ज्ञान के मान क्या हैं?

तुम बड़े अक्लमंद हो, ज्ञान के माने क्या हैं? यह पूछ रहे हो? स्कूल-कालेज में पढ़ना।"

'इसके अलावा ज्ञान नहीं, यह किसने कहा?'

तुम्हें क्या लेना है? पढ़ लिख कर नौकरी करनी है या गांधी जी के आंदोलन में हिस्सा लेना है। दस साल हो गए गांधी जी का आंदोलन शुरू हुए। उसमें शामिल होकर कालेज से छुट्टी मारो।"

"अगर यह कारण न बताया तो क्या होगा ?"

'बेवकूफ हो तुम। पढने पर पोजीशन मिलती है। न पढने से पोजीशन मिलेगी क्या ? आदोलन म भाग लेने का मतलब ?

"जो भी हो पढना है पोजीशन पाने के लिए।'

"बस भई अब मैं सोऊँगा। सुबह तीन बजे का अलारम लगा रखा है।'

दोस्ता से बहस करके तसल्ली न हुई। आखिर एक दिन अकस्मात कालेज छोडकर चल पडा।

उसके दोस्ता का खयाल था कि कालेज छोडकर शामण्णा आदोलन म भाग लेगा, कैसी मजेदार बात है।

आदोनन म उसे विश्वास न था यह कोई नही जानता था। राजनीतिक आदोलन म उसे आसक्ति न थी। मनुष्य के जीवन को उत्तम बनाने म स्वभाव मुख्य है स्वराज्य नही। यह शामण्णा का विचार था। लोगा के जीवन म समरस होकर उनके स्वभाव को बदलना सामाजिकता है। जाति शिक्षा, धन, ये सब हम असामाजिक बनाते है। इनके प्रभाव का घटाना चाहिए। एसे अनेको विचार उसके मन म उठते। पता नही उसके विचार उसकी अपनी समझ म भी आते थे या नही। उसका पहला विचार यह था कि ऐसे लोगो से दूर रहना चाहिए। लेकिन जाए कहा ?

'बिट्टूर।'

"हाँ।" शामण्णा हैरान रह गया।

वह जिस गाडी म बठा था, उसम दूसरे यात्री भी है। उसे इतना भी ध्यान न रहा। उसन आँखें खोल कर देखा। सामन के यात्री आपस म बातें कर रहे थ। एक ने दूसरे से पूछा, "आप कहाँ तक जा रहे है ?'

दूसरे ने जवाब दिया 'हम दवनहल्लि जा रहे हैं। आप ?"

दूसरा वाला, बिट्टूर।

उसके सवाल का यही जवाब है। वह हैरान रह गया। तो वह भी बिट्टूर चला जाएगा। मानो उसके लिए यह आकाशवाणी थी यह साच कर वह अपन आप हँस दिया।

'वहाँ से सीधे आप हमारे गाँव चले आये।" शाता ने यह बात पूछी

थी न ? यदि वह विटदूर आने का वास्तविक कारण बता दे तो क्या वह विश्वास करेंगी।

शाता की बात छोडो। क्या वह स्वय विश्वास कर सकता है ? आज की बात उस दिन वह पाना सभव था ? सब सष्टि का मेल है। शाता को देखते ही उसे यह विचार आता कि विटटूर आना भी सष्टि का ही खेल है।

'और क्या ?'

तुम स्वय ही सोचकर देख लो। क्या तुमने कभी यह सोचा था कि तुम पढना लिखना छोड दोगे ? उस सदेह के लिए कोई कारण भी था ? तुम्ही बताओ तो जानें ? यह सब वह अपने आप मे पूछता और विचारो म खो जाता।

धत ! उसके बचपन म जिसने भी उसे देखा उसी ने यह कहा, "यह पढने लिखने के लिए ही पैदा हुआ है।' उसी वातावरण म उसका पढना-लिखना शुरू हुआ। बाद म पढना उसकी आदत बन गई। थोडे ही दिनो मे सब उसकी प्रशसा म कहने लगे।

'लडका बडा होशियार है।'

एक दिन क्या हुआ। मेरे मुह से एक सस्कृत का वाक्य निकल गया। दूसरे दिन उसी को दोहराना चाहता था पर याद ही न आया। यह लडका उस दिन पास ही बैठा था ! उसने वह वाक्य पूरा दोहरा दिया तो मैंने पूछा 'अरे नटखट तूने सस्कृत कहाँ से सीख ली ?' तब वह बोला, 'आप ही ने तो एक दिन सुनाया था।"

अच्छा। तब तो यह बडा तेज है।'

कोई बात उसकी आँखो के सामने से गुजर जाये तो उसे भूलता ही नही।

"उसके भाग्य मे बडी सी नौकरी होगी।" ऐसी अनेको सूक्तियाँ उसको याद हैं। यह भी कैसा पगला है ? वह पागल था पर उन दिनो ऐसी बातो पर वह फूल उठता था। और खेलना तक छोडकर पढने म लग जाता। यही नही ? उसे मन ही मन लोगो से यह कहलवाने की इच्छा होती इतना ही नही, देखिये यह कितना होशियार है।" इसीलिए वह कुछ विषयो को छिपाकर पढता। तब उसकी चालाकी को भाँप न पाकर

बूढे लोग कहते, "बिना पढ़े भी यह लडका कितना जानता है!" तब यह मन ही मन कहता, य बूढ लाग भी मूख हाते है।'

आग वडी कक्षाआ तक यही सिलसिला चला। अधिकतर पाठ्य-पुस्तको के अध्ययन से बिना चूके वह पहल नजर पर रहा। इसस उत्साहित हाकर और अधिक पढता कालज तक। इस प्रकार पढन क बाद एक-दम वह पढाई छोड सकता है। वह कौन कह सकता था?

तो भी उसन कालज छोड ही दिया।

विटटूर चला आया। वह भी एसे ही बिना सोचे विचारे मानो किसी प्रवाह म बह आया हो।

आगे क्या? आगे ।

शामण्णा का हृदय डर स काँप उठता। हजारो वर्षों स मन म चला आया अधविश्वास सिर उठाता। वह यहाँ आया, आगे ऐसा हुआ। रघुनाथराय क घराने के पतनोन्मुख होन म और उसके आने म कोई सबध हो सकता है? राय साहब की बात तो एक तरफ व तो बूढे हो चले थे पर गुडण्णा की ऐसी दुरवस्था होनी थी? घर का एकदम विनाश ही हा गया। बात वहाँ तक क्यो पहुँची? इसे गुडण्णा का भाग्य कह देने भर स उस तसल्ली नही हुई। इन सब घटनाआ से इसका भी कुछ सबध है। एक ही आदमी का भाग्य कह देने स नही चलता। सृष्टि का खेल कह सकते है। क्याकि सृष्टि के नाटक म गुडण्णा भी एक पात्र है। वह भी एक पात्र है। सच ही म यह सृष्टि का खेल है। यह सब सृष्टि के ही कारण घटा। मेरे कारण घटित नही हुआ, मेरे लिए घटित हुआ। यह पूव जन्म के कम नही भविष्य के द्योतक हैं।

सृष्टि एक ही है। हम सब लोगा को खेल खिलाती है। हम लाग पागल है जा उस खेल को अपना और दूसरे का समझते है। खल एक ही है अनुभव भी एक ही है। इसक सिवा और क्या है? बाहरी वश आकार सबध अलग अलग दीखन पर भीतर स सृष्टि एक ही है। उत्साह भरा मन दुख और सुख अनुभव करने वाला मन खा-पी कर तप्त होने वाला मन और बढने और बढाने वाली काम भावना, यह सब एक ही है। पेड पौधा म पशु-पक्षिया म और मुझम, सब म सृष्टि एक ही है और उसका खेल एक ही है।

शामण्णा को कई बार अपने व्यवहार पर आश्चर्य होता। इस आश्चर्य का कारण ? शांता शायद इसका कारण हो।

यह कैसी मजेदार बात है। वह बिट्टूर आया और बिल्कुल बदल गया। यहाँ बस गया तो कुछ तसल्ली हुई। मैंने क्या किया ? ऐसा असनाय सदा मन मे घर किये था। यहाँ आने के बाद उसके शांत हो जाने का मतलब ? मैं भी कैसा पागल हूँ। आदोलन मे विश्वास न रखने पर भी आदोलन मे शामिल हो गया। बाहर रहकर काम करने का विचार होने पर जेल गया, क्या ? किसे मालूम ? कुछ-न-कुछ करना चाहिए, नहीं तो तसल्ली नही होगी। इसी विचार के कारण मैं बहुत कुछ कर रहा हूँ न ?

पर यह सब बिट्टूर आने से पहले या आने के बाद ? क्या हुआ कुछ भी नहीं हुआ। क्या किया, कुछ भी नहीं किया।

पर कुछ तसल्ली तो हुई।

यह क्या रहस्य है ? यह सोचकर शामण्णा सिर खुजलाता और यह बात बहुत दिनो तक उसकी समझ म न आई। धीरे धीरे समझ म आने लगी। शुरू मे इसे इस बात पर विश्वास न होता था पर आगे चलकर उस पर विश्वास किए बिना रहना भी सभव न था। बाद म वह अपने आपको धिक्कारने लगा। बिट्टूर ही छोडकर जाना चाहता था। सदब से जेल जाने का प्रसग आया तब उसने सोचा, मुसीबत से छुटकारा मिला।

पर जेल के एकात वास म उस पर यह बात स्पष्ट हो गई कि वह छुटकारा नही पा सका। छुटकारा पाना तो दूर उसे मन ही मन यह स्वीकार करना पडा कि वह एक अटूट बधन मे बँध गया है।

उसके मानसिक परिवर्तन का एकमात्र कारण थी शांता !

यह विचार उठने पर उसे इतनी ग्लानि होती कि आत्महत्या पर उतारू हो जाता और उसका मन दुखी हो जाता।

यह क्या ?

कुछ भी नही। बस इतने से ही घबरा गये। सृष्टि के खेल म यह सहज होता ही है।

नही, मैं मैं ।

नहीं---उस लडकी के विवाह के समय खुशी खुशी काम करने वाले मैंने ।

इसीलिए तुमने इतना काम किया ? इसीलिए ? यानी ?

यानी ? ह ह तुम कौन बडे आदमी हो ? तुमने अपने को क्या नि स्वार्थ योगी समझ लिया है ? अन्य असख्य पुरुषो की तरह तुम भी एक हो।

पुरुष ? हाँ पुरुष यानी मर्द ।

नही, पागल, पुरुष का मतलब मर्द नही मर्दानगी। सब कुछ मेरे लिए है, यह समझने वाला पुरुषत्व !

छि ! क्या पागलपन है ! ऐसी बातें केवल शब्दाडबर है।

हाँ, तुम्हें समझाना हो तो शब्दो मे ही बताना पडेगा न ? शब्दो के मायाजाल मे कही सत्य को भुलाया जा सकता है ?

कैसा सत्य ?

सृष्टि सत्य है। प्रकृति के मोह मे पुरुष के फँस जाने का सत्य। मोह मे फँसने के बाद यह समझकर कि अपना दायित्व समाप्त हो गया प्रकृति से आलिप्त होने का सत्य।

छि ! यह पागलपन नही तो क्या है ? समझने की शक्ति न होने पर भी अनेक प्रकार की पुस्तकें पढने का यही परिणाम होना है—यह सोचकर शामण्णा अपने भीतर के कोलाहल को शात करने का प्रयास करता।

फिर भी कई बार और विशेषकर जब वह शान्ता को देखता तब उसका मानसिक कोलाहल और ही तरह का होता। उसके आँखो के सामने आते ही एक तरह से उसका मन उल्लसित हो उठता। कभी-कभी अँधेरे मे भी बैठे होने पर उसे ऐसा महसूस होता मानो देदीप्यमान प्रकाश चमक उठा हो। कभी-कभी भले ही मन किसी भी स्थिति मे हो उसका स्वागत ही अनजाने मे ही उसका मुख खिल उठता।

इसलिए शामण्णा को डर लगता।

मन पर चाहे कैसा भी परिणाम क्या न हो पर उसे डर नही था। मन को काबू करके उसे किसी और तरफ लगाया जा सकता था। लेकिन जब उसका मुँह अपने आप खिल उठे तो ? जब मन किसी और तरफ लगा हो तब भी मुँह पर ऐसा भाव दिखाई देने का क्या अर्थ है ? क्या इसका अर्थ यह नही हुआ कि उसकी देह और उसके हाव भाव उसके मन के वश मे नही ?

तुम्हारी यह तुम्हारे हावभाव मूर्ख ! तुमसे अलग कैसे हो सकते हैं? इसीलिए इनको एक ही मानते है। मन तुम्हारा है, सच है। इसलिए तो पुरुष का अमंत्य बहुत है। नहीं तो कल यह मन इस पुरुष देह के मोह के कारण प्रकृति के जाल में फँस ही जाएगा।

यह तमन्ना भी मात्र शान्ति है। यह सोचकर शामण्णा छटपटा जाता। जो बात उसकी समझ में नहीं आती वही सत्य लगती। तब शामण्णा और अधिक छटपटा उठता।

अंत में थककर अपने गाल पर तमाचा मारने के समान मन को समझाता वह विधवा है, यह बात मत भूल।

पागल ! विधवा ! चिरन्तन प्रकृति कहीं विधवा होती है? इसमें कोई अर्थ है? चाहे तो उसे सदा विधवा कहो—अपना खेल समाप्त होने के बाद वह किसी पुरुष के पास ठहरती नहीं अथवा उसे सदा सुहागिन कहो। एक क्षण भी वह पुरुष के सहवास के बिना रह नहीं सकती।

ऐसे मौके पर दूर बहुत ऊँची पहाड़ की चोटी पर चढ़कर कूद जाने की इच्छा होती। मूर्ख ! मूर्ख ! तुम पर नि स्वार्थ और पूर्ण विश्वास रखने वाली वह बछिया-सी मासूम है। मूर्ख ! मूर्ख ! ये शब्द वह पागल की भांति बड़बड़ा उठता।

कई बार शामण्णा यह सोचकर कि जो होना है हो जाय, निश्चित रहने का प्रयास करता। क्या उसे इस बात की कल्पना भी थी कि उसके जीवन में इस तरह के परिवर्तन होंगे? कालेज छोड़ा घर छोड़े, जीविका कैसे चलेगी? कभी इस बारे में भी सोचा? यदि देखा जाय तो विट्टूर रघुनाथराय की सहायता तथा आश्रय में बढ़कर एक आश्रम की स्थापना करने का निश्चय करना संभव था?

यह बात है तो अब यह विचार क्यों आता है? अब तक एक योजना बनाकर या एक कार्यक्रम का निश्चय करके उसने जीवन थोड़ा ही चलाया था। आगे के लिए ऐसी ज़िद क्यों? ज़िद? अगर ज़िद करे भी तो उसे पूरा करना क्या संभव है? जीवन—रायसाहब कहा नहीं करते थे और शायद ठीक ही कहते थे कि एक प्रवाह है। प्राणी उसमें तरने वाली चीज़ है। ठीक है। जब प्रवाह तेज न हो उसमें तैरना और यह सोचना कि मैंने

इतना पर न्यिा । जब प्रवाह तज़ हो तो ? तो उसम स्वय वह जाना।

इसका मतलब ?

मानव असहाय है। कुछ करना चाहता है। क्या वह करना निरथक होना है। घत तरे की यह कस हो सकता है ?

प्रवाह की गति कभी मद होती है और कभी तज । प्रवाह जब मद रहता है तब हाथ पर चलाकर तैरना बुद्धिमानी का लक्षण है। बाकी समय म—जो होना है हो जाए—वह देना भर पर्याप्त है। उनके जीवन का प्रवाह मद है या तज़ ? इस एक विषय म तो वग स ही कहा कहा जा सकता है। एक तरफ लाग बातें बनाते हैं और दूसरी आर शाता है।

लाग चाहे जा बातें बनाएँ यह गलत नहीं। उस पर गुस्सा भी नहीं। स्त्री पुरुष जब एक जगह रहत हो तो व क्या एसा न समझें ? हमारे यहाँ ता शास्त्र विहित सबधा क बिना स्त्री-पुरुष एक जगह रह ही नही सकन। आखिर क्या नही रह सकत ?

उस दिन उसन शाता से मजाक म कहा था न ? लेखिका बनो। शायद अगले न्नि ही या दो-तीन दिन बाद वह बैठी कुछ लिख रही थी। उस चिढाने को क्या उसने यह नही पूछा था, "यह क्या है ? कोई प्रेम कथा लिख रही हो ?

बेचारी !' वह चौक पडी थी। उसका भयभीत मुख देखकर वह भी डर गया था। उसका डरा हुआ मुख कितना सुदर लगा था, फिर भी उसन अपने मन का काबू म कर लिया था।

उसन पूछा था, "क्यो ?' तब उसने कहा, "कुछ नही लिख रही हो तो प्रेम-कथा ही हो सक्ती है।"

' तो प्रेम कहानी नही लिखनी चाहिए ?"

छि । छि । प्रेम-कहानी न हा तो साहित्य का क्या हाल होगा ?"

साहित्य म उसक अलावा और कुछ ।

' और कुछ भी नहीं। हाने पर भी उस कोई नही पढ़ता।'

'आप भी नहीं पढते ?'

किसी एक के लिए साहित्य कौन लिखता है, शाता ?

एसी कहानियो पर आपका इतना गुस्सा है ? '

' गस्सा नहीं। बात यह है कि यह तो निकम्मे लोगों का

समय न कटे तो प्रेम कहानी पढ़ना और कुछ लिखा नही जाता है तो प्रेम कहानी लिखना।"

तब उसने उसे हराने के लिए गर्व-पूर्वक हँसकर कहा था, "कालिदास ने भी तो यही सब लिखा है।"

"पर कालिदास ने 'रघुवंश' भी लिखा है और 'अजविलाप' भी। उसने स्त्री को गृहिणी, सचिव, सखी, प्रिय शिष्या, ललिता, कलाविद आदि कहकर स्त्री-पुरुष के बीच कई संबंधो को व्यक्त किया है।"

क्यो ? उस दिन उसने इतनी हठपूर्वक यह बात कही थी ? शांता भी उसकी बात का आवेश देखकर हैरान सी असहाय होकर फीके मुँह से उसे देखती रह गई थी।

उस दिन शामण्णा को विश्वास हो गया था कि स्त्री-पुरुष के बीच अनेक प्रकार के संबंध हो सकते हैं उसके और शांता के बीच भी अनेक संबंध हैं। साथ ही साथ 'यह' भी एक है। उस दिन शामण्णा को यह आभास हुआ। उसके मन में शांता के बारे में 'ऐसा' विचार है या नहीं है, यह बात दूसरों को दिखाना ? केवल दिखावा भर है। उसने कितने आवेश से वह बात कही थी। प्रणय प्रेम का मतलब क्या है ? उसे शांता का सहवास अच्छा लगता है। क्या यह प्रणय है ? 'सहवास' कहकर क्या वह अपने आपको धोखा देने का प्रयास नहीं कर रहा ? सहवास नहीं, सान्निध्य, सान्निध्य भी नहीं, शरीर ! उसको छूना उसके शरीर पर हाथ फेरना, उसे पास खींच लेना उसके बालो को सहलाना। छि ! क्या प्रेम के माने यही है ? शरीर शरीर को चाहता है, अथवा क्या यही प्रेम का प्रथम लक्षण है ? छि ! छि ! मैं पागल ही हो गया हूँ – शरीर के शरीर को चाहने को ही यदि प्रेम का प्रथम लक्षण कहें तो वेश्याओं के मोहल्ले को 'प्रणय-क्षेत्र' कहना पड़ेगा।

तो ? शामण्णा को कई बार कोई हल न सूझता था। अपने मन में कहता था जो होना है हो जाय, लेकिन लोग बातें बनाते हैं। वह प्रवाह से भटक गया है ? बाद में एक बार गंगी पर संदेह हुआ। उसने तो कहीं ऐसी बातें नहीं फैलाई ? उसे सुब्बक्का के पास भेजने की शांता की सलाह को उसने एकदम मान लिया था। बाद में उसे डर लगा था। खाने की वस्तु माँगूँ या न माँगूँ यह सोच सोच कर थक गया। बच्चे से यदि यह

पूछा जाय कि तुम लड्डू खाओगे तो जितने उत्साह से वह हाथ फलाता है, उतने ही उत्साह से उसने गगी को भेजने के बारे मे शाता की सलाह को मान लिया था। क्या रहस्य खुल गया। शाता ने कहा था, मैंने पूछा था सुब्बक्का न मना कर दिया।' उसने ऐसा क्या कहा ? गगी की अनुपस्थिति साचकर मेरे बारे मे अविश्वास तो नही हुआ ? अथवा सच ही मे सुब्बक्का ने ऐसा कहा था ?

एक बार फिर से क्यो न पूछे ? वही स्वय क्यो न पूछ लें ? गगी को भेजने न भेजने की बात तो बाद म उठेगी। यदि सुब्बक्का ने शाता को तब वसा कहा भी होगा तो अब उसका विचार बदल भी सकता है।

पूछकर ही देखना होगा। मिलकर आना चाहिए। सुब्बक्का को खुशी होगी। अब उसका बेटा मैट्रिक पास कर चुका है।

# 7

रागण्णा ने मैट्रिक कर लिया था। सुब्बक्का यही बात सोचती हुई हाथ पर गाल पर टिकाए बठी थी। तभी बेटी न कहा

"मा, रागण्णा पास हो गया। मैं दौडी आ रही हूँ। मैं ही तुम्हे [illegible] यह खबर सुनाना चाहती थी।" यह कहते समय सरस्वती का गोरा [illegible] थकान और खुशी से और भी लाल हो उठा था।

सुब्बक्का ने बेटी की ओर देखकर केवल इतना कहा, "पास हो गया ?'

बिना कुछ ज्यादा बोले घूरती हुई माँ को [illegible] देखा और [illegible] सामने थकी और मुह बाये खडी बेटी को माँ ने [illegible]।

माँ का घूरना देखकर [illegible] [illegible]। [illegible] मे मुह का पसीना पोछ कर [illegible] [illegible] हुई [illegible] गई।

सुब्बक्का वैसे ही बैठी रही।

"रागण्णा पास हो गया ?" [illegible] मुह म निकल [illegible] सही पर उसका मन कहीं और था। बेटी म [illegible] म [illegible] आने [illegible]

तरफ ऐसे आँखें फाडे ताक रही थी मानो बेटी अब भी उसके सामने हो।

'मुझे यह बात ध्यान मे नहीं आई।" ये शब्द अनायास ही उसके मुह से निकल पड । अपनी ही आवाज से आवेश से जाग पडी। उसने घबरा कर जरा देखा, "कही, बेटी के कानो म ये शब्द तो नही पड गये ?

अब फिर स वही शब्द उसके मुह से निकले, "मुझे यह बात ध्यान मे नही आई थी अब यह एक चिंता उठ खडी हुइ।" कह कर उसने लबी साँस ली। बेटे की पढाई के लिए दिन रात परिश्रम करके थकी मुव्वक्का की आँखो मे पहली बार इस तरह आँसू बहने लग मानो वह पहली बार रोई हो। आँसू बह जाने मे ऐसा महसूस हुआ माना वह हल्की हो गई हो। वह बैठे-ही बठे आडी लेट गई। बायें हाथ का तकिया लगा लिया। लटे ही लेटे फिर से बोली, 'मैं कहती हूँ, अब तक यह बात मेरे ध्यान मे कैसे नही आई ।"

बेटी की बात से ऐसा लगा माना उसका एक भार उतर गया हो। तभी ऐसा लगा मानो एक दूसरा भार आन खडा हो। बेटी का वह उत्साह दौडने की थकान, लाल मुह सताप से खिला मुख, यह देखते देखते उसका बेटे की ओर ध्यान ही न रहा। वह एकदम वह बात भूल सी गई। लगा मानो एक बात उसके सामने मूर्तिमान हो सामन आ कर खडी हो गई। सरस्वती ! मेरी बेटी ! यह लडकी ! क्या यह मरी ही सरसी है ? इतनी बडी हो गई ?

यह बात कैसे अब तक मरे ध्यान मे नही आई ? उसने फिर से यही सोचा।

बेटी बडी हो गई— यही एक विचार मुव्वक्का को साल रहा था। इस विचार का महत्त्व ज्यो ज्यो उसके मन म बढ रहा था त्यो-त्यो उस लग रहा था कि बेटे की समस्या सुलझ गई।

वर ढूँढना होगा। लेकिन दहेज कहाँ ? पर आगे बढकर ढूँढने वाला कौन है ?

मुव्वक्का का मन बराबर आगे-आगे ही दौड रहा था।

'माँ।'

बेटे की आवाज सुनकर मुव्वक्का की विचार-तन्द्रा भग हुई और वह जागी, बोली

"तेरी उमर सौ साल की हो, बेटा ! अब बस तेरी बहिन का ब्याह भर हो जाय तो मेरा जन्म सार्थक हो गया समझो। मेरी जिम्मेदारी खत्म हो गई।"

'यह क्या ? मैं क्या पागलों की तरह बात कर रही हूं । लड़के ने खुशी खुशी आकर बताया कि वह पास हो गया। अच्छा हुआ ? कितने नंबर आये ? अभी बी० ए० तक पढ़ना है। वह कब तक पूरा होगा ? आदि प्रश्न पूछने छोड़ कर यह क्या ले बैठी ? यह कैसा पागलपन है। इतने दिन रात दिन भूख और नींद की परवाह न करते हुए बेचारा पढ़ा। अच्छा सा खाना बनाऊँगी। आराम से बैठ कर खाओ, रात का गरम गरम खाना खाकर जल्दी सो जाओ। अब जल्दी सुबह उठने की जरूरत नहीं।' ये सब विचार कहाँ चले गए ? बेटे के पास होने की क्या उसे खुशी नहीं ? क्या नहीं ?

वह अपने को सँभालकर बोली, "मेरा जन्म सार्थक हो गया बेटा।'

रागण्णा के मुंह से शब्द ही नहीं निकले। उसी को आँख भरकर देखती माँ को रागण्णा ने देखा।

मुझे मालूम था लेकिन मैं क्या बुरा बनूं। यहाँ तक पढ़ लिया, यही बहुत है। कौन किसके लिए कितने दिन मेहनत करता है ? जाने दो, मेरे भाग्य में इतना ही बदा था। आगे पढ़ने की इच्छा थी पर कैसे ? माँ की बात गलत नहीं। बहिन की शादी होनी ही चाहिए। पर आते ही मुझे यह सब नहीं सुनाना चाहिए था। कितने नंबर आये यह पूछती, कहती आगे पढ़ो, चाहे मैं उसके लिए तैयार होता या नहीं। लेकिन उसने तो वह एक बात कह कर सिलसिला ही खत्म कर दिया। खैर, ज्यादा बुरा भी नहीं लगा। मेरा जीवन भी सार्थक हो गया।" कह कर वह भी हँस दिया।

तुम्हारा अभी से क्या निबट गया। अभी तो ।'

'लड़के को कहीं बुरा तो नहीं लग गया। मुंह उतर गया। तब भी क्या किया जाय ? गरीबी ! और कितना पढ़ा सकती हूँ और पढ़ाना भी कब ? मैं अकेली क्या क्या कर सकती हूँ ? बेचारे लड़के का भी भाग्य है ? नंबर अच्छे आ गये हैं यह भी एक दुर्भाग्य है। वह और पढ़ना चाहता होगा। उसमें गलत भी क्या है ?

'अभी बी० ए० भी करना है।"

"यह सब हमारे लिए कैसे सभव है ? छोडो माँ।"

बी० ए० तो कर सकता था पर अब कैसे ? बहिन की शादी भी तो करनी है। उनका भी क्या दोष है ? अरे ! माँ का क्या दोष ? जो था वह सब चला चला गया बेचारी का ! यह सब मेरे भाग्य से ही हुआ होगा। मेरे जन्म के बाद से ही हमारा घर गिरावट की तरफ चलने लगा। पढू तो स्कालरशिप मिल सकती है। पर यह कैसे कहूँ ? मैं कहूँ कालज जाऊँगा और वह उसी को गलत समझ बैठें तो ?

'कालेज म खच काफी पडता है। हम से हो नही पाएगा। तुम जानती हो मा कालेज जाने पर ढग क कपडे-लत्ते चाहिए जान दो। मट्रिक हो गया अब क्या डर है।'

'मैं भी तो यही कह रही थी। तुम्हारा तो हो गया। अब तुम्हारी बहिन की शादी हो जाय तो ।"

'उसकी चिता तुम क्या करती हो ? दखो अब मैं बडा हो गया हूँ। सरमी की शादी की चिता तुम मुझ पर छोड दो।'

इस पर वह हँस पडी। बेटा भी हँस पडा। 'हाँ रागण्णा बडा हो गया। मद जो ठहरा। ऐसे बातें कर रहा है मानो घर का सब कुछ वही हो। कष्ट उठा कर जिस पेड को बडा किया, वह अब छाया देने लगा है !'

अरे ! बठ जा रागण्णा। फिर से बाहर नही जाना। कुछ खाने को बनाती हूँ। कितने दिन हो गए तुझे पेट भर खाए।"

'अरे ! तुम फिर से उठ गई खाना बनाने के लिए, रहने दो। शाम का खाने के साथ कुछ मीठा बना लेना। तब तक मैं दोस्तो से मिलकर आता हूँ।'

उन्ह बुला भी लाना।

आज नही।

'घर म कुछ है भी या नही। या लडके को तसल्ली देने के विचार स ही दोस्तो को बुला लाने को कहा ?

जब कालेज ही नही जाना है तो दावत की क्या जल्दी है। सब दोस्त कालेज चले जाएँगे तो बाद म क्या काम रहगा ? किस बात की खुशी म दोस्तो को बुलाया जाय ? अगर आ जायें तो यही समझेंगे कि मैं कालेज जाने की स्थिति म नहीं हूँ।

उसने आवाज ज़रा धीमी करके माँ को तसल्ली देने के स्वर में कहा था, "आज नहीं चाहिए मां।"

अकेली औरत है, कोई सहारा भी नहीं। वह क्या कर सकती है? वह बेटे के मन की बात अच्छी तरह समझ गई थी। इतनी बात हो जाने पर भी उसने उसके नंबर नहीं पूछे थे। पूछने पर बताता भी या नहीं? मुँह पर हँसी होने पर भी भीतर क्या-क्या हो रहा होगा, क्या वह नहीं जानती? दुखी होने पर भी मन को कसे मजबूत करके बच्चा बाहर गया। वह भी कैसी है? बात करते करते रुलाई नहीं जता सकती थी क्या? परीक्षा में पास होने पर लोग पेड़े बाँटते हैं? और यहां चाय तक नहीं है।

मुज्जक्का शाम तक चुपचाप जहां की तहाँ बैठी रही। वह रो रही थी बल्कि यह कहना चाहिए कि रुलाई ने उसे घेर लिया था। ससुर जी होते तो क्या ऐसा ही होता? सारे गाँव में पेड़े बाँटते। अरे पगली! ससुर जी होते तो ऐसी स्थिति ही न होती। जिनके कारण यह स्थिति पैदा हुई वे भी नहीं हैं। वे चाहे जमे भी रहते, बेटे की होशियारी देखकर उन्हें भी अक्ल आ जाती। अब बेटे की स्थिति देखकर उसे बुरा नहीं लगा। बेटे को पढ़ना चाहिए। पढ़कर आगे बढ़ना चाहिए। यह बात उसके मन में नहीं। पता नहीं रागण्णा को कैसा लगा? गरीबी को क्या किया जाय? उस पर खानदान! बड़ी बेटी को घर में रखे तो लोग क्या कहेंगे? जो भी हो लड़कों की बात कुछ और होती है। पढ़ें या बिना पढ़े रह जायें, कुछ भी करें तो चल जाएगा। पर लड़की को कितने दिन तक बिठाया जा सकता है। रामा को तो लगता होगा कि बहन की शादी के लिए इतनी जल्दबाजी क्या? मेरे लिए भी तो बेटा और बेटी बराबर ही हैं।'

शाम को रागण्णा जब घर आया तो माँ ने तरह-तरह का स्वादिष्ट खाना बनाया। अकेले रागण्णा के लिए पटरा बिछा था। यह बात उसकी समझ में नहीं आई। उसने पूछा

"कहाँ रहूँ माँ?"

'कहाँ का मतलब? तुम अकेले ही बैठोगे। तुम्हारे लिए ही तो पटरा बिछाया है।"

"सरसी क्या करेगी ? मैं गरम गरम बनाती हूँ, वह तुम्हे परासगी। अब वह छोटी नही।"

रागण्णा अब भी समझ न सका। मेरे लिए दोनो ही बराबर हैं। वैसे देखा जाय तो बेटे का ही महत्त्व होता है। आज नही तो कल सरसी यह घर छोड़कर अपने घर चली जाएगी। कल बेटे को ही घर चलाना पड़ेगा। जल्दी बड़ा हो जाय कमाने लग जाये। शादी करके घर बसा ले। इसी लिए कुछ और भी पढ़ ले तो अच्छा है। पर मेरे बूते म कहाँ ? मैं भी क्या करूँ ? उसके लिए मैं कितनी चिन्तित हूँ यह तो उसे पता चले।

रागण्णा न मजाक म बहिन से कहा, "बाप रे बाप ! तो अब से सरसू बाई कहना पड़ेगा ?

फिर वही बात। शायद उसे यह सदेह होगा कि मैं भूल गया हूगा। अब यह छोटी नही। उसकी जल्दी शादी होनी है तो मेरी पढ़ाई खत्म। अब पढ़ाई की व्यवस्था हो चुकी। यह मेरी पढ़ाई के श्राद्ध का खाना है।'

क्या कहा ?

' मुझसे कुछ पूछा मा ?'

हाँ, तुम कुछ कह रहे थ ?

' कुछ भी नही। आज कई जगह नाश्ता कर चुका हूँ। तुमने इतना सब क्या बना लिया ? देखता हूँ भूख है भी या नही ?"

तब सरसी एकदम बोली, "मैं बनाऊँ ?"

रागण्णा ने खीज म पूछा, क्या ?'

क्या हुआ सरसी ? खीर मे चीनी कम है क्या ?'

'नही माँ। तुम्हें तो अपनी रसोई की ही फिकर है—भैया को भूख क्या नही, मैं बताऊँ ?

"क्यो नही सरसू बाई जी ?'

' उसे अभी कालेज जाने का जोश है ?

जाएगा पर अभी तो कुछ दिन बाकी हैं न ?'

' जा चुका मैं कालेज। मेरा खर्च तेरा मियाँ देगा ?'

' जाओ जाओ भैया ! तुम ऐसे कहोगे तो मैं उनसे मना कर दूगी।

भाई ने दर्प में पूछा, क्या कहेगी ?'

बीच ही म माँ घबराकर बोली ' छिस ? ए पगली !'

"रामाचारी के घर, सच बात तो यह है कि मैं आप लोगों को बताना नही चाहती थी।"

"क्या ?"

"कौन रामाचारी ?"

"कुछ भी नही इतनी जोर से चिल्लाओ मत। वे भी सब यही लाकर दें तो मुझे घर छोडकर जाने की जरूरत नही पडेगी।"

"साफ साफ कह जरा दखें।"

"बेकार म डाटता है। क्या मैंने अपने लिए किया है ? इतने गुस्से से देखने की क्या बात है ? उनके बच्चो के कपडे सीकर देना, उनको पापड बनाकर देना, उनके मसाले कूटकर देना, यही काम करना है। एसा लगता है, तुम लोगो के लिए कुछ भी नही करना चाहिए।' सरसी धरती पर बरतन रखकर रोती हुई वहा से भाग गई। एक ही कमरा, दिया भी एक ही था। खाना खाते भाई के सामने दिया रखा था इसलिए उस अँधेरा कोना ढूढने मे मुश्किल नही हुई। पगली! अँधेरे मे बैठकर बिलख बिलख कर रोने लगी।

सुब्बक्का को उस सध्या की बात याद आते ही वह दृश्य आखो के सामने आ खडा होता। भाई-बहिन का एक ही खून है। यह बात वह सुनने वालो मे बडे गर्व से कहती। उसे यह बात बार बार कहने पर भी तृप्ति न होती

'क्या बताऊँ बहिन एक दिन क्या हुआ ? लडकी हाथ का बरतन जमीन पर पटककर कोने मे जाकर बिलख बिलखकर रोने लगी। मुझे बहुत बुरा लगा। किसी एक दिन बच्चो को अच्छा खाना खिलाना चाहती थी, उसी दिन एसा हो गया। इसलिए खाना पकाने म हाथ ही आगे नही चला। समझ मे नही आया क्या करूँ। सोचा कि कही और झगडा न बढ जाय। तभी राग्या खाना छोडकर उठ खडा हुआ। तब और डर लगा कि झगडा कही और बढ न जाय। मैं क्या करूँ। इसलिए बिना हाथ धोये ही राग्या के साथ खडी हो गई। आप शायद सच न मानें। शाम का समय है सच कहती हूँ। जो आखो ने देखा वही बता रही हूँ। कसम खाकर कहती हूँ बहिन, मैंने वहा क्या देखा, जानती हो! वृद्ध राग्या म— है क्या कर रहा था ? बहिन की पीठ सहलाता हुआ बठा था—न कोई

न चीत आगे जाकर देखती हूँ, उसकी आखा से बेहिसाव आसू वह रहे हैं। गले की नसें फूल गई है। बोल भी नही निक्ल रहा है।

राग्या राग्या कहती हुई मैं भी उनके सामने बैठकर जोर से रो पडी। क्या करें वताइए ? अमीरी और गरीबी तो भगवान के हाथ की बातें ह। पर प्रेम बाटना तो अपने हाथ की वात है। पता है, आगे क्या हुआ ? हम दोना को रोते दखकर सरसी घबरा गई। आखे पोछ कर वह हम विटर विटर देखने लगी। उसकी शक्ल देखकर उस समय किसी को भी हँसी आ जाती।

आखिर पहले राग्या ही हँस पडा। वास्तव म तव मेरा ज म साथक हो गया। दोनो मेरे ही पेट के बच्चे है। दोना को एक दूसरे के लिए जान दत दखकर मुझे ऐसा लगा वही मरी आखें मुद जाती तो मुझे मोक्ष मिल जाता। आखिर मैने ही कहा, रागण्णा, खाना छोडकर उठ आया है चल।'

सरसी भी खाना खान को चले तो खाता हूँ।

' ऊँहूँ।

'ता मैं भी नही खाऊँगा।

' उठ बेटा सरसी। कहकर मैने उसे वात्सल्य के अधिकार स उठाया।

इसम मेरी क्या गलती है, बताइए ?'

काई गलती नही।

' तेरा भाई अभी स कालिज कहाँ जा रहा है ?

' क्या कहा भया ?

जाऊँगा वावा, पहल खाना ता खा लू।

' यानी ? मैंने रामाचारी के घर की वात ?

ऊँहूँ।

मतलब ?

मतलब यह कि मैं कालज जाऊँगा। उसम काई न्किरत नही। कई टयूशनें मिलेंगी साथ स्कॉलरशिप भी मिल जाएगी।'

'तो मैं उन्हे यस मना कर दूँ ?

" रागण्णा हँस पडा और बोला, 'रामाचारी के घर की बात है न,

मैं सँभाल लूगा ।'

" सब उठ बठे। रागण्णा ने बायें हाथ से बहिन के लिए एक पटरा विछाया। सरसी ऐसे चुपचाप बैठ गई मानो उसकी चोरी पकडी गई हो।

" तब रागण्णा ने कहा, 'माँ, रोन से कमरत हो जाती है। ढेर सा खाना है या नही।' अब बेचारी सरसी भी बिना हँसे रह न सकी। "

लेकिन सुब्बक्का की चिंता अभी दूर नहीं हुई थी। क्या सचमुच रागण्णा कालेज जाएगा ? ट्यूशन से इतन पसे मिल जाएँगे ! पता नही ये बच्चे क्या-क्या करन वाले हैं किसी बडे से सलाह करनी चाहिए, लकिन किससे करें ? परतु वह चिंता भी अधिक दिन न रही। इस घटना क दो-तीन दिन बाद ही रागण्णा एकदम आकर बोला

"मा, दखो, कौन आया है ?"

"अच्छी तो हैं ?"

सुब्बक्का को ऐसा लगा मानो तीना लोका की सपत्ति ही मिल गई हो। सामने शामण्णा खडा था।

"शाता कैसी है ? गाव के क्या हालचाल है ? आप तो इधर आत ही नही। अरे ! आश्रम मे कितने बच्चे आ गये ? यह क्या, शाम का यही खाना खाइए। आज ही वापस जाना है ? वह भी ऐसे हो करती ह। आत ही जाने की रट लगाने लगती है। चाय मे दूध कम है क्या ? और ता सब ठीक हैं ? भगवान ने सब ठीक ही कर दिया। अब एक ही बात रह गई है रागण्णा कालेज मे नाम लिखाना चाहता है। ट्यूशन करने की सोच रहा है।'

तब शामण्णा बोल ही पडा "मुझसे पूछें तो मैं यही कहूँगा कि रागण्णा को कालेज जाना ही चाहिए।'

"पर हम यह कसे निभा पाएँगे ?'

"आप चिंता न कीजिए। उसके नबर भी अच्छे आये ह। उस कालेज जान दीजिए। रामाचारी का लडका भी कालेज जाएगा। साथ हो जाएगा। आप क्यो चिंता करती हैं ? आप अपन लडके को कितने दिन तक छाटा समझती रहगी अरे रे ! तुम्हे गुस्सा आ गया क्या, सरसी ? तुमने क्या कहा रागण्णा ? ओह ! सरसू बाई कहना चाहिए। अच्छी बात है, भई। सरसू बाई के लिए हम एक अच्छा सा लडका ढूढ लाएँगे। आप काहे

का चिंता करती है । सुब्बक्का ? हम लोग नहीं हैं क्या ? नहीं, आज ही मुझे जाना है । अब मैं चला । रागण्णा कालेज जाएगा । स्कॉलरशिप भी मिल सकती है ।'

स्कॉलरशिप की बात वहुत ही शामण्णा को याद आया । स्कालरशिप की बात मैंने किसी से कही थी । किसी से कही जरूर थी। कहाँ ? कब ? किससे ? कोई अपना ही है जान-पहचान का । आह ! याद क्या नहीं आता ? हाँ, बंबई में कहा था, । हाँ, हमारे उस कालिया के लड़के के लिए । उस लड़के का क्या नाम है ? खैर ।

हाँ स्कॉलरशिप मिलेगी तो और भी अच्छा हो जाएगा । न भी मिले तो भी कोई बात नहीं । कुछ न कुछ और करेंगे ।"

फिर एक दूसरी बात शामण्णा के ध्यान में आई । स्कॉलरशिप मिल ही जाएगी, इसका क्या भरोसा। रामाचारी भी कह रहे थे। लेकिन स्कालरशिप के लिए केवल नंबर से ही काम नहीं चलेगा । उसके लिए खास जाति होनी चाहिए । उसी के भरोसे क्या रहें ? तब उन्होंने कहा

"भई रागण्णा ! अगर स्कॉलरशिप न मिले तो मुझे खबर देना ।'

तभी फिर से शामण्णा को बंबई की बात याद आई। वह सोचने लगा, उस बेवकूफ कालिया ने खबर ही नहीं दी । पता नहीं उसके लड़के को स्कॉलरशिप मिली या नहीं । पता नहीं वह लड़के को पढ़ा भी रहा है या नहीं ।'

'कुछ भी निश्चित रूप से कहा नहीं जा सकता । अच्छा अब मैं चलता हूँ । सुब्बक्का आप फिकर न करें ।"

रागण्णा कालेज जाने लग गया था । पर सुब्बक्का को चिंता सताए जा रही थी । शामण्णा ने कहा था कि वे सरसी के लिए लड़का देखेंगे । पता नहीं उन्हें याद भी है या नहीं ।

सुब्बक्का को एक और भी चिंता थी । रागण्णा को स्कालरशिप नहीं मिली थी ।

# 8

भरमा का स्कालरशिप मिल रही थी, यही बात कालिया को चिंतित किए थी। शुरू शुरू मे तो उसे अभिमान महसूस होता था। लडका होशियार है, यह सोचकर सतोष भी होता था। परतु धीरे धीरे वही बात कालिया के अमताप का बीज बन गइ। क्यो ? मालूम नही। अभिमान और सताप के दो पाटो के बीच कालिया पिस रहा था। एक दिन वह बात उसकी समझ म पूरी तरह से आ गई। एक दिन बाजार म कालिया ने एक बढ़िया कमीज़ देखी, वह देखता हुआ खडा हो गया। कमीज़ को देखते ही उसे पहले भरमा की मूर्ति उसकी आखो के सामने खडी हो गई। लडके को जँचेगी, यह सोचकर उसने उसकी कीमत पूछी, कीमत नौ रुपये थी। 'अरे! इसे सोने की समझ रहे है क्या ?' सोचते हुए उसने पूछा, "यह एक दजन के दाम हैं या एक कमीज के।" उसकी सरलता को देखकर दुकानदार हँसकर बोला, "सिर्फ एक कमीज नौ रुपये की है।" बहुत बढिया होगी यह समझते हुए उसने रुपये देकर कमीज़ खरीद ली और घर आया। भरमा अभी आया नही था। 'अच्छा ही हुआ एक और मौज करूँगा' सोचकर वह दूध खरीद लाया और खीर बनाई। वह इसी प्रकार विचारो मे खोया हुआ था कि खीर खिलाकर नई कमीज़ पहनाऊँगा। और उसका जन्मदिन सा मनाऊँगा। तभी भरमा आ गया। कालिया ने बेटे को गौर से देखा। सोचा—बेटा का शरीर अच्छा गठा हुआ है। ऐसा महसूस हुआ कि बेटे के शरीर का एक-एक अग उसने स्वय तराशकर उसम प्राण फूके है।

'क्यो भरमा, भूख नही लगी क्या ?" उसने पूछा।

क्या ?"

'थाली के सामने बैठ तो, पता लग जाएगा।'

'तुमसे कितनी बार मना किया है कि 'बैठ' न कहा करो।"

'अरे, मुह से गलती से निकल गया रे!

कालिया का उत्साह वही आधा हो गया। बेटे का रग-ढग दे

उसे आश्चर्य हुआ। उसने सोचा, अरे इसकी तरह मैं कही स्कूल मे

हैं। यह तो हमारी जन्म जन्म से चली आई जाति की माया है। यह लड़का ऐसे क्या करता है ?

उसने कहा "हमारे यहाँ ऐसे ही बोलते हैं बच्चा।"

भरमा ने खीझकर कहा, "इसीलिए तो कहता हूँ, ऐसे मत बोलो।

बाप ने शांति से पूछा "क्या रे भरम्या, इससे क्या हो जाता है ?

मुझे भरम्या मत कहकर बुलाओ, अभी बताए देता हूँ। यह कह कर वह झुँझला उठा। तब से उस बेटे से बात करने में संकोच होता था। पर उस दिन की बात ही कुछ और थी। खीर खाकर कमीज देखता। तो ।

उसने कहा था, "भरमा खीर पकाई है इसलिए कह रहा था।'

"मुझे भूख नहीं।

आँ ? '

'तुम्हें कितनी बार कहा है कि बिना पूछे चीज न बनाया करो। 'खीर कह रहे हो खीर कहो 'खीर'। उसके लिए दूध चाहिए। चीनी चाहिए पकाने को कोयला चाहिए ईंधन का खर्च बेकार में ।'

कालिया हँस पड़ा। उसने सोचा बेटे को बाप से प्यार है। बेटा बड़ा हो गया है। बाप का खटना सह नहीं सकता।' उसका गला भर आया। झूठी हँसी से गला साफ करते हुए बोला

'खर्च की चिंता तुम क्या करते हो, जब तक मैं हूँ ?'

इसका मतलब ? तुम जो कमाते हो वह सब खर्च कर दू ?'

'तुम्हारे लिए चाहे जो भी करूँ, वह मुझे खर्च नहीं लगता भरमण्णा।'

तो मेरी बात सुनो। बहुत दिन से मैं तुमसे कहना चाहता था। मुझे स्कॉलरशिप मिलती है। तुम्हारा एक पैसा भी मुझे नहीं चाहिए। तुम जो कमाते हो उसे ज़रा थाम रोककर खर्च करो। बाकी जो बचेगा उसे पोस्ट आफिस में जमा करा देंगे।'

कालिया के लिए मानो आसमान ही टूट पड़ा। वह बेटे के लिए सब कुछ करने को तैयार था। पर बेटा ही मना कर रहा है पैसा बचाने को कहता है। और जोड़ना चाहिए। क्यों ? बिट्टूर में जमीन खरीदनी है क्या ?

दा" ौर पर के प्रति कत्तव्य ।

भरमा को यह साचन म अधिक देर नहीं लगी कि उसका अपनी जाति के प्रति यह कत्तव्य है। उस समय समस्त दश मे उसी का जाति की चचा चल रही थी। हरिजन का मदिर-प्रवश आन्दालन का नतृत्व स्वय महात्मा जी कर रहे थे। लेकिन उसमे उन्ही का स्वाथ है, ऐसी उसकी जानकारी थी। पहले उसे यह मालूम न था। एक दिन अपनी जाति क नता क भाषण स यह बात उसके दिमाग म घुस गई थी। एसा लगा कि उसका भाषण सुनते ही एक नई बात, एक नया दशन समझ म आया हो। घर लौटत ही उसन अपन बाप स कहा

बापू तुम्ह पता है ?'

क्या र ? कौन सी बात ?'

यही, गाधी उपवास क्यो कर रहा है ?'

गाधी । क्या कहा ? धत पगला ! ऐसे बडे आदमी के प्रति ऐस नहीं कहत । उन्ह महात्माजी क्यो नहीं कहता ?"

यह सब ढोग है। आज उन्होन यह सब अपने भाषण म बताया कि गाधी कौन सा बडा आदमी है '

अब ऐसा क्या हो गया ?

'हरिजनो को मदिर क्यो जान देना चाहिए। गाधी ऐसा क्या कहता है मालूम है ?'

'क्यो ?

क्या के माने ? मदिर म जान दिया तो बात ही खत्म हो गई न। अर ! तुम लोगो को मदिर म जाने दिया कि नहीं ? अब और क्या चाहिए ? 'अब जाकर अपन हरिजन टोले म बैठा कहेग ? यह है इसका उद्देश्य।

"अरे बाप रे बाप ! किस बदमाश न गाधीजी पर एसा आरोप लगाया ?

किसन क्या मतलब ? व हमारी ही जाति के है।"

'हमारी जाति के तो है। ठीक है पर उन्होन हमारे लिए किया क्या ?

गाधीजी ने भी हरिजनो के लिए क्या किया है ?

था, तभी यह लडका बडा तेज था।"

यानी ? अपने वेटे को हासियार भी नही कहना चाहिए ?"

'जब तुम ऐसे बात करते हो तब मुझे अपने को तुम्हारा वटा कह लान म भी शम आती है।"

ए भरमण्णा अगर तुम्हे शरम आती है तो मैं वह भी छाड दूगा। देखो, ऐसा मौका न आ जाय, उसे बचाने के लिए ही मैं तुम्ह लेकर यहा ?"

'क्या ? वह क्या बात है ?"

'कुछ भी नही।"

कुछ कैसे नही। कुछ कहना चाहते थे, एकदम से मुह बद "

भरमा न भी अपन को रोक लिया था। गुस्सा आने पर भी वह अपने पर नियत्रण नही खोता। इसम रग रग मेरी ही है। यह सोचकर कालिया के मुह पर मुस्कराहट छा गई थी।

पिता ने कहा था, 'कुछ भी नही, यह एक बहुत लबी कहानी है।"

'कुछ भी नही' कहने वाले ने इतना सब कहना क्यो शुरू किया था ? लबी कहानी का मतलब क्या हो सकता है ? या मेरे मन को दुख न हो, यह सोचकर जानबूझकर ऐसा कहा होगा !' यह सब मन ही मन सोचते सोचते भरमा ने कहा था

"तुम्हारी कहानी मुझे मालूम है।"

"मालूम है न ? तो फिर बात ही खत्म।"

कहानी क्या है। सबके लिए एक ही बात कहनी है। तुम्हारे लिए मैंने वह किया तुम्हारे लिए मैंने यह किया, मानो बडा उपकार कर दिया हो। उतना करने के लिए मुझ पर कितने दिन अधिकार चलाया जाएगा। बस अब स्कॉलरशिप मिलता है। खच ध्यान स करें तो कुछ बचाया भी जा सकता है। मुझे न बाप के पैसे चाहिए, न उनका उपकार। यह सोचकर भरमा न पिता स दो टूक बात कही थी।

'बस, बहुत हो गई तुम्हारी कहानी। मुझे तुम्हारी बात की भी जरूरत नही। जो पैसे मिलते है उसी म अपना खच चला लूगा।'

अब कालिया की स्थिति जड समेत उखाडकर फेंके पौधे की तरह हो

गई थी। वह रोज ब रोज सूखता जा रहा था, शरीर स नही, मन स। बाह्य रूप से नही आतरिक रूप से। वह ऐसा आश्रयहीन हो गया था कि उसे यह सन्देह होने लगा कि उसके तले धरती है या नही। सहारा है, अब भी वह वटे के साथ ही था। वसे देखा जाए तो एक दृष्टि स पहले स अच्छी जगह म ही था। फिर भी उसे ऐसा लगता था मानो वह वेसहारा हो। चारा ओर दखन से कभी-कभी ऐसा लगता मानो सब सपना हो। खाना-पीना, जगह रात दिन सब कुछ है। पर कोई सुख नही। कभी उसे लगता, न जान कव भरमा आकर 'चलो यहा स, निकल जाओ कह द।' पर कभी कभी ऐसा भी लगता कि बेटा ऐसा नही करेगा। वैसे यह अपन को तसल्ली देता। वह सोचता—शायद सब ठीक हो जाएगा। कभी कहता, यह अपना नसीव है। 'नसीब' कहते ही उसे कई पुरानी बातें याद आती पर पुरानी बातो की तुलना म आज की स्थिति तो अच्छी है। मन का यह तसल्ली देकर चुप हो जाता।

कभी-कभी उस यह साचकर आश्चय होता कि भरमा उसस अलग क्या नही रहता। 'अलग रहूँगा' कहकर भी अभी तक क्या उसस बँधा हुआ है। क्या इसम भी कोई रहस्य है? देखो, ऐसा जानवर बाप होन पर भी मैं कसा वन गया हूँ?' यह कहकर वह लोगो मे अपना बडप्पन दिखाना चाहता है? इसमे भी कोई खेल होगा। सब खेला म जो आग है उसके लिए यह खेल खेलना कोई कठिन है?

भरमा पढाई मे जैसे आगे था वसे ही सब खेला मे भी आगे था। पढाई मे आगे रहने के कारण सभी सहपाठी उसके साथ शत्रु जैसा व्यवहार करते थे। पर खेल मे आगे रहने के कारण मारा का मारा स्कूल उसे पसद करता था। इसमे कालिया को भी आनद, अभिमान और कौतूहल होता। कभी-कभी वह बेटे से कहता "तूने कभी अपना खेल मुझे नही दिखाया।" तव 'आज हमार विरोध मे खेलन वाली टीम कोई खास अच्छी नही कहकर भरमा बात उडा देता। तब कालिया कहता, 'अरे! लोग इत्ती तारीफ करते हैं। मैं भी एक बार देखना चाहता हूँ।' इस पर भरमा जवाब देता "आज का खेल सिर्फ लडका के लिए है। वडा को आन नही दिया जाएगा।" कालिया सोचता वडा का आन नही दिया जाएगा यह सब इसका बहाना है।

उसम समझन लायक मुश्किल बात कोई न थी। स्कूल क लडका के लिए शहर के एक मैदान के एक हिस्स मे खेलने की जगह थी। और भी कई स्कूलो के लडके वहाँ खेलत थे। चारो ओर मैदान ही मैदान था। वहाँ जाने क लिए किसी से पूछने की जरूरत न थी। राहगीर वहाँ खडे हाकर खेल दखकर थकान मिटाकर जात थे। कालिया ने भी उस एक दिन एस ही देखा।

'बडा को आन नही दिया जाएगा' कहा था न हरामखोर ने। कहकर अपमानित-सा होकर उसने दाँत पीस। बेटे के घर आने पर उसन बार बार कुरेदकर इसी बारे मे प्रश्न पूछे। बाद मे गुस्से मे आकर भरमा गरज पडा 'तुम्ह क्या खाक समय मे आएगा।"

मुझे क्या समझ म आएगा। बटे को यह भी मुझे समझाना पडेगा। उसन उसी दिन प्रतिज्ञा के स्वर म मन म कहा—देखते है कौन किस सम झाता है?

बेटे को समझाया कि नही? यह हठ पूरा करने का मौका उस जल्दी मिला। वही जगह थी वही खेल हा रहा था। उस समय कालिया वहा एसे खडा था मानो सबको जानता हो। दूर से लडको का शोर गुल सुनाई दे रहा था। वहा तक पहुँच गया। दो एक लडको स पूछने पर पता चला कि वह भरमा का ही स्कूल है। कालिया न एकदम भरमा को पहचान लिया। भरमा की ओर इशारा करते हुए कहा, 'अरे, वह लडका कितना अच्छा खेल रहा है!

तब एक लडका बोला "वह—वह हमारा फस्ट क्लास प्लेयर है।'

उसे मैं जानता हूँ।"

'आप उसे कसे जानत है?"

'कसे क्या? मैं उसका बाप हूँ। वह मरा बेटा है।"

'आ? क्या कहा आपने?'

हा, मै उसका बाप हूँ।

आई सी। हियर इज बी०के०'ज फादर, आई से। यह बात लडका ने एक दूसरे से जोर से कही। लडको ने क्या कहा, यह कालिया न समझ सका। पर तब से स्कूल म भरमा का नाम बी० के० चमार पड गया था। लडको के बी०क० कहने पर ही भरमा का तीर सा लगा था। वह गुस्स म

घर आया।

'बाप रे ! उस रात बेटे के गुस्से का क्या कहना। मुझे पता था इस बेट को मुझे अपना बाप कहने में शर्म आती है। यह मेरी बदनसीबी है कि मैं उसका बाप हूँ। एक क्षण का उसे गगी की याद हो आई।

पर अब ? अब कालिया मे किसी भी बात का सामना करने का साहस नही बचा था। बेटे को छाडने का धैर्य न था। बेटा अब और भी बडा हो गया था। कालेज म पढते हुए एक साल हो गया है। अब वह उससे ज्यादा बात भी नही करता, फिर भी कभी कभी एकदम पूछ बठता, सिनेमा देख आऊँ ? मना करने पर गुस्से मे आ जाता। कालिया छटपटाता उस कोई राह सुझाई नही दती।

इसके साथ ही एक और भी चक्कर था। वह पता नही किन किनके साथ घूमता था। कालिया का डर लगता था कि व कही उसके बट का जाल मे न फँसा लें। बेट को वह कैसे समझाए ? उसम धैय ही न था। कालिया को इस बात से और भी ज्यादा डर लगता था कि लडके और लडकिया मिलकर गप्पें मारत रहत। बेटे का तो यहा तक पढाने की सुविधा मिली अब कोई नई उलझन उठ खडी हो तो कस ? यही साचते सोचत एक दिन कालिया का दिल दहल उठा। कालिया को पहले स ही सदेह था। इन दिना भरमा के साथ एक लडकी बडी घुल मिलकर बातें किया करती थी। कालिया ने यह सब अपनी आँखो स कई बार दखा था। पहली बार देखते ही सदह हुआ और उसने सोचा, 'लडका बडा हो गया है। पर आग क्या होन वाला है ? बेटे से बात कर पाने का साहस न हान पर वह उससे शादी की बात कसे उठाए। पर चुप भी कसे रहे ? काई झझट हो गया तो ? हम कौन ह ? हमारी बिसात क्या है ? किसी गलत जाल म फँस जाए तो हमारी हालत क्या होगी ? अत मे उसन एक दिन मौका देखकर बहाने से बात उठाई थी

'भइया रे ! सोच रहा हूँ गाँव की ओर एक चक्कर लगा आएँ ?

कहते ही तुरत उसने मन म सोचा 'अरे ! यह मैं क्या कह बठा ? बला टली। जाओ !' कह देता ? मैं यह कहकर चला आया था कि गाँव की ओर थूकूगा भी नही। आज मेरे मुह से क्या निकल गया ?'

भरमा ने पूछा, 'कौन से गाँव ?'

बच्चे की बात सुनकर कालिया ने सोचा, 'बच गया !' तब कुछ घुमा-फिराकर बोला, 'सोमूर जाना है। वहा रिश्तेदार है। मैंने वचन दिया था।"

"वचन किस बात का ?"

'यही—उनकी लडकी लेने का।"

'यानी ? अब तुम शादी करोगे ?"

'क्या कहा ? बाप से मजाक कर रहे हो ?"

ना फिर लडकी किसके लिए ?"

घर में बहू नहीं चाहिए ?

भरमा जोर से हँस पडा। कालिया डर गया। कितना तिरस्कार भरा था उस हँसी में।

क्या ? तुम्हारे ख्याल में कोई और हो तो मैं चुप रह जाऊगा ?"

भरमा अब भी हँस रहा था। अत में बाप की ओर देखते हुए बोला, 'मेरी शादी की चिंता तुम मत करो।'

'नहीं मैं भी समझता हूँ।'

बट ने टोककर पूछा, 'क्या समझते हो ?'

तुम्हे जो ठीक लगे सो करो। लोग बातें करेंगे, इसलिए कहता हूँ।'

भरमा ने चकित होकर पिता को देखा।

'देखो भइया मैं हूँ पुराने जमाने का। मेरी समझ में क्या आएगा ? अगर तुम उसी लडकी से शादी करना चाहते हो तो कर लो। बस हमारी जाति की लडकी ले आओ यही बहुत है। मुझे तो इसी में तसल्ली है।"

क्या कहा तुमने ? कौन सी लडकी ?'

वही जो तुम्हारे साथ आई थी। वह हमारी जात की है कि नहीं ?

'उस लडकी की कोई जाति ही नहीं।"

क्या मतलब ?

'उन लोगों में जात-पाँत का पागलपन नहीं है।

फिर भी कोई जाति तो होगी न ?"

तुम्हें तसल्ली नहीं होती तो सुनो, बताता हूँ। वह क्रिश्चियन है।

'क्रिस्तान तो हमारी जाति की नहीं ?'

भरमा उठ खडा हुआ। उसने एक बार फिर से पिता की ओर देखा और जोर स हँसकर कमरे से निकल गया।

हमारी जाति की नहीं' कहते हुए कालिया एकदम सिर पर हाथ रखकर जमीन पर बैठ गया। उसकी शक्ति ही समाप्त हो गई थी। सोचा—धोखा हो गया। लडके को पढाकर धोखा हो गया। पढाने के लिए ही तो वह वहाँ तक न आया था। अब जात से बाहर की लडकी।

खाओ और पढाओ यह किसने कहा था ? हाँ, शामण्णा न। क्या उन्होंने इसलिए ऐसा कहा होगा कि मेरी फजीहत हो।

पर शामण्णा भी तो पढे लिखे हैं। व तो एस नहीं हुए। मेरा नसीब ही खोटा है। जो कुछ भी छूता हूँ वह मिट्टी हो जाता है। यह मेरा कैसा दुर्भाग्य है ?

# 9

शामण्णा न सोचा—हो सकता है। लोग गलत नहीं कहते। ऐसा कुछ हो सकता है। उसने यह सोचते हुए लंबी साँस ली, 'क्यो न हो ? मेरे हाथ का लक्षण ही क्या खराब हो। मैंने तो भला ही सोचकर किया पर ऐसा क्या हो गया ?'

वैसे देखा जाय तो आरंभ से ही शामण्णा न भला करने के लिए ही इतना परिश्रम किया था। क्या राय साहब ने कहा नहीं था—'तुम्हें भी मैंने अपने घर का ही समझा है।' इसीलिए तो इतना कष्ट उठाया। सुब्बक्का और उसके दो बच्चों की जिम्मेदारी ली थी। यही सोचकर दुखी होता था कि सुब्बक्का पर जो आघात हुआ उसे दूर करने मे वह समर्थ नहीं हो पाया। परन्तु यह उसके हाथ की बात न थी। बेटे की पढाई के लिए सुब्बक्का को दूसरा के घर का नौकरी करनी पडी पर कुछ भी हो, रागण्णा की पढाई अच्छी तरह आगे चली। पगला कहीं का ! अब पढाई काफी हो गई। कह रहा था अब कोई नौकरी खोजेगा हूँ।' मा का कष्ट भी बेचारा कितने दिन देख सकता है ? साथ ही एक और भी मजेदार

बात हुई। भाई की पढाई के लिए बहिन भी कमाना चाहती थी। जो भी हो सुब्बक्का का यह सौभाग्य है कि बच्चे एम अच्छे निकले। अब और कितने दिन की बात है। रागण्णा बी० ए० हुआ तो बस बेडापार समझा।

सुब्बक्का ने कहा था, पर यह होगा कैसे ? आपको फिर और कष्ट उठाना पडेगा।'

उसे तसल्ली देते हुए उसने कहा था 'सुब्बक्का, बिना पसीना बहे ठड महसूस नही होती। मेरे लिए क्या कष्ट है ? मैं कोई बाहर का हूँ ?'

शामण्णा ने सोचा सुब्बक्का को तो मैंने तसल्ली दे दी। पर सब कैसे होगा ?' उसने उसे पूरा करने का निश्चय भी किया।

"तो आज ही आपको गाँव जाना पडेगा ?' यह कहकर सुब्बक्का ने उसे जाने से रोका था।

नही, काम अगर जल्दी हो गया तो जाने से पहले एक बार दुबारा आऊँगा।' यह कहकर वहा से चल पडा था।

यह सोचकर कि रागण्णा की ऊँची शिक्षा की व्यवस्था करने का एक मात्र यही उपाय है। शामण्णा रामाचारी के घर की ओर चल पडा। उनका लडका भी कालेज जाने वाला है। दोनो साथ रहे तो फायदा होगा, प्रयत्न करके देखूगा।

प्रयत्न सफल हुआ।

यानी मेरे सामने और कोई विचार नही बस दोनो का साथ रहे। *उसने इस प्रकार बात शुरू की। उसने सोचा—कौन जाने अगर वे यह* समझ बैठे कि मैं उनसे आर्थिक सहायता चाहता हूँ तो मेरा उद्देश्य ही सफल न हो। इस बात को ध्यान में रखकर ही शामण्णा ने बात शुरू की थी। वैसे देखा जाय तो उसके मन म भी ऐसा कोई विचार न था। वह जानता था कि दूसरो की सहायता लेकर आगे पढना रागण्णा भी पसद नही करेगा। यह बात भी ठीक है। सम्मान खोकर शिक्षा प्राप्त करने से क्या लाभ ? सम्मान आत्मसम्मान बना रहे यही बडी बात है। इनका खाकर जीने वालो को शामण्णा ने देखा था। उसका यह निश्चित मत था कि ऐसे लोगो के कारण ही देश म समाज भ्रष्ट, रिश्वतखोरी आदि कुरीतियाँ बढती हैं। वह अच्छी तरह जानता था कि रागण्णा ऐसा नही है। इसलिए आर्थिक सहायता लेने का तो प्रश्न ही नही था। फिर भी उस आदमी को

ऐसा कोई सन्देह नहीं होना चाहिए।

उसने फिर से बात शुरू की 'मतलब यह है कि एक के साथ दूसरा मिलकर यदि पढ़ाई करे।'

अब तक बिना होंठ खोले सब चुपचाप सुनने वाले रामाचारी ने उठकर आँगन के कोने में जाकर होंठ पर उँगलियाँ रखकर तंबाकू की पीक की पिचकारी छोड़ी मानो होंठों पर लगे ताले को खोला। बाद में थू थू करके मुस्कराते हुए शामण्णा को देखकर बोला

'समझ गया शामण्णा, तुम तो ऐसे बता रहे हो जैसे किसी अनजान से बातें कर रहे हो। और हाँ भाई, तुम और किसके बारे में बात कर रहे हो? *उसी रघुनाथराय के पोते के बारे में न? मैं और रघुनाथराय तुम्हारे* पैदा होने से पहले एक साथ खेला करते थे, समझे? ह! ह!! अब बताओ, तुम क्या कह रहे थे?"

शामण्णा भी हँस पड़ा—उसकी बात पर नहीं उसके कहने के ढंग पर। वह रघुनाथराय का समकालीन था। अभी उसकी कमर तक नहीं झुकी, आँखों में शरारत का रस भी सूखा नहीं। सदा मुस्कराहट उसके मुख पर विद्यमान रहती है। शायद मुस्कराहट के आकर्षण को दुनिया को दिखाने के वास्ते ही भगवान ने उसे रचा होगा। इसी आकर्षण के कारण उसे लोग रसिक रामाचारी कहते थे। उसकी ख्याति याद करके कोई आश्चर्य नहीं हुआ शामण्णा को।

रामाचारी ने आवाज लगाई, 'सीनू!"

'क्या है पिताजी?' कहते हुए सीनू आ खड़ा हुआ। सीनू रागण्णा का समवयस्क है। शामण्णा रागण्णा को इसी के साथ कालेज भेजना चाहता है। उसने सीनू की ओर देखा। वह सीधा सादा लड़का था। शामण्णा को भी दूसरों की भाँति उसे देखकर यह महसूस हुआ कि ऐसे रसिक के घर ऐसा सीधा सादा गऊ लड़का कैसे हो गया। उसने एक बार बाप को और एक बार बेटे को देखा और मन-ही मन तुलना की। तंबाकू थूककर पिता मूछों को हाथ से साफ कर रहा था। बेटा यह निश्चय नहीं *कर पा रहा था कि पिता के सामने कैसे खड़ा हो। शामण्णा की मुस्करा-*हट और चौड़ी हो गई। तभी रामाचारी ने पूछा, 'सीनू! तुम और रागण्णा मिलकर पढ़ो तो कैसा रहे?"

बेटे ने 'आँ ? कहा। शायद वही उसका उत्तर था। मारे खुशी के उसके मुँह म शब्द नही निकल पा रहे थे। यह बात शामण्णा और उसके पिता समझ गये। 'आँ' कहने के साथ उसका मुह ऐसे खिल गया मानो आँखो के सामने स्वादिष्ट व्यजन रखे हो। उसने जबान स होठ तर किय और थूक निगली। उसके हाव भाव म उसका सतोष व्यक्त हो रहा था। पिता उसका अथ पूर्ण रूप से समझ गया।

क्या ठीक है न ? बस तो जाओ।"

सीनू भीतर चला गया। दहलीज पार करते ही रसोईघर की ओर भागा। वहाँ से वह पिछले दरवाजे म बाहर भाग गया। सामने के फाटक से निकलते हुए देखकर कोई पूछ ले तो ? इसीलिए उसने भागकर रामण्णा को खुश-खबरी दी।

जो भी हो शामण्णा का प्रयास सफल हुआ। साथ ही एक लाभ और भी हुआ जिसके बारे मे उसने सोचा तक न था। शामण्णा न कहा था, समय मिलने पर रामण्णा एक दो ट्यूशन कर लेगा। रामाचारी इस पर खुश होकर बोला 'यह तो बहुत ही अच्छा होगा।"

तभी शामण्णा न कहा "इसे दस पद्रह रुपये तो मिल ही जाएँगे।"

"इस बारे म मैं कसे कह सकता हूँ ?" पर यह तो तुम जानत ही हो कि हमारा सीनू मुल्की परीक्षा पास करके हाई स्कूल गया था। उसे और किसी विषय म डर नही पर उसकी अग्रेजी बडी कच्ची है। मैट्रिक मे तो जस तसे पास हो गया पर अग्रेजी म तीस से ऊपर नबर नही मिल पाये।'

"पर पास तो हो गया न ?

'हाँ, पर कालेज मे नही चल पाएगा।" यह कहने के बाद रामाचारी ने उसस पूछा, "रामण्णा सीनू को अग्रेजी नही पढा सकता ?'

'एक ही मकान म रहंगे तो पढाएगा क्या नही ?'

एसे रहो चल पाएगा शामण्णा ? उसे रोज पढाने की जरूरत नही। समय मिलने पर पढा सकता ह।

पढाएगा क्या नही आचारी जी ?

'तो पहली ट्यूशन तो मिल गई न ?

'नही, नही आप ऐसी बात क्या कहते है ? आपसे "

'शामण्णा, केवल समझदार भर होने ही से यह नही कहा जा सकता कि आदमी को व्यवहार का ज्ञान भी आ जाएगा। मैं तुम्हारी बात ही कहता हूँ। व्यवहार माने तुम्हारे जैसा होना चाहिए। मान लो रागण्णा सीनू को पढाता है तो क्या लोग ऐसा नही समझेगे कि जो कालज के लडके को पढा सकता है, वह स्कूल के बच्चो को भी पढा सकेगा या नही ?'

ता आपका कहना यह है ।'

"इसके अलावा महीने मे दस रुपये भी मिल जाएँगे।'

छि छि ! आचारी जी ! पर शामण्णा आचारी जी की हठ को बदल नही सका। इससे रागण्णा का कुछ लाभ ही हुआ।

यह खुशखबरी उसने सुब्बक्का को पहुँचा दी थी।

शामण्णा ने चारो ओर देखा। वही—सब कुछ वही। बाह्य जगत जैसे का-तसा पर भीतरी जगत को—उसके मन को—ऐसा भासित हुआ मानो कइ वर्ष खिसक गये। कितने वर्ष ? छि, कितने वर्ष यहा बीते, एक ही वर्ष, वह भी अभी पूरा नही हुआ। जो कुछ बीत गया उसे याद करने की आवश्यकता भी नही। ऐसा लगता है मानो अभी आखो के सामने से गुजर रहा है। सुब्बक्का बेचारी ! बेटे को कालेज भेजने के लिए उसने पता नही कितना कष्ट उठाया ? साथ ही एक और भी प्रश्न उठा।

उसने कहा था, 'रागण्णा की व्यवस्था तो हो गई, सुब्बक्का। मुझे ऐसा लगता है कि रागण्णा के कालेज जाने के बाद आप लोगो को उधर ही आ जाना चाहिए।'

तभी शाता ने भी कहा "यहा बैठे बठे क्या करोगी ? बेकार म कष्ट उठाने म कोई मजा है क्या ?"

सुब्बक्का ने कहा 'यह कैसे हो सकता है शाता ?"

यहाँ तुम्हारा क्या काम है ? काम काम कह रही हो ?"

सरसी एक धरी है न छाती पर।"

यानी ?' शाता की समझ मे सदर्भ न आया।

तभी शामण्णा समझ गया और बोला "वह बात मुझ पर छोड दीजिए सुब्बक्का जी।"

उन दोनो का किस बात की ओर सकेत है यह समझ न पाने के कारण

चिढ़े हुए स्वर में शांता ने पूछा, "कौन-सी बात ?"

तभी सुब्बक्का ने कहा, 'क्या अब सरसी के लिए लड़का नहीं ढूंढ लेना चाहिए ?"

'सरसी के लिए लड़का ? क्या पागल हो गई हो ! क्या एक ही साथ सारी जिम्मेदारियाँ निबटाकर हाथ झाड़ लेना चाहती हो ?'

"ऐसा क्या कहती हो शांता ? सरसी की शादी नहीं करनी है क्या ?'

'सरसी की शादी ? अभी से उस बच्ची की ?' उसने अपने को रोक न पाकर कहा।

वह सोचने लगी— बेटी की यह समझकर शादी करना चाहती है जैसे उसे कोई महान सुख मिलेगा ऐसा करके। अभी वह बच्ची ही तो है। मैंने जो सुख देखा वह तो उसे मालूम ही है। शादी का मतलब बच्चों की बलि चढ़ाना है। अब मेरी क्या हालत है। लोगों में तो यही कहा जाता है कि इसकी शादी हो चुकी है। विधवा होने पर भी विवाहिता ! यानी स्वतंत्र जीवन ।'

शांता ने सुब्बक्का की ओर एक विचित्र दृष्टि से देखा पर वह कुछ समझ न सकी। लेकिन इतना समझना आसान था कि उसके स्वर में यह बात कहते समय इतनी वेदना क्यों थी।

सुब्बक्का बोली, शांता, तुम पढ़ी लिखी हो, तुम्हारी बात ही कुछ और है। पर मुझ जैसी औरत के लिए रूढ़ियों का विरोध कर पाना कैसे संभव है ?'

तुम जो चाहो सो करो। कहकर शांता वहाँ से चली गई।

सुब्बक्का शांता से आगे बात करना चाहती थी पर उसने अपने को रोक लिया

मैं ऐसी बात क्या कह गई ? पता नहीं शांता क्या समझ बैठी। जब नसीब खराब होता है तो धूल भी जमीन से उठकर सिर में गिरती है यह बात झूठ नहीं। मैं कुछ कहना चाहती थी। वह कुछ और अर्थ तो नहीं ले बैठी ? कहीं वह मेरे यह कहने का कि मैं रूढ़ियों का विरोध नहीं कर सकती। यह अर्थ तो नहीं लगा बैठी कि मैं उसे रूढ़ियों की विरोधी कह रही हूँ ? गरीबी बहुत बुरी चीज है। किसी भी बात का लोग सरल अर्थ नहीं लेते।"

पता नहीं सुब्बक्का के मन में क्या था पर उसने मुँह से कुछ नहीं

कहा ? अत म तसल्ली से शामण्णा ने समस्या का हल किया । मुत्रक्का अब जहाँ है उम वही रहना चाहिए और उमी का मरस्वती क लिए लडका ढूढन की जिम्मदारी लनी चाहिए। यह शादी हा जाय और सरस्वती ससुराल चली जाये फिर मुत्रक्का को विटटूर जाकर आश्रम म रहना चाहिए।

"दखा माता, अगर तुम यह चाहती हा कि मैं जल्दी ही तुम लोगा क साथ आकर रहूँ तो उनम सरसी के लिए जल्दी लडका ढूढन को कहो।"

ता इमका मतलब यह हुआ कि मुत्रक्का न भी वही समझा है। 'उनस कहन का मतलब उन पर मेरा अधिकार है। यही मतलब हुआ न ? दूसरा का बुरा क्या कहू जब अपने ही अपना पर विश्वास नही करते। इसलिए ता उसने रूढि क विरोध म आचरण करन की बात कही। तो क्या मुत्रक्का क ख्याल से मैं रूढिया का विरोध कर रही हूँ ? शायद इसी स उमन समझा होगा कि मैं शादी का विरोध कर रही हूँ। समझने दो, मैं भी क्या समझान जाऊँ ? मैं कह दूगी कि मैं शादी के विरोध म हूँ।'

तब शाता ने कहा

मैं क्या कहूँ ? मैं ता कहती हूँ, अभी शादी नही होनी चाहिए।" यह सुनकर मुत्रक्का ऐसे चुप हो गई मानो कोई छूत लग गई हा। वह सिकुड-सी गई।

यानी शादी ही न करें ? दखा मुत्रक्का ? मेरे साथ रहने से यह कितनी बिगड गई है ?' कहकर शामण्णा ने बात ही पलट दी।

आखिरकार सब कुछ तसल्ली से होन लगा। रामण्णा की पढाई बिना किसी विघ्न बाधा के चलने लगी। आश्चर्य की बात यह है कि हालाकि उसने मुत्रक्का की तसल्ली क लिए कहा था पर सरसी के लिए वर भी मिल गया। रामण्णा जब दीवाली की छुट्टिया म आया तब लडकी दिखाने का काम पूरा हो गया और विवाह का निश्चय भी हो गया। शामण्णा न अपन को पीछ रखा था। सब कामा मे रामण्णा को ही आग रखा गया था क्योकि उसी को तो घर की जिम्मेदारी सँभालनी थी। देश सेवा म लगे एक स्वयसेवक के साथ विवाह पक्का हो गया था। शामण्णा उसे अच्छी तरह जानता था। केवल पैसे से ही सुख नही मिलता। लडके की आयु ठीक है, अब आगे उन दोना का भाग्य—यह सोचकर मुत्रक्का ने मन को

तसल्ली दी। यह भी निश्चय हो गया था कि पास ही के पुण्याश्रम में विवाह होगा। नदी का किनारा था, एक बड़ा सा मन्दिर था, उसकी चारदीवारी में हज़ारों आदमियों के इकट्ठे होने लायक जगह थी। सब प्रकार की सुविधा थी। लड़के के पिता न रहा था, बीच में बारिश न हो तो सब काम बढ़िया रहेगा। तब लड़के की बुआ ने कहा था, एक-दो दिन पहले ही चल पड़ेंगे। नदी के परली पार लड़के का गांव था। लेकिन उसके कारण कोई दिक्कत नहीं थी। रामण्णा का भी परीक्षाफल आ चुका था, वह पहले नम्बर में पास हुआ था। कुछ लोगों ने मजाक भी किया था। दहेज का रेट बढ़ गया। जो भी हो विवाह भला प्रकार सम्पन्न हुआ। सब लोग दो-तीन दिन तक वहीं थे। बाद में रामण्णा शामण्णा और शाता पहले चल पड़े और यह भी निश्चय हुआ कि मुब्बक्का बेटी के साथ समधियों के यहाँ जाएगी। और वहाँ से सीधी आश्रम पहुँच जाएगी। तब तक रामण्णा घर का सब सामान बिटटूर के आश्रम पहुँचा देगा। मुब्बक्का को आज या कल आश्रम पहुँचना था। अब तक दामाद के घर पहुँच गई होगी। जो भी हो सरस्वती की समस्या हल हो गई। अब की रामण्णा पहली श्रेणी में पास हो जाय तो और क्या चाहिए। बेचारी। मुब्बक्का ने भी बहुत कष्ट उठाया। जो भी हो कोई किसी भी बात का निश्चय करके किसी बात के पीछे पड़ जाय तो दुनिया में उसे सुख मिल ही जाता है। इस प्रकार तीनों आश्रम में बैठे बातचीत कर रहे थे।

अब भी वह दृश्य शामण्णा की आखों के सामने आन खड़ा होता है। शामण्णा अब मानसिक रूप से इतना हल्का महसूस कर रहा था जैसा कि संसार में पैदा हुआ मनुष्य जब अपने सब ऋणों से मुक्त हो जाता है तब भगवान भी मिल जाय तो वह उससे यह कह सकने की स्थिति में पहुँच जाता है कि तू और मैं दोनों बराबर हैं। यह बात बाह्य दृष्टि से ही नहीं अपितु आंतरिक दृष्टि से भी सही थी उसे सारा संसार निश्चित सा दिखाई दे रहा था। पर वह स्थिति अधिक देर तक न रह पाई। तभी शामण्णा जी यही है क्या? कहता हुआ एक व्यक्ति पत्र लेकर आया। तब शामण्णा बोला, ओह हो! लगता है तुम्हारी माँ और बहिन आ रही हैं रामण्णा।

क्या, बहिन आ रही है?'

मा भी आई और बहिन भी। पर एसे नही जैसे कि शामण्णा न कहा था।

ऊपर कही अधिक वर्षा हो जाने स नदी म बाढ आ गई थी। लटके वाले बाढ की चपट मे आ गये। उस बाढ की बलि चढने वाला म वर भी था। एक बच्चे का बचान म उसने अपन प्राण द दिय।

सुब्यक्का आई, सरस्वती आइ। शामण्णा ही उन्ह आश्रम लिवा लाया था।

शामण्णा न सोचा, उसके हाथ का लक्षण ही ऐसा है। अगर वह अगुआ बनकर जल्दबाजी न करता तो यह शादी न होती। उसी क हाथ के लक्षण के कारण यह विवाह हुआ और समाप्त हो गया। सरस्वती विधवा हो गई, यह उसी के हाथ का लक्षण है।

## 10

लेकिन रामण्णा यह बात मानने को तयार न था, उसकी बहिन विधवा है। यह ऐसा आघात था कि वह शुरू म कुछ समझ ही न पाया। शामण्णा जिस दिन उसकी मा और बहिन को आश्रम लेकर आये उस रोज़ सारा दिन वह बाहर ही भटकता रहा। उनके आने का समय निश्चित न था। पर उसने मन म यह सोच लिया था कि उनके आने के समय वहा न रहेगा। विधवा! मतलब? गत सप्ताह ही दुल्हन बनी बहिन सरस्वती आज विधवा? तो क्या वह उसके लिए अपरिचित प्राणी हो गइ? एक दो दिन तक उसने किसी से बात नही की। बहिन को देखने की बडी इच्छा होती पर डर सा लगता। क्षण भर को सरस्वती का मुह उसे दिखाइ दिया। *आश्चर्य! उसके मुह पर दुख न था, बल्कि डर था। बेचारी!* उसे दुख क्या है यही पता न था। परन्तु दूसरे लोग जो उससे बडे थ किसी महान दुख की चपट मे आ गये थे। शायद वह इसी बात स डरी हुइ थी कि उसे उस दुख का पता ही न था। यू! वह मुह देख नहीं सकता। वह मुख उसके लिए अपने अपराध का बाह्य चिह्न-सा लगा। क्या? इनमे

न ही अब ना होनी चाहिए ? अपने को इतना प्रगतिशील मानने वाले इस व्यक्ति ने इतनी छोटी उम्र वाली बहिन की शादी की स्वीकृति क्यों दे दी ? शामण्णा पर विश्वास क्या किया ? नहीं। शायद इस ख्याल से कि यह जिम्मेदारी निबट जाए। न उसके जीवन का प्रवाह सुखमय हो जाएगा। कि 'रहा नहीं माँ का दिल न दुखाने के लिए। यह भी नहीं। क्या यह पूर्व जन्म के कर्म कहे जा सकते हैं ? अगर है तो किसके ? मेरे ? उसके ? या पगान के ? या किसी व्यक्ति विशेष के ? बुआ, बहिन पर पगान का शाप पड़ा होगा। गरीबी का तो नहीं ? क्योंकि माता के विवाह के समय तो गरीबी न थी। फिर भी वह विधवा हो गई। शामण्णा के विचार उसकी सामर्थ्य से बाहर थे। अब तक कितनी विधवाओं को नहीं देखा ? माता भी उसके होश सँभालने से पहले से ही विधवा थी ? पर अब उसकी बहिन के विधवा होने पर उसे कितना दुख हो रहा है सच है। मनुष्य स्वार्थी होता है केवल स्वार्थी। क्या उसने अपने स्वार्थवश ही विवाह की स्वीकृति नहीं दी थी ? शामण्णा के लिए जीवन ही नीरस हो उठा। अब इस वय उसे कालेज जाने की बात भी असह्य लगने लगी।

शामण्णा पर एक नई जिम्मेदारी आ पड़ी। सुब्बक्का ने प्रार्थना की, 'लगता है शामण्णा ने यह बात मन को बहुत लगा ली है। जरा तसल्ली क्या नहीं देते।

अपने दुख को पीकर दूसरों के दुख कम करने की इच्छा रखने वाली उस नारी को शामण्णा ने गौरवपूर्ण दृष्टि से देखा।

लोग हमारे दर्शन को बड़ा नीरस और निस्सार कहते हैं। सुब्बक्का को देखने के बाद यह बात उसे गलत लगी। इस प्रकार दुख को सहन करके दूसरे को ढाढ़स बँधा कर आगे के जीवन-संघर्ष के लिए तैयार करनेवाला जीवन दर्शन भला निस्सार कैसे हो सकता है ? वह अत्यंत सारवान होगा पर दूसरे ही क्षण उसे असंतोष भी हुआ। हजारों वर्षों का सड़ा हुआ यह दर्शन क्या महत्त्वपूर्ण हो सकता है ? क्या यह शक्य है ? शक्य है तो इसमें प्रगति कहाँ ? यहाँ प्रगति का प्रश्न ही कहाँ उठा ? यही नहीं इसमें कौनसा दर्शन छिपा है ? पता नहीं यह माँ भी जानती है या नहीं कि ऐसा भी कोई दर्शन है ? यदि मालूम होता तो ऐसे शोकाकुल न होती ? उस आघात के बाद पाँच छह दिन तक उसे रोते हुए देखकर

ऐसा लगता था कि वह आत्महत्या ही कर लेगी। पर वह सब पाच छह न्नि तक ही रहा। एक दिन सुनह सुब्बक्का की मनोवरि एकदम बदली-सी दिखाई दी। पर वह आघात भूली न थी और भूलना सभव भी नही था। उमन एक ही बात कही थी 'किसी भाग्य का लिखा बदलता नही।' वही एक वाक्य शायद उसके समस्त शोक प्रवाह के लिए बांध था। यदि अब वह प्रवाह बाध तोडकर बहन लगे तो बाढ आ जाएगी। यही सोच कर वह डर गया था। लेकिन उस जल प्रवाह से विद्युत शक्ति का निर्माण हो रहा है। विद्युत शक्ति नही उसे जीवन शक्ति कहना चाहिए।

शामण्णा न एक बार फिर से सुब्बक्का को दखकर कहा "सीनू को आन के लिए चिट्ठी लिखी है। उसके आ जाने से रागण्णा को साथी मिल जाएगा।'

'यह आपने अच्छा किया। देखिए, वह तो गुमसुम सा बठ गया है। मुझे उसी का डर है। मुह से कुछ कहता नही, पर वहिन से उसका बहुत ही प्यार है। अब वडा भी हो गया है सब बात समझता भी है। वसे दखा जाय तो मुझे सरसी का डर नही। सब कुछ आठ दिन म खतम हो गया।' यह कहते हुए सुब्बक्का ने तुरत आखें पोछी मानो आख मे धूल पड गई हो। फिर बोली, 'बच्ची को किसी बात की कल्पना तक नही।'

शामण्णा ने एक लबी सास ली। क्या किया जा सकता है? सुब्बक्का के प्रत्येक शब्द के पीछे अपने दुख को छिपाने का प्रयास स्पष्ट दिखाई दे रहा था। वह उससे क्या कहे? उसने कहा 'कल अगर सीनू आ जाय तो रागण्णा को बात करने क लिए एक साथी मिल जाएगा।"

इस पर सुब्बक्का बोली, "मैं भी यही कहती हू। एक बार उबाल निकल जाय तो मन हल्का हो जाता है। पर यह लडका तो सब कुछ मन ही मे दबाय बठा है इसलिए मुझे डर है।'

रागण्णा सीनू के सामने हठ किय जा रहा था कि उसे दुख नही। न पहले था, न अब ह।

'मुझे दुख नही हा रहा, असतोष है गुस्सा है मैं अपन को राक नही पा रहा हूँ।"

"यह बात नही सीनू, तुम नही समझ सकोग।'

"तो क्या तुम्हें उस आकस्मिक वर्षा पर गुस्सा है ?"

नहीं नहीं। वह भी नहीं, इतनी छोटी लड़की को मरने तक विधवा बनाकर सड़ा देने पर यह समाज क्या तुला है ?"

'जाने भी दो। यूं ही कुछ बात मत करो। उस विधवा कह जा रहे हो। वह कोई रोग है उसका कोई लक्षण है। रुको, यह बताओ समाज कहते किसे हैं ? मैं तुम और हम जस, यही तो समाज है। हमारे लिए तो वह विधवा नहीं।'

क्या कहा ?

मैंने कहा कि वह विधवा नहीं। कल कहीं किसी के पति की फोटो गिरकर चूर चूर हो जाय तो लोग उसे भी विधवा कह देंगे।"

धीरे धीरे रागण्णा अपनी भावनाएं भूलकर सीनू को आश्चर्य से देखने लगा। रामाचारी समाज में अत्यंत प्रतिष्ठित व्यक्ति थे। उनका संबंध श्रेष्ठ ब्राह्मण घराने से था। सीनू के दिमाग में ऐसे विचार कहां से आये ?

सीनू को भी यही आश्चर्य था। रागण्णा इतना समझदार है पर ऐसे क्यों तड़प रहा है ? बेचारा ! मां के आश्रय में तो पला-बढ़ा है। दुनिया और समाज का ज्ञान उसे नहीं। इसकी तरह बड़ी बातों का अनुभव उसे नहीं। उसे यह पता नहीं कि समाज उसके पिता जैसे लोगों से ही तो बना है। शादी, वैधव्य की बातें कह जा रहा है। सीनू के रोंगटे खड़े हो गये। यदि पति के न रहने से विधवा कहलाए तो उसके पिता के कारण कितनी औरतें विधवा कहलाएँगी। यह सीनू भी जानता था। रामाचारी कैसा है सीनू अच्छी तरह जानता था। एक दिन की बात उसे अब भी याद है दूध अच्छा न हो तो उससे मक्खन नहीं निकलता।' यह बात सीनू की मां ने उसके पिता से दूध वाली की शिकायत करते हुए कही थी। दूसरे दिन दूध वाली आई थी। पिताजी आंगन में बैठे थे। उन्होंने दूध वाली से कहा

'ए ऐसे क्या करती हो ?

दूध वाली ने पूछा, क्या बाबू इसमें क्या हो गया ?"

दूध अच्छा नहीं।'

'अच्छा नहीं ? क्या हो गया ?'

'उल्टा मुझसे ही पूछ रही हो ?"

' आप ही ने तो कहा, अच्छा नही।"

"मैंने नही लडकी भीतर से कहा गया है।

'चाहे तो आप भी देख लीजिए।'

'हैं-ह, क्यो ? बूढा समझकर मजाक करती हो ?

'नही बाबूजी, इसम मजाक की क्या बात है।"

' अच्छा। मुझे मालूम नही तुम कैसा दूध देती हो ? '

"दूध निकालते ही सीधी यहा आती हूँ।"

"उस दूध से मक्खन नही निकलता और ऊपर से कह रही है—आप ही देख लीजिए। मजाक नही करना, आ ? नही तो एक बार देख ही लूगा।

इस पर वह बोली 'जाइए भी, आप भी कसी बात करत है।'

सीनू को तब भी सदर्भ समझ मे नही आया। परन्तु तब तक दूध वाली ने अपना पल्लू ठीक करके बदन ढँक लिया।

"पहले ढाक्ती है, और ऊपर से कहती है देखिए।

तब सीनू समझा। ऐसे अनेक अनुभवा के कारण सीनू का स्त्री पुरुष के सबधो के बारे मे आदर न रहा। स्वरवत्ति का जब समाज म बोल-बाला हो तो विवाह का महत्त्व ही क्या ?

सीनू न हठपूवक कहा था, "पहले यह विवाह ही एक धोखा है। जब उसे विधवा कहा जाता है। मै कहता हूँ वह विधवा है ही नही।'

तब रागण्णा बाला "इस समाज को सुधारना चाहिए।

इस पर सीनू ने प्रश्न किया, "तो क्या इसके लिए कालज छाड देंगे ?'

तब रागण्णा आवेश स बोला "मेरे कालेज जाने न जान से क्या फक पडता है ? कठोर कानून बनान चाहिएँ तभी यह समाज सुधर सकता है।"

सीनू निरस्कार से बोला, केवल कायदे बना दने से मूख समझदार नही हा जात ?'

"मतलब ?"

"मतलब क्या ? भगवान को साक्षी मानकर शादी करते है। और मनुष्य कायदे कानून बनाता है। कल कोई झगडा हो तो भगवान साक्षी

देने आएगा ?"

'सीनू चलो तुम और हम, दोनो प्रतिज्ञा करते हैं।"

क्या ?'

' समाज सुधारने मे हम दोनो जान देने को भी तैयार रहेंगे ?"

"नही भइया ! जान तो चली जाएगी पर समाज वैसा का वैसा रहेगा।"

"यानी ? ऐसा अन्याय सहते रहें ?"

"तुमने किसी को लिखकर दिया है कि अन्याय सहन करते रहोगे ? अगर नही, तो रोते क्या हो ?"

' पर सरस्वती का क्या बनेगा ?"

"कुछ भी नही। आश्रम मे रहेगी, कुछ न कुछ अच्छी बात सीखेगी। कल को मन चाहे तो शादी कर लेगी।"

"क्या कहा ?"

इधर देखो, यह कहा नही जा सकता कि दूसरे क्या करेंगे। इसके लिए बेकार मे अपना दिमाग खराब मत करो।"

"सीनू, तुम बिना सोचे-समझे बात करते हो।"

सोच-सोचकर तुम रोते हुए क्यो बैठे हो ?'

रो कहाँ रहा हूँ। तुम्हे बताया तो था कि मुझे किसी बात का दुख नही। पर जो हुआ है उसे याद करके सहा नही जाता।'

"बस यही बात है न ? पहले उसे भूल जाओ, बाद मे कहूँगा।"

इस प्रकार की बहस से उनका मन जरा हल्का हुआ। मन की बात कह डालने से फिलहाल रागण्णा को ऐसा लगा कि उसने अपना कर्तव्य निभा दिया। मित्र के हृदय के दुख को कम कर पाने मे सीनू ने अपने को कृतकृत्य समझा। सीनू को इस बात का डर था कि जो दुख सरस्वती को नही वह उसे क्यो हो रहा है ? वह ऐसे ही रहा तो आज नही तो कल उसका बुरा परिणाम हो सकता है।

सीनू को डरने का कोई कारण न था। पर वह यह जानता भी कैसे ? सरस्वती को देखने वालो के लिए यह समझ पाना संभव नही था कि उस दुर्घटना का प्रभाव उस पर कैसा हुआ। शायद उसे स्वयं भी मालूम न

होगा, विवाह के समय उसके दिमाग म केवल एक बात थी कि वह अपनी मां को छोडकर दूसरे घर कस जायें। उस अपन वचपन के दिन याद आने लग। उसने सोचा यदि पता होता ता वह मा को इतना कष्ट न दती। जितना याद करती जाती उतनी ही उसकी की हुई जिदें और झगडे याद आते। उसी कारण मां का सिर पर हाथ रखकर बैठ जाना आदि। ऐसी ही बातें याद आती। रागण्णा के लिए मां ने जब कमीज सिलाइ थी तब वह कितना चीखी चिलाई थी। उसके स्कूल जाने के कारण उसकी कमीज सिली तो यह भी स्कूल जान को तैयार हो गई थी। जब यह कहा गया कि वह लडकी है उसे स्कूल जाने की जरूरत नही तो वह रागण्णा की पुरानी कमीज और पाजामा पहनकर बठ गइ। तब मां स मैं भी लडका हूँ" कहने लगी। यह देखकर रागण्णा हँस हँसकर लोट-पोट हा गया था। उसस अपमानित होकर उसने पहन हुए कपडे ही फाड डाल थ। उस दिन मा ने उसकी खूब पिटाई की थी। बाद म मां ही उसस ज्यादा रोई भी थी। इस बात को भूलना सभव भी न था। एक-न एक कारण उसन मा को बहुत दुख दिया था। अब उसी मां का छोडकर जाना है। पुरानी सारी बातें ठीक करन का अब पर्याप्त समय भी नही। यह सोचकर सरस्वती न विवाह स पहल मां के साथ अत्यत सौजन्य स व्यवहार किया। काम धाम म मां का खूब हाथ बटाया मां की साडी स्वय धोती रही। पर उसन यह कल्पना भी न की थी कि मा यह सब दखकर और भी दुखी हागी। भाई को चिट्ठी लिखती और डाक म डालन स पहल मां का पढकर सुनाती। (मां के बारे म लिखी अच्छी बाता को पढत हुए छाड देती) भाई के पास म आये पत्रा को मां का पढकर सुनाती। अब यह सब छोडकर एकदम दूसरा के घर जाना पड रहा है। मा का दखभाल कौन करेगा ? अथवा मां भी उसके साथ चलगी ? यह बात उसकी समझ म न आई। और जान-पहचाने लोगा को छाडकर अनजाने लागा म जाकर रहना हागा। यही इसके डर का कारण था। वहां कस रहना होगा ? जिस घर म उस जाना है वहां उनके पति समत किसी का भी उसस परिचय नही। किसस बात करे ? यह समस्या वह हल न कर पाई। अब उस अनजान घर म न जा कर फिर से आश्रम म लौट आई है। चारा ओर मां भाई बुआ और शामण्णा को देखकर उसे एक प्रकार की तसल्ली ही थी। व

सब अपने हैं। उसके मन की एक और भी तसल्ली थी। यह कि अब अनजान लोगों के साथ रहना नहीं पड़ेगा। तब भी वह अपनी तसल्ली को मुँह पर भी व्यक्त नहीं कर सकती, जोरकर बताना तो दूर। भाई से कहना चाहे तो वह अपना मुँह तक नहीं दिखा रहा। दूसरे लोग, माँ और सभी जो हो गया उस पर कितने दुखी हैं। वैसे देखा जाय तो वह सब कुछ उसको भी बहुत ही बुरा लगा। बाढ़ के समय का वह भयानक दृश्य, बैल सहित गाड़ी के बह जाने का दृश्य, चीख-पुकार, रोना धोना। कन्हवासी से उस प्रवाह में लोगों का फँस जाना। उसका पति सब को साहस बँधा रहा था। वह दृश्य उस बच्चे के लिए माँ की चीख-पुकार का क्रूर दृश्य, उसके पति का उस ओर कूदना, दूसरे क्षण ही पति, माँ-बच्चा, सबका अदृश्य हो जाना। उसे काई किनारे पर खींच लाया था। तुरंत वह माँ-माँ कह कर चीख पड़ी यह सब याद आने पर उसे भी बुरा लगता। पर अब तो समाप्त हो गया न? वह और माँ सुरक्षित बच कर आ गये हैं न? अब उस सब को याद करने की क्या जरूरत है? उसे देखा जाय तो अब प्रत्येक क्षण अपने लोगों के बीच रहने से जो हुआ उसे याद करके उसे खुशी ही होती। माँ, भाई, बुआ, मामण्णा—सब अपने हैं। यही क्या, सीनू को भी अपना ही कह सकते हैं। भइया के साथ उसने कितनी ही बार देखा है। कितनी ही बार उससे बात की है। भइया के कालेज से लिखे हर पत्र में सीनू के बारे में कुछ न-कुछ रहता ही था। अब सीनू को देखने पर कभी-कभी हँसी आती, पर दूसरे की मुख-मुद्रा को देखकर गंभीरता धारण करनी पड़ती। सीनू! रामाचारी के सामने 'हाँ, पिताजी' कहने वाला सीनू। भइया ने एक बार पत्र में लिखा था, 'सीनू कैसा है यह मुझे अब तक मालूम न था। मदारी से भागे बन्दर जैसा है सीनू। हाँ सरसो, तूने कमीज टोपी पहने बंदर को नाचते देखा है न? अब यह मदारी से भागा बंदर अपनी मर्जी की टोपी कमीज पहनकर खेलता है। बाप रे! सीनू कोई सामान्य व्यक्ति नहीं। सब से बड़े आश्चर्य की बात तो यह कि सीनू को तुमने कभी बोलते देखा था? गाँव में रहते, घर पर खाना खाने और जम्हाइयाँ लेने के अलावा कभी उसने मुँह तक नहीं खोला था। पर उसी ने कालेज की वाद-विवाद प्रतियोगिता में भाग लिया। मैंने पूछा, अरे सीनू, तुमने यह क्या कर दिया? तब उसने उत्तर दिया, 'कितने दिन तक

अपने को रोका जाय ?' बाप रे ! सीनू कितना आगे बढ गया है ? भइया की लिखी ऐसी अनेक बातें सीनू को देखने पर सरस्वती को याद आती। सीनू भी तो परिचित ही है।

दूसरा की दशा देखकर सरस्वती को भी गुमसुम रहना पडता था। उस परिस्थिति म शातक्का ही एक तसल्ली की चीज थी। शाता ही अकेली आश्रम मे आने क बाद से उससे बात करती थी। पहले एक-दो दिन उसन उसे आश्रम के चारो ओर घुमाकर आश्रम दिखाया था। आश्रम म सिखाय जाने वाले अनेक कामा का उसे समझाया था। पर दूसरो न उससे बात नही की। बाद मे शाता ने उस किताबें पढने को दी। वह स्कूल नही गयी थी। घर पर उसन अपने भाई से थोडा बहुत पढना-लिखना सीख लिया था। इसलिए पुस्तक पढ नही पाई। एक एक पष्ठ को सायास पढन का प्रयास करती तो पुस्तक हाथ म होती और मन कही और। शाता पुस्तक की कहानी समझाती। पुस्तक की कहानी समझ मे आने पर वह पुस्तक को ध्यान लगाकर पढती। तभी एकदम यह विचार आता कि अकेली शाता ही उसकी ऐसे देख रेख क्यो करती है ? पर कुछ समझ मे नही आता। छोडो मुझे यह सब जानकर क्या करना है ? वे आश्रम की मालकिन हैं यह जताने मे गव महसूस करती होगी या बहुत दिना के बाद आय ह इसलिए खुशी होगी। जो भी हो शातक्का से मुझे तसल्ली है यही बहुत है।

शाता का सरस्वती के प्रति व्यवहार दखकर सुब्बक्का का आश्चय हुए बिना न रहा। बचारी शाता को अपना अतीत याद आया होगा, यह सोच कर वह शाता को भी गग्गती के समान ही दयाद्र हाकर देखने लगी। पर कभी कभी सुब्बक्का की समझ मे न आता। बाद म वह सोचती, उस लडकी के साथ इतनी बात करने की क्या जरूरत है ? वह यह सोचकर अपन का तसल्ली दती मुझे यह सब लेकर क्या करना है ? फिलहाल सरसी का मन कही लग जाय, इतना ही बहुत है। फिर उन दोनो के बीच पुस्तका पर घटा चर्चा होती देखकर वह सोचती, 'इसमे कुछ गूढअथ होगा।'

आश्रम म आन के बाद सुब्बक्का एक और विषय के बारे म ध्यान देने लगी। समय मिलने पर शामण्णा और शाता को इस दृष्टि से परखने,

लगी कि उन दानों की बातों से कोई अर्थ निकलता है या नहीं। लेकिन वह कुछ भी समझ न पाई। कौन जाने ? उसके सामने मात्र दिखावे के लिए वे लोग ऐसा व्यवहार करते हों। खैर, यह बात तो एक ओर रही। मरसो और शांता के बीच इकट्ठे हँसने-बोलने लायक ऐसी क्या बात रही होगी ?

सहसा सुब्बक्का की समझ में कुछ आया—'अरे क्या मुझे इतना भी नहीं समझना चाहिए था ?' यह सोचकर कि एक दिन बात करके ही देख लेती हूँ वह समय की ताक में रहने लगी।

चार-पाँच दिन में ही उसे वह मौका मिलने गया। सुब्बक्का ने मौका हाथ से जाने न दिया। उसकी बात सुनकर शांता पर बिजली-सी गिरी तभी सुब्बक्का ने पूछा :

"क्यों ? क्या मेरी गलती है ?"

नहीं सुब्बक्का तुम्हारे मुँह से यह बात निकली कैसे ?'

'अच्छी बात कहने में क्या डर है ?"

"अच्छी बात ?"

'क्या अच्छी बात नहीं है क्या ?'

'सुब्बक्का तुम, तु म इसे अच्छा कहती हो ?'

इसमें बुराई क्या है ? मैं क्यों यह बात कह रही हूँ, मालूम है ?"

'मुझे मालूम है तुम यह क्या कह रही हो। सबके मुँह से यही बात निकलती है इसलिए।"

पगली हो शांता तुम पगली हो। भगवान करे ऐसी बात कहने वाले की तो जबान ही कटकर गिर जाय!"

यानी तुम्हें विश्वास नहीं ?'

लोगों की बातों का क्या करना है ? हर कोई जो मुँह में आता है कहता है। उस सब पर मुझे विश्वास नहीं। पर मेरा कहना यह है कि तुम्हें शामण्णा से शादी कर लेनी चाहिए।'

'नहीं नहीं सुब्बक्का, यह बात मत कहो।"

शांता के मुँह से आगे बात ही न निकली। प्रयास करने पर भी बोलना संभव न हो पाया। आँखों से अश्रु धारा बह निकली।

सुब्बक्का ने ऐसी बात क्या कही होगी, यह बात शांता को कचोटने

लगी। मुक्ता ने सच कहा था कि उसे उस पर संदेह नहीं। शांता को उस बात पर विश्वास था, फिर भी आज उसने इस बात को स्पष्ट क्या कहा ? ऐसा कौन सा प्रसंग था जिसने उसके मुंह से यह बात कहलाई। ये विचार उसके मन में बार-बार आ रहे थे सरस्वती के अंधकारमय भविष्य की कल्पना करके सुव्रक्ता का हृदय विचलित हो उठा होगा।

अकेली सुव्रक्ता की ही यह स्थिति न थी। शामण्णा का हृदय भी कमज़ोर हो उठा था। यह बात शांता को मालूम न थी। सरस्वती को देखते ही शामण्णा के सामने शांता की मूर्ति आ खड़ी होती थी। सुव्रक्ता और सरस्वती को आश्रम लिवा लाते समय शामण्णा को एक बात याद आई थी। रायसाहब के जमाने की बात। रायसाहब की कही बात 'मेरी बहू और मेरे पोते-पोती को अनाथ न होने देना। तुम्हारे अगले जन्म में ' पता नहीं रायसाहब आगे क्या कहना चाहते थे। उनका गला रुंध गया था और वे वहाँ से चले गये थे। फिर भी उनका अभिप्राय स्पष्ट था। शामण्णा को एक ही बात की तसल्ली थी। विपत्तियों और दुर्घटनाओं से बचाव करना मनुष्य के हाथ में कहाँ ? पर ऐसे मौकों पर दुख बाँटने वाला कोई मिल जाय तो वही बहुत होता है। ठोकर खाने वाले को भले ही ठोकर खाने से बचा न पाये पर गिरने पर सहारा देकर उठाने के लिए हाथ बढ़ाना नहीं चाहिए क्या ? रायसाहब इसके उत्तर की अपेक्षा किये बिना चले गये थे। क्यों ? उन्हें इसके बारे में संदेह न था। उन्हें इस पर इतना विश्वास था। नहीं तो यह बात ही न कहते आज उसे बस उस बात की तसल्ली है कि उसने उनके विश्वास को निभाया। उन्होंने बहू और बच्चे' कहा था। शांता की जिम्मेदारी भी तो उसी पर डाली थी न ? उन्होंने कहा था, 'उसे तुम्हें सौंपता हूँ हँसिया भी दे रहा हूँ और कुम्हड़ा भी। चाहे तुम मुझे प्रगतिशील कहो।' क्या वे जानते थे या उन्हें संदेह था अथवा उनके अनुभव ने ही उनके मुँह से यह बात कहलवाई थी ? या उन्हें इतना विश्वास हो गया था कि मैं सही काम ही करूँगा ? सरस्वती-शांता दोनों की सहज घनिष्ठता को देखकर उसकी कभी कभी अक्ल काम न करती। प्रश्न उठता, इस आत्मीयता का क्या कारण हो सकता है ? क्या शांता को यह डर है कि उस लड़की की अवस्था भी उसकी जैसी हो जाएगी ? क्या वह यह चाहती है कि ऐसा न हो ?

लेकिन शामण्णा ने मन म एक निश्चय कर लिया था। सुब्बक्का और सरस्वती के आश्रम मे आते ही उसन शाता के बारे म निश्चय कर लिया था। वह बच्चे, शाता भी अब बाकी दोना की तरह रायसाहब की धरोहर है। शामण्णा का मन हल्का हो उठा। उसके मन से शाता भी दूसरा के साथ ही मिल गई थी। वह उनका बुजुग है। बाकी सबसे शाता अलग नही। सुब्बक्का-सरस्वती अलग नही, रागण्णा भी अलग नही।

इसीलिए रागण्णा जब फिर से कालेज जाने को तयार हुआ तो शामण्णा को खु शी हुई।

# 11

कालिया को भी खु शी हुई क्याकि उसके बेटे की कालेज की पढाई भी समाप्त हो चली थी। उसस भी बढकर उसके लिए खु शी की बात यह थी कि राज युद्ध शुरू होने क समाचार मिल रहे थे। इससे उसे ऐसा महसूस हो रहा था मानो वह बधनो से मुक्त हो जाएगा। हजार प्रयत्न करने पर भी वह बेटे का सहारा छोडकर नही जा पाया था। वैसे दखा जाय तो वह जब चाहे जा सकता था। वह अपने आप बेटे के विरोध मे कहा करता, 'शायद यह सोचता है इस छोडकर मेरा कोई दूसरा सहारा नहीं। जब से मै पदा हुआ क्या तब से यही मुझे खिला पिला रहा है? अगर मैं न होता तो अभी तक यह हाथ म झाड लिए गाँव मे घूमा करता। अब मुझ पर ही रौब गाठता है। अभी क्या हो गया? एकदम मैं यहाँ से चला गया तो बेट का मालूम पड जाएगा। वह क्या है? इसका दूसरा कुल कौन-सा है? घर मे मुझ पर इसका जार चलता है। अगर मैं चला जाऊ तो इसका किस पर जार चलेगा? एक न एक दिन मैं इसे अपने हाथ दिखाऊँगा।' पर कसे? कालिया के हाथ अब महनत नही करते थे। अब उसका जीवन बेटे की कमाई के सहारे चल रहा था। वही जीवन उसे अब अच्छा लगने लगा था। अब कहाँ तक मैं खपता रहूँ। यह सोचकर कालिया अब आराम-तलब होता जा रहा था। उसकी मेहनत करने की आदत छूट गई थी। फिर

से उसे शुरू करने की इच्छा भी न थी। इसीलिए वह बेटे से मन ही मन डरता था। भरमा यह बात अच्छी तरह समझता था। कालिया को भी यह मालूम था कि भरमा उसकी कमजोरी जान गया है। इसी कारण वह भरमा पर और गुस्सा करता। दिन प्रतिदिन दलदल में फँसा आदमी बाहर निकलने का जितना प्रयास करता है उतना ही भीतर धँसता जाता है। ठीक वैसी ही उसकी स्थिति थी। ऐसी परिस्थिति में युद्ध शुरू होने की खबर सुनकर उसकी जान में जान आ गई।

युद्ध का क्या मतलब होता है यह वह जानता था। बीस वर्ष पूर्व वह युद्ध में हो आया था। तब वह अपनी पत्नी के द्वारा पैदा की गई दुरवस्था से बचने के लिए युद्ध में गया था। अब फिर से बेटे द्वारा दी जाने वाली यातनाओं से बचने के लिए युद्ध में जाना चाहता है। मेरा भी कैसा नसीब है। जिस काम में मुझे खुशी होती है वह काम कर नहीं सकता। युद्ध में शारीरिक सुख विदेश भ्रमण, और कमाई सब कुछ है पर इन सबकी उसे खुशी नहीं। वह मौज मजे करने नहीं जाना चाहता, यहाँ से बचने के लिए जाना चाहता है। ऐसा क्या? अगर इस बार मौज उड़ाना चाहे तो रोकने वाला कौन है? यह विचार आते ही अपना खोटा नसीब याद आता। पिछली बार भरपूर जवानी में भी वह मौज करने नहीं गया था? अब जब अंजर-पंजर ढीले पड़ गये हैं तब मौज करने की बात सोच रहा हूँ। मेरे जैसा मूर्ख कोई हो सकता है? मूर्ख नहीं, मेरा नसीब ही खोटा है। यह सोचकर लम्बी साँस छोड़ता।

जब वह युद्ध आरम्भ होने और भरती होने और इधर उधर घूमने के स्वप्न देख रहा था तभी खबर आई कि युद्ध कुछ दिन बाद शुरू होगा या टल भी सकता है। ऐसी बातें सुनकर कालिया मन ही मन दुखी होता। 'हिटलर भी कैसा मूर्ख है? कैसा डरपोक है? इतना गुर्रा रहा था। अब दुम टाँगों में दबा ली।' वह कर उसने हिटलर को कोसा। कभी कभी वह एक अनुभवी राजनीतिज्ञ के समान और रहस्य को छिपाने के लिए कहता, 'यह अंग्रेजों की चाल है, अपनी तैयारी होने तक युद्ध को टाल रहे हैं, युद्ध अवश्य होगा। होना भी चाहिए यह उसका विश्वास था। इस विश्वास की नाव पर वह आगे के स्वप्न बुनता। अपने को सैनिक वेश में चित्रित करता। छाती तानकर खड़ा होता। बाद में

पकड़ से छूटी रबड़ की गेंद की भांति कालिया के मन की स्थिति हो गई। उसे अब तक का अपना जीवन सपने से भी बढ़कर झूठा महसूस हुआ। वह कैसा बदकिस्मत है ! जीवन का स्वाद लिए बिना ही व्यर्थ में कष्ट उठा रहा है। अब उसकी समझ में आया, वह सब व्यर्थ था। कुछ समय पहले वह अभिमान से कह सकता था कि बेटे की खातिर उसने कितने कष्ट उठाए। पर अब यह स्पष्ट था कि वह सब व्यर्थ हो गया। अब वह ईमानदारी से यह मानने को तैयार था कि वह सब व्यर्थ था। बेटे को देखते ही मन-ही-मन कहता 'बेटे के लिए हूँ। इस बन्दर के लिए ?' दिन प्रतिदिन भरमा का व्यवहार देख कर उसके प्रति उसके मन में तिरस्कार उत्पन्न होता गया। पहले बेटे के दूसरे लड़कों से आगे निकलने और परीक्षा में अच्छे नम्बर पाने के समाचारों से उसे खुशी होनी थी पर अब अभिमान के बदले द्वेष उत्पन्न होता। वह सोचता, 'अब क्या है ? यह लड़ाई शुरू हो जाय तो मैं इन सबसे मुक्त हो जाऊँगा। बाद में

सोचते-सोचते कालिया पागल सा हो उठा। सुबह उठते ही युद्ध के शुरू होने की खबर सुनना चाहता था। दिन प्रतिदिन, हर घण्टे उसी खबर की बाट जोहता। कभी कभी सोचता 'युद्ध इलायन में शुरू हो गया होगा। वह लोग हमसे छिपाते हैं। धीरे-धीरे मन पर से उसका नियन्त्रण जाता रहा। वह अब एक सैनिक है, बेटे से डरेगा नहीं, जो चाहे कर सकता है। यह ज़िद उसमें बढ़ने लगी। वह रोज़ शराब पीने लगा। शराब पीकर घर लौटते हुए बड़बड़ाता, उस 'साले का मुझे क्या डर ! ज़्यादा किया तो दो हाथ दिखा दूँगा।'

भरमा भी पिताजी से नाराज था। पिता की गलती का परिणाम अब उसे भुगतना पड़ रहा है। उस गलती को अब सुधारना सम्भव नहीं। भरमा को पिता अब असह्य लगता और उसकी मूर्खता पर मन तिरस्कार से भर जाता। उसे ऐसा क्या करना चाहिए था ? जाति, जाति हरिजन ! यह कहलवाने पर भी वह पहले की तरह अस्पृश्य ही है न ? स्कूल में नाम लिखाते समय ही हरिजन लिखाकर उसने मूर्खता की।

उसने पिता से कई बार पूछा भी था 'यह बताने की क्या जरूरत थी ?

बेटे के पहली बार पूछने पर कालिया को आश्चर्य हुआ। उसका

प्रश्न ही उसकी समझ मे न आया।

इसलिए बाप न पूछा, "यह बताने की क्या जरूरत थी माने ?'

"यही कि हमारी जाति यह है—यह बात ?"

"उन्होंने पूछा मैंने बता दिया।"

'तुम्हे यहाँ कौन जानता था ?'

"जानता ? यहाँ कौन जानता है ? यह कोइ हमारा गाव है ?"

'इसलिए पूछता हूँ—कुछ और नाम बता देते तो क्या काम नही चलता ?"

"कुछ और नाम ? यानी तुमने यह समझा है कि बम्बई आने से हमारी जाति ही बदल जाएगी ? तुम कैसे लडके हो ? कहता है, यह क्यो बताया ? यानी लोगों के सामने होलेय कहना था ?"

'क्यो क्या माने ? अब तो सबको कायदे से मालूम हो गया कि हम हरिजन है।"

'हरिजन है तो क्या हुआ ? हम वही तो है।"

"वही ? वही माने क्या ?'

पिता की मूखता से चिढकर हाथ झटकता भरमा चला गया था। कई लागा की बात सुनकर वह अत्यन्त दुखी था। उसन बी० के० होलेय नाम बदल कर एच० के० भरमप्पा रख लिया था। उसने पिता को एच० के माने हरिजन बताया था। एच० माने होलेय भी होता था। शायद यह महात्माजी की ही चालाकी होगी।

नाम बदल दने स परिस्थिति नही बदली, अनुभव भी नहो बदला। वह सबके लिए एक विचित्र चीज़ है। कोई अच्छा काम करे तो लोग कहते, "देखिये यह लडका हरिजन है, फिर भी कितना तेज है।" कभी कोई गलत काम हो जाय तो लोग कहते, 'पहले ही पता था, हरिजन कह देने मात्र से खून का रग कही बदल जाता है ? जाति का असर कहाँ जाता है ?" जो भी हो लोग यह भूल न पाये कि वह हरिजन है और न उसे भूलने दिया।

एक दिन अपन गुस्स को रोक न पाकर उसने पिता से पूछा था, "क्या तुम्हे इतना भी मालूम नही था कि जाति क नाम से ही काम बिगड जाता है ?"

तब पिता ने आश्चय से कहा था, 'जाति स ही बिगड जाता है ? अगर जाति का नाम न बताया जाता तो तुम्ह यह स्कॉलरशिप और यह सब कस मिलता ? कसी बतुकी बातें करते हो ?'

यह सच है। उसके हरिजन होने स ही उस इतनी सहायता मिली थी और पढना सम्भव हो पाया था। यह सोच कर भी भरमा को और गुस्सा आता और वह बडबडाता, जाने क्या ऊटपटांग कहे जात हैं ? मूर्खों स पाला पडा है।'

कालिया के लिए बेटे का व्यवहार और विचार समक्ष म न आने वाली एक पहेली थी। वह सोचता, इसका क्या बिगड गया है जा इतना बुरा मानता है ? इस बुरे जमाने म पसे मिलते है। वसे दखा जाय तो हम अगर दूसरी जाति के होते तो अपने सारे पसे बरबाद नहा कर दते। हमारे हरिजन कह देने से हम कितने लाभ मिलत है ? यह गरीबी म पलने वाली जाति है। इस जाति को पसा खच करना भी नहीं आता। जो मिल जाय उस खा पीकर खुश रहने वाली जाति है। क्या हमार लिए किसी तीज त्योहार का झझट है ? मन्दिर पूजा के लिए खच करन की पचायत है ? इस जाति के होन से जो पसे मिलते है उसस अपने कपड लत्त का भी खच निकल जाता है। इसलिए तो कहता हूँ हरिजन कहलान स यह लडका शरमाता क्यो है ?

अपनी एसी जाति क प्रति पिता का अभिमान दखकर भरमा क मन म पिता के लिए तिरस्कार पैदा होना। पढ लिखकर भी अपनी जाति के नाम स शम महसूस करन वाले बेटे को देखकर कालिया का आश्चय लगता। भरमा की समस्या का स्वरूप उसकी समझ म न आता।

अपने साथिया क साथ मिल जुलकर खेलता ह फिर भी तकरार क्या करता है ? इसी बात स कालिया को गुस्सा भी आता।

भेस बदल गया चाल ढाल म फक आ गया है। विद्याजन स उसक जीवन मे सस्कार भी हुआ। फिर भी लोग उस अपने पास आन नहा देते —इसी बात पर भरमा को गुस्सा आता। या यू कह यह शिकायत नही होनी चाहिए कि लाग उस पास नहीं आन देत। उसक मित्र निस्सकोच उसस बातचीत करत हैं उसक पास बठते हैं। कभी-कभी उसकी पीठ भी

ठोकते है फिर भी वास्तविक स्थिति भरमा ही जानता है। वह स पास होने पर भी वे मन स पास नही। काइ भी अपन मन के भाव वाह्य रूप स व्यक्त नही करता। पर भरमा जानता है कि उसमे एक प्रकार का सकाच रहता है। उसकी पीठ ठाकत समय उनका मन एकदम दस कदम पीछ हट जाता यह सब उनक चेहर और आखा स स्पष्ट झलकता है। कितना ही बार पीठ थपथपान आया हाथ उसकी पीठ के पास आते ही एम धीमा हो जाता जसे पहाड चढते समय गति धीमी पड जाती है। भरमा यह भली प्रकार जानता था। मूख क समान पसे के लालच मे यदि उसका पिता अपनी जाति नही वताता ता कितना अच्छा रहता ! उसके पढाई म आर खेल म आग रहन के कारण क्लास की लडकियो म कई उसको प्रशसा की दष्टि स दखा करती थी यह उसे पता था। पर कोई पास नही फटकती थी। उनके मुख स निकल शब्दो को भी माना कही छूत न लग जाय, इस डर म उसस वे बात तक न करती। वह वडे सताप स सोचता — यह एक ही लडकी जरा घनिष्ठता से बात करती ह वह भी क्रिश्चियन है। इसक पूवजा म कोई अस्पश्य रहा होगा ? असल म सारी गलती वाप की है। वह भी क्या करता ? जाति एक आनुवशिक रोग हो सकती है, यह समझना नही चाहिए था ? उसन कितना प्रयास किया था ! अत मे उसका पिता अपनी जाति के ही गुणा पर चल पडा। अव ना रोज ही पीकर आता है वह भी शायद ऐसी ठर्रा। इमसे छुटकारा नही ? क्या अत म वह भी एमा ही वन जायगा ? तब वह म कहता, 'नही नही। अपनी जाति क अनक सुशिक्षित लोगो का देखकर अपन को समझा लेता। उनमे कुछ लोगा का योग्यता और सस्कृति का दखकर अपने को धय वँधाता। कभी कभी अत्यन्त निराशा से कहता, 'भगवान की दष्टि म यदि न्याय हो ता अव तक जा ऊपर थे उन्ह नीचे और जो नीचे थे उन्ह ऊपर जाना चाहिए था।' वह भीतर ही भीतर यह निश्चय करता कि उस इसी उद्दश्य का लकर जीना है। पीकर आय पिता का देखकर वह निश्चय करता कि सारी पुरानी वाता को भूलना हो तो पिता स दूर रहना होगा। अब हो ही गया न ? और एक दो महीना म डिग्री मिलत ही वह कही नौकरी ढूढ़ने लगा। और इसी वहान पिता स सम्बन्ध भी ताड दिया।

वालिया भी जब कभी परेशान होकर सोचता ता उस भी लगता कि

उस दुरवस्था का कारण बेटे की पढाई है। बेटे की पढाई की खातिर ही तो उसने इतना कष्ट उठाया। यह खतम होते ही वह गंगा नहा लेगा। वह भी जानता था कि डिग्री की परीक्षा पास है। उसके खतम होते ही उसकी जिम्मेदारी भी निबट जायगी। वैसे देखें तो अब इस पर कौन सी जिम्मेदारी है। पागल की तरह मैं बेकार में यहां खप रहा हूँ उस बेटे के लिए। मैं रहूँ, या न रहूँ उसे कोई फर्क नहीं पडता। मैं मर जाऊँ तो उसे फायदा ही होगा। उसे अपने को मेरा बेटा कहलवाने में शर्म आती है। मेरे मर जाने से बात ही खतम हो जायगी। यह बताने की जरूरत ही न रहेगी कि किसका बेटा है? यह मेरा नसीब है! सबसे बचाकर यहां लाने पर भी यह पिल्ला अपनी ही जात पर गया। वह रंडी भी ऐसी ही थी। पता नहीं अब भी जिन्दा है या मर गई! वह भी यही सोचती थी कि इस जाति में न पैदा होती तो अच्छा था। शायद इसीलिए उसने गलत रास्ता भी पकडा। मेरा नसीब! बेटे को भी माँ की आन्तें ही लेकर बढने का मत-लब? बेटे को देखने पर उसकी माँ की याद आती अब कालिया को गंगी की याद आती थी। गंगी की याद आते ही मनस्ताप और भी ज्यादा होता। मनस्ताप बढने से पीकर तसल्ली ढूंढने का प्रयास करता। पीने के बाद बेटे को देखकर द्वेष की ज्वाला और भडक उठती। और वह बड-बडा उठता यह परीक्षा निबट जाय। परीक्षा निबटने से क्या होगा? मर क्या न जाऊँ? यूं ही खडे खडे मर जाऊँ तो अच्छा होगा। बाद में बेटे को पता लगेगा। मर ही जाऊँगा। सोचता। इस विचार से वह अपने मन को ढाढस बँधाता और वह और भी ज्यादा पीता। कालिया अभी स्वप्न ही में खोया हुआ था कि बेटे की परीक्षा खतम हो गई। परि-णाम भी आ गया। बेटा पास हुआ उसे इस बात का ध्यान तक न था। किसी और प्रसंग में पिता की यह बात समझ में आई। वह प्रसंग भी कैसा था?

सन 1939 का जून मास भरमा के लिए अत्यन्त संतोष का दिन था। उनका परीक्षाफल आने वाला था। वह पिता से कोई बात नहीं करता था। इस बारे में भी नहीं बताया था। उस दिन सुबह भरमा की वह मित्र आई थी।

यह लडकी सुबह ही सुबह क्यों आई है? मन ही मन कहते हुए

कालिया न तिरस्कार से उसकी ओर देखा। ऐसा लगा, उसके भीतर छिपी दुष्टता को किसी न छेड़ दिया हो। वह वहीं बार-बार किसी-न किसी बहान चक्कर काटने लगा। दो ही कमरे थ कोशिश करने पर भी एक-दूसरे स बचा नहीं जा सकता था। इसलिए भरमा उस लडकी से बात नहीं कर सकता था। कुछ ही मिनटा म सबके लिए एक सकाच की स्थिति पदा हो गई। कालिया वहीं चक्कर काट जा रहा था। माना किसी महत्त्वपूण काय मे लगा हुआ हो। भरमा भीतर ही भीतर उबल रहा था। तभी वह लडकी उठने का उपक्रम करत हुए बाली, 'शायद मैं बहुत पहले आ गई। दूसरा के आने के अभी कोई लक्षण नहीं दीखते। चाह तो आध घण्टे बाद आऊँगी।"

"छि ! छि ! एक बार आने के बाद फिर वापस जाया जाता है? तब तक हम चाय बना लें।" कहते हुए भरमा हँसा और उठकर रसोई की ओर गया।

तभी कालिया ने भीतर आते हुए कहा, "चाय चाहिए क्या? मैं बना देता हूँ।'

तुरत पक्षी पर झपटने वाले बाज की तरह भरमा भी भीतर वाल कमरे म पहुँचा। कमरे म कदम रखते ही उसने दरवाजा बन्द कर लिया और बाला, 'तुम्ह चाय बनाने की जरूरत नहीं।

बना दता हूँ। मुझे भी कौन काम है?" कालिया न अपन भीतर क गुस्से को रोक कर कहा।

'मैं कहता हूँ, तुम्हे बनाने की जरूरत नहीं।"

'यानी'

'हम बना लेंग, तुम जाआ।'

'तो बना लो। तब तक मैं उस लडकी स बात करता हूँ।' कहत हुए उसन कदम उठाये।

तब उस रोकते हुए भरमा ने दाँत पीसकर कहा, "मैंन कहा, तुम जाआ।'

"जाऊँ? ह ह कहाँ? मर लिए कोई दफ्तर है या दुकान'"

जाओ। जहाँ जी चाहे जाओ।"

"मतलब?"

"मैं कहता हूँ, जाओ। सुना या नहीं? हम जब बात करते हैं तब तुम्हें यहाँ रहने की जरूरत नहीं।"

"यह तुम क्या कह रहे हो?"

'हम यहीं रहेंगे। अभी मेरे और मित्र आने वाले हैं। उनके जाने तक तुम कहीं बाहर घूम घाम कर आओ। यही कह रहा हूँ।'

"यानी? क्या तुमने मुझे घर में बँधा जानवर समझ रखा है कि जब जी चाहा गले से रस्सी खोल दी और घूमने जाने के लिए छोड़ दिया?"

"मैं ज्यादा बात नहीं करना चाहता। तुम जाते हो या नहीं?

तुम दोनों को अकेले छोड़कर?"

"अभी मेरे और दोस्त आने वाले हैं।"

"उनके आने तक मैं यहीं बैठा हूँ बाद में ।"

कालिया के मुँह से आगे बात न निकली। उसे इतना आश्चर्य कभी नहीं हुआ। भरमा इतना भी बढ़ सकता है यह उसने कभी नहीं सोचा था। इस प्रकार जब ऐसी किसी कल्पना के बिना बात हो रही थी तभी भरमा दाँत पीसता हुआ उस पर चढ़ आया। उसकी गरदन पर हाथ रखकर ज़ोर से दरवाज़े की ओर धक्का देते हुए बोला, "देखता हूँ कैसे बैठोगे?'

तब कालिया की सारी शक्ति जवाब दे गई। ऐसा होगा इसकी उसने कल्पना भी न की थी। वह एकदम लड़खड़ा गया। दरवाज़े पर हाथ टेक-कर उसने अपने आपको गिरने से रोका वरना उसका मुँह दरवाज़े से टकरा सकता था दो एक दाँत भी टूट जाते तो कोई बड़ी बात न थी। दरवाज़े की चौखट को थामकर उसने अपने को संभाल लिया। हैरान होकर मुड़कर खड़े बेटे को देखने लगा। उसका शरीर एकदम पसीना पसीना हो गया। वह ऐसे काँप उठा मानो सरदी लगी हो। पाँव में जान ही न रही। आँखों में आँसू छलकने लगे। सामने खड़े भरमा का शरीर भी मारे गुस्से के काँप रहा था। भरमा ने एक बार पिता की ओर देखा और एकदम दरवाज़ा बंद करके कमरे से बाहर चला गया।

कालिया बुत की तरह खड़ा रह गया। यह क्या हो गया? कहीं यह सपना तो नहीं। उसने गरदन पर हाथ फेरा और उसे लगा कि वह सपना न था। उसने पाँव उठाना चाहा, पर एकदम पाँव उठ न सके। उसने एक

लबी साँस ली, पसीना पोछा। दरवाजे की ओर मुडा। जब आखो से आँसू बहने लगे। हँसने का प्रयास किया, 'कैसे बठोगे, दखूगा कहा ?' कालिया का मुह खिल उठा। वषा के समय जिस प्रकार पौधे का सबसे ऊपर का हिस्सा हिलता रहता है। उसी प्रकार उसने अपना मुह घुमाकर कमरे म चारो ओर दष्टि दौडाई।

उस दिन शाम को उस पता चला कि बेटा पहले नबर पर पास हो गया है।

उसने कहा 'जो भी हो, एक बात खत्म हो गई। मेरे लिए बेटा मर गया। और उसके लिए तो मैं कभी का मर चुका।'

फिर शायद यह दिखाने के लिए कि वह अभी मरा नही। कालिया पीकर धुत हो गया।

# 12

रामाचारी ने भी गुस्से मे अपने बेटे के लिए कहा था, "मेरे लिए वह हरामखोर मर गया।'

रामाचारी को शात करना शामण्णा से भी सभव न हो सका। गत एक वष का इतिहास आचारी का चिढाए जा रहा था। कभी वे कहा करत, यह तो साप को दूध पिलाने की तरह ही हुआ।" कभी कभी चीखत 'जिस थाली म खाया, उसी मे छेद करना मुनासिब है क्या ?' कभी दहाड उठते, "लडका जरा दब्बू था तो इस तरह धोखा देना जरूरी है ? अब की छुट्टिया म सीनू को आने तो दो तब उससे निबट लूगा। कहकर मानो म्यान से तलवार निकालकर उसके आने की प्रतीक्षा करते। पर सीनू इस बार घर आया ही नही। रागण्णा के साथ आश्रम चला गया। इस पर आचारी का गुस्सा आसमान को छूने लगा। तब वे उसे कोसने लगे, 'मेरे लिए वह हरामखोर मर गया।'

आचारी के उस आवेश को देखकर शामण्णा को हँसी आ गई। आचारी का पूव इतिहास जानने वाला शामण्णा के लिए सचमुच ही यह

गडग्गार बात थी। पर खुद उसके लिए इसमें आश्चर्य की कोई बात न थी। भैया के कालेज के खर्च के लिए सरस्वती आचारी के घर का काम-काज करने को तयार हुई तो शामण्णा को तभी यह बात सूझी थी। तब कुछ महत्त्व था पर आज उसका कोई महत्त्व नहीं था। रागण्णा और सीनू मित्र हैं बहुत गहरे मित्र। इसलिए तो उसने गत वर्ष सीनू को बुला नहीं भेजा था? इसमें कोई सदेह न था कि सीनू ने तब आवश्यक प्रभाव भी डाला था। उस वर्ष रागण्णा का सीनू के साथ पढ़ने जाना भी एक तसल्ली की बात थी। एक साल और कट जाय तो रागण्णा को डिग्री मिल जाएगी। तभी यह नई परिस्थिति पैदा हो गई।

शामण्णा का अदाजा थोडा-सा गलत हो गया था। उन्होंने यह सोचा था कि इस परिस्थिति का कारण है रागण्णा के साथ सीनू की दोस्ती। पर ऐसा सोचना सही नहीं था।

यही क्या? सीनू क्या, रागण्णा तक को भी यह सदेह न था कि ऐसी स्थिति पदा हो जाएगी।

रागण्णा सीनू के साथ कालेज गया। तब भी शामण्णा को डर लगा था। बहिन के कारण रागण्णा बहुत दुखी था, उसने सीनू को भी सतर्क किया था और उसके बारे में पत्र लिखते रहने को कहा था। रागण्णा भी शामण्णा को लिखता रहता था। कभी-कभी वह अपनी बहिन को भी लिखता था। इन सबको आँखों से देखने वाले शामण्णा को अत में घटी घटना देखकर आश्चर्य नहीं हुआ। अगर वसा न होता तो शायद उसे आश्चर्य होता। ये दोनों तरुण मित्र कालेज में किस प्रकार पढ़ रहे हैं, इसका स्पष्ट चित्र शामण्णा की आँखों के सामने रहता था। कई बार उसे ऐसा लगता कि उनमें वह भी एक है। किसी जमाने में वह भी क्या इसी प्रकार बहस नहीं किया करता था, अपना अभिप्राय व्यक्त नहीं किया करता था? आठ दस वर्ष की बात नहीं बल्कि अठारह वर्ष पुरानी बात है फिर भी वह इतनी पुरानी लगती है मानो पूर्व जन्म की हो। मनुष्य मन से नहीं बढ़ता बल्कि अनुभव से बढ़ता है। अपना अनुभव इतना अधिक होने से इतने साल पुरानी याद भी उसे अपना अनुभव लगती है। 'मैं आदोलन में भाग नहीं लूगा राजनीति का मेरे लिए महत्त्व नहीं। जीवन के लिए समाज मुख्य है राजनीति नहीं। इसलिए पहले लोगों में जीने की योग्यता

होनी चाहिए। इस प्रकार समाज का जीवन सुधारना चाहिए। यही व्यक्ति का मुख्य काम है।" ये सब ऐसी ही बातें वह स्वयं नहीं कहता था? तब इस बात का गर्व था कि वह एक सुधारक है। अब ये लड़के भी वही बातें कहते हैं। यही क्या? ऐसे लोग भी हैं जो हजारों वर्षों से यही बातें कहते आ रहे हैं। आत्मा अमर है कहकर व्यक्ति-स्वातंत्र्य की घोषणा करने वाले याज्ञवल्क्य से लेकर व्यक्ति-स्वातंत्र्य ही जीवन है' कहने वाले और मानव को अमर बनाने वाले महात्माजी तक समय समय पर वही बात दोहराते आए हैं। यानी? तो क्या मानव समाज का सुधारना संभव नहीं? नहीं। यह बात गलत है। यह कहना गलत है कि पहले से हम अब सुधरते जा रहे हैं। प्रगति सीधी सरल रेखा की तरह आगे आगे नहीं बढ़ती। देश और काल के मापदण्ड से प्रगति को नापने की इच्छा ही गलत है। पिछला कदम यदि स्थिर हो, अगला कदम भी स्थिर होगा ही यह कैसे कहा जा सकता है? प्रत्येक कदम को अपनी परिस्थिति के अनुसार ही स्थिर होना चाहिए। प्रत्येक समाज को अपनी समस्याओं के अनुकूल जीवन के सत्य खोजने चाहिएँ। समस्या के बदलने के साथ साथ खोजने के प्रयत्न बदलने चाहिएँ। परंतु जीवन का सत्य तो स्थिर बिंदु होता है। इसी कारण प्रत्येक समाज यह सोचते सोचते शामण्णा ने सिर झटककर कहा, "समाज, जीवन, सत्य, इन जड़ शब्दों का क्या अर्थ है? मैंने अपने जमाने में जो कहा वही आज के ये लड़के अपने जमाने में कह रहे हैं। बस इतना ही। बात यह है कि करनी और कथनी में एकता कैसे हो?'

उनके दैनिक जीवन की चिट्ठियों के कारण शामण्णा को अपने दृष्टिकोण को उठाकर ताक में रख देना पड़ेगा, इसकी कल्पना न सीनू का होना संभव था और न रागण्णा का ही। यही क्यों? जिसे वे केवल चर्चा का विषय समझ रहे थे वह सामाजिक दृष्टि से एक महत्त्वपूर्ण बात है, इसकी भी कल्पना उन्हें न थी। वह सरस्वती का महत्त्वपूर्ण प्रकरण था। उसी के बारे में वे बार बार बात करते थे।

रागण्णा के सामने वही विषय था। वह बार बार उसी के बारे में बात करता। उसके जीवन में वही एक निराशा घर कर गई थी।

जब वह यह कहता, "चाहे जितना भी कोई सोचे, रास्ता ही नजर नहीं आता।' तब सीनू सामने रखी पुस्तक या पत्रिका से मुँह उठाकर भौंह

चढाक~ रागण्णा को घूरना ।

यह दखकर रागण्णा कहता, "तुम्हे गुस्सा आना स्वाभाविक है क्योकि प्रश्न म~ा है जिम्मदारी भी मेरी है। तुम्हे क्या ?' तब सीनू की चढी हुई त्यारिया वर्षा के बादल की तरह छँट जाती और तिरस्कार की हँसी की प्रखर किरणें मुह पर छा जाती । तब वह पूछता

कौन सी जिम्मेदारी ? अभी जो तुमने निभाई है, उसी जिम्मेदारी की बात कह रहे हो ?"

'पानी ? जो हुआ वह सब क्या मैंन जान बूझकर किया ? तो श्रीनिवासाचारी (सीनू का पूरा नाम) के कहने का आशय यही है क्या ?" रागण्णा के इस प्रकार 'आचारी' कहने से सीनू समझ गया कि वह गुस्से मे है । उसके उस लहजे को देखकर सीनू की हँसी रुक न पाई। तब वह बोला

नही, तुमने जानबूझकर नही किया । वह जो पूवज~म का कम है न वह एक हाथ मे कदील और दूसरे मे लाठी लेकर रात को आकर दरवाजे पर दस्तक दे देकर तुम्हे जगाकर ले गया । बेचारा ! नीद म तुम्हें कुछ मालम नही पडा कि तुम कहाँ जा रहे हो और क्या कर रहे हो ?'

सीनू के इस व्यग्य म और भी चिढकर, रागण्णा ने हताश होकर कहा 'आगे क्या करना चाहिए यह बताना छोड, जो हुआ उसी को लेकर बार बार नानाकशी करत हो ! अच्छे दोस्त हो तुम !' यह कहते समय रागण्णा को ऐसा लगा मानो सारी दुनिया उसकी विरोधी हो।

'आग क्या करना है ? तुम कर ही क्या सकते हो ? जो हो गया उसे गलत मान चुपचाप हाथ पर हाथ धरकर बठना ही तुम्हारे लिए सही प्रायश्चित है।"

'इस बात से तुम्हारा क्या मतलब है, सीनू ?'

"मतलब मान ? तुम्हारे हाथ मे है ही क्या जिसे करने की तुम आग योजना बना रहे हो ? जिसे करने की तुम हिम्मत करना चाहते हो ? तुम्हारी बहन बडी होती जाएगी उसे रोक पाओगे ? तुम्हारी बहिन की विचार शक्ति भी विकसित होगी, क्या उसे रोक सकते हो ? तुम्हारी बहिन के अनुभव विस्तृत होंगे, उसे दीन-दुनिया के रीति रिवाज समझ मे आने लगेंगे उसके मन मे भी यह आकाक्षा अकुरित होगी कि उसे भी सुख

चाहिए, है या नहीं ? तो तुम्हारा कहना है कि यह सब नहीं होना चाहिए? मैं कहता हूँ तुम्हारे हाथ में है ही क्या ? बस जानबूझकर उसके जीवन को कुचल डालो तो और बात है।"

इतना कहने के बाद सीनू को एकदम डर लगा कि उसकी बात ज्यादा कड़ी हो उठी है। रागण्णा से कोई उत्तर न बन पाया। वह भीगी आँखों से सीनू को देखने लगा। सीनू को दुख हुआ कि उसने ऐसा क्या किया ? इन्हीं बातों को लेकर सीनू ने शामण्णा को लिखा 'मैंने रागण्णा का मन दुखा दिया, दुखाना ही पड़ा। यह सब उनके हित के लिए किया। यह बात मैं अपने अंतर्मन से कह रहा हूँ।' ऐसे ही और भी प्रसंगों पर जो चर्चाएँ होतीं वे पत्रों के रूप में शामण्णा तक पहुँच जातीं। शामण्णा ऐसे वाक्यों को पढ़कर हँसता। मुग्ध तारुण्य भरे दो युवक अपनी पीड़ाओं को सह न पाने के कारण एक-दूसरे को जानबूझकर कोंच रहे हैं। रागण्णा भी लिखता, "सीनू किसी ज़िम्मेदारी को समझ नहीं पाता जो मन में आता है कहता जाता है।"

रागण्णा के लिखे ऐसे वाक्य शामण्णा पढ़ता और सोचता, 'भले ही रागण्णा समझ नहीं पाता। कहता है ऐसा करने को उसका मन है पर हिम्मत नहीं। इसीलिए सीनू को ग़ैर जिम्मेदार कहता है।'

शायद वह स्वयं भी इस उम्र में ऐसा ही रहा होगा। यह सोचकर उसे मज़ा आता।

आयु में छोटा होने पर भी सीनू विचारों के हिसाब से कितना परिपक्व है ? यह विचार आने पर सरस्वती के मन को अच्छा लगता। भाई के प्रत्येक पत्र में सीनू का उल्लेख अवश्य रहता। "सरस्वती, वाकई सीनू कैसा है यह कल्पना कर पाना, वहाँ तुम लोगों में से किसी के लिए संभव नहीं। बाप रे ! उसके एक एक विचार के बारे में क्या बताऊँ ?" अक्सर भाई के पत्रों में यह सब लिखा रहता। सरस्वती ने यह कल्पना भी नहीं की थी कि उसके बारे में उन दोनों में जो चर्चा होती थी वह सब उसका भाई जिस प्रकार शामण्णा को लिखता है वैसे उसे नहीं लगता। फिर भी भाई के पत्रों से धीरे धीरे सीनू की एक मूर्ति उसके नेत्र के सम्मुख आ खड़ी होती।

वह कभी कभी शाता से कहती, "सीनू ऐसा नही जैसा कि हमने समझ रखा था।"

यह सुनकर हँसकर शाता पूछती, "क्या, ऐसा क्या है ?' शाता यह पूछने से ज्यादा सरस्वती को गौर से देखती और एक लबी साँस लेती।

तब "शाता बुआ को कोई और बात याद तो नहीं आ गई ? या मैंने कोई गलती कर दी ?" इस विचार से घबराकर सरस्वती इधर उधर देखने का यत्न करती।

"लड़की को सदेह तो नहीं हो गया ? क्या वह जान गई है कि मैं उसके हृदय की बात समझ गई हूँ ? बेचारी !' कहते हुए शाता भी बात बदलने को शून्य दृष्टि से इधर-उधर देखती।

शाता को यह विश्वास हो गया था कि लडकी यह बात समझ गई है। भाई के पत्रों को पढते हुए सरस्वती के बढते हुए उल्लास को, पत्रों की प्रतीक्षा को, पढ़े हुए पत्र को दुबारा अपने आप बार बार पढना देखकर पत्र आते ही सीनू के बारे म बात करने के उत्साह को देखकर शाता इतनी शांति से व्यवहार करती मानो वह सब कुछ समझ गई हो। वह सोचती, 'इसमें क्या गलत है ?' शाता ने यह समझा था कि सरस्वती के हृदय में जो परिवर्तन आया है उसकी कल्पना स्वय सरस्वती को भी नहीं। पर उसे विश्वास था कि भले ही सरस्वती को कल्पना न हो पर उसे है। वह स्वय अपने आप से कहती 'इसमे गलत भी क्या है ? फिर सोचती थी कि सीनू का चित्र सरस्वती के हृदय-पटल पर अंकित होता जा रहा है और दिन-प्रतिदिन स्पष्ट होता जा रहा है। अगर ऐसा रहा तो उसे मिटा पाना सभव नहीं। लेकिन आगे ? 'इसमे गलत भी क्या है ?' एक दिन मुख्यवक्ता के साथ बात करते हुए किसी प्रसगवश उसने कह दिया क्यो नहीं होनी चाहिए ?'

तब मुख्यवक्ता बोली, "हाँ क्या नही ? तो मैं शामण्णा से ?'

शाता ने सचेत होकर विस्फारित आँखो से मुख्यवक्ता को देखते हुए पूछा, 'क्या कहा ?

'क्या ? मेरी समझ में नहीं आता क्या ? मुझे बहुत पहले से ही पता था। तुम क्यो पगली हो !' कहते हुए मुख्यवक्ता ने जब शाता को देखा तब वह काँप उठी, उसके पसीने छूट गए। कैसी मूर्ख है ! अपने किसी विचार

मे खोए रहन से सुब्बक्का के प्रश्न का बिना सोचे ही उत्तर दे दिया था। अब यह बात उसके ध्यान मे आई। सुब्बक्का का प्रश्न ही कुछ और था। उसका सरस्वती मे कोई सबध नही था। हरएक दिन सुब्बक्का बार बार वही बात किया करती थी। उस दिन भी वही बात चली थी। धीर धीर अपन विचार से सरस्वती की ही बात शुरू की थी। तब सुब्बक्का ने यही तो कहती हूँ, इसम गलती क्या है ? तुम्हारी और शामण्णा की शादी क्यो न हो ?' कहा था। उसके उत्तर मे वह क्यो नही होनी चाहिए ? कह गई।

शाता एक बार फिर स सिहर उठी।

"नही सुब्बक्का, मैं कुछ और ही सोच रही थी।'

"भाड म जाए दूसरी बात अगर तुम्हारे मन म हा ता ।

"नही, नही मैं ता सरस्वती के बारे म साच रही थी।

सुब्बक्का एकदम फीकी पड गई। आगे जबान स शब्द न निकले। खुल हाठ खुने ही रह गए, उन्ह बद करन की शक्ति भी न रही। सुब्बक्का ऐसे फीकी पड गई मानो जन्म जन्मातर से पीछे पडा क्रूर शेर अत म उसके सामन ही आ खडा हुआ हो।

बाद म एक लबी सास लकर सामने बठे भाई क पत्र को उल्लास से पढती बेटी के खिले मुह को देखकर सुब्बक्का बोली, 'पता नही कौन शाप लगा है इस घराने का ?'

"हाँ, शाप ही लगा है।' कहकर उसने बहुत रोकने पर भी गिरने वाली दो एक आसुओ की बूदो को हँसकर पोछने का प्रयास किया।

सामने रखे भाइ के पत्र को देखकर सरस्वती मन ही मन कहती, पता नही उसके किस जन्म के पुण्यो का फल है। वतमान सुख के अतिरिक्त उस किसी और बात का भान नही था। हाथ तो यही बता रहा था कि सामने रखा पत्र भाई का है पर मन कहता, सामन सीनू की मूर्ति है। शुरू-शुरू मे पत्र पढते हुए उसे ऐसा आनद आता मानो भाई सामन मौजूद हो। बाद म जब वह पत्र पढती तब भाई और सीनू दानो के बहस करने — चित्र आँखो के सामने आन लगता। पर आजकल प्रत्येक पत्र भाई का चित्र न उभरकर केवल सीनू का ही चित्र आँखो के स

जाता। अब तो उस पत्रों का पूर्ण रूप से पढ़ पाना ही कठिन लगने लगा। इस बात का कारण उसकी समझ से बाहर था। पत्र को हाथ में लेते ही सीनू की मूर्ति सामने आ खड़ी होती। भाई का पत्र है, उसे पढ़ना चाहिए उसका उत्तर देना चाहिए—इस कर्तव्यनिष्ठा से ही वह पत्र को पढ़ने का प्रयास करती। परन्तु उस तब सीनू की मूर्ति से बात करने का-सा आभास होता। उसकी बातों से वह हैरान हो जाती और गर्व महसूस करती। वह उससे बात कर रहा है। पर एकदम भाई के ये शब्द 'सीनू ऐसा है' ध्यान में आते ही उसे लगता कि वह भाई का पत्र पढ़ रही है। तब उसे दुख महसूस होता। उन दोनों के बीच भाई क्यों आता है? यह सोचकर वह गुस्से से पत्र को देखती। तभी भाई की मूर्ति अदृश्य हो जाती। 'देखा, तुम्हें कैसा तंग किया!' कहती सीनू की मूर्ति आन खड़ी होती। लगता कि वह उसका हाथ पकड़ रहा है पर यह गुस्से से उसका हाथ झटक देती। तब पत्र नीचे जा गिरता और वह इधर उधर देखकर पत्र को घबराहट से उठा लेती।

ऐसा क्या? यह क्या? ये दो प्रश्न सरस्वती को डराने लगे। धीरे-धीरे दूसरों के साथ बातें करने में भी उसे डर लगने लगा। कोई भी कुछ कहता तो वह कहती, 'हां, सीनू भी यही कहते थे। नहीं, सीनू ऐसा कहते थे।' फिर तुरन्त इधर उधर देखती। कहीं दूसरे लोग समझ तो नहीं गये? कहीं वे इस दृष्टि से उसकी ओर देख तो नहीं रहे हैं? वह जो भी कहती है सीनू के शब्दों में ही क्यों कहती है? मानो सीनू ही उसके भीतर बैठकर हर बात में पहले बोल पड़ता है।

बचपन में भैया के साथ खेलने की याद आती। 'तू पागल है तू पागल है!' *दोनों एक-दूसरे को पागल कहने की होड़ लगाकर साथ-साथ* चिल्लाते जाते। तब माँ गुस्से में आ जाती पर वह न रुकती। आखिर में माँ 'राय्या तू तो ऐसे कर रहा है मानो उससे भी छोटा हो।' कहकर गुस्सा करती। भाई चुप हो जाता। तब 'मैं जीत गई' कहकर वह नाचने लगती। *और अब? माँ की सहायता नहीं। जोर से बोल नहीं सकती। शायद* इसीलिए भीतर छिपे सीनू के शब्द पहले निकल पड़ते? ऐसा लगता, जैसे हर बार वही हार जाती। यह कैसी विचित्र बात है? हारने में भी आनंद आता है। भाई के साथ ज़िद करते समय हारने पर रोना आ जाता था।

अब आनद आता है और हारने की इच्छा होती है। ऐसा क्यो ?'

'यह क्या ?' सरस्वती मन ही मन कइ बार अपने से पूछती, 'मुझे क्या हो गया है ? भइया का पत्र आने पर पढने की इच्छा होती, पर हाथ मे लेने पर न पढने की इच्छा होती।' यू ही हाथ मे लेकर बैठ रहती। खोलन तक की इच्छा न होती। कई बार पत्र आते ही 'क्या करूँ यह पत्र आया ही क्या ? पढूँ या नही ?' सोचती। अगर पत्र न आता तो सोचती, 'चलो अच्छा ही हुआ !' वह आध घटे चुप बैठी रहती। अत मे पुरान पत्र को लेकर कोई उसे छीन न ले सोचती हुई जल्दी जल्दी एकात की ओर भागती। 'यह क्या ? मुझे क्या हो गया ? भोजन के समय पट भरा सा लगता है, दूसरे वक्त भूख सी महसूस होती है।' कोई काम याद करके शुरू करती है। और काम करते-करते यह भूल जाती है कि उसने वह काम क्यो शुरू किया था। उफ ! उस दिन कैसी बात हो गई ? वह पुस्तक मागने शाता के पास गई और बात करते-करते बोली, 'बुआ तुम्हे भी बताना चाहती थी। पर बताना भूल गई।' तब शाता बोली अरे हाँ मैं ही बताना भूल गई। शामण्णा के पास सीनू का पत्र आया है, यह क्या ? मैंने यह तो नहीं पूछा था ? कही मैं पागल यही तो नही पूछ बैठी ? जरा हैरान सी होकर, 'नही, मैं आपको कुछ बताने जा रही थी। उसने यह बात ऐसे कही मानो शाता की बात सुनी न हो और उस ओर उसकी आसक्ति भी न हो।

'यह क्या ? सरस्वती सचमुच डर गई थी। इन दिनो तो भाई के पत्रो को पढना भी कठिन हो गया था। आख मूद लेने पर भी सीनू की मूर्ति हटती ही न थी। मन किसी दूसरी तरफ लगाने पर भी वह हटती ही न थी। गुस्से म आकर स्वय को चिकोटी काटती तब भी वह मूर्ति आखा स न हटती। कभी कभी तो ऐसा महसूस होता कि साक्षात सीनू ही उसके सामने खडा है, उससे बातें कर रहा है, उसका हाथ पकड रहा है। पत्र से निराशा क्यो ? क्या उसे इस बात की निराशा है कि सीनू ने उसका हाथ नहीं पकडा। क्या वह यह आशा करती है कि सीनू उसके सामन खडा रह। क्यो ? ऐसा क्या होता है ? सरस्वती की यह बात समझ म न आती थी। उसकी स्थिति उस बालक जैसी थी जिसे अपनी भूख का ही पता न हो। सीनू की खबर आन से उसे ऐसा लगता माना उसका पट भर गया हो। वह सोचती, सीनू का सान्निध्य ही उसके मन की भूख है। यह ख्याल आते ही

उसे घबराहट होती। डर लगता। उसे इस बात का भी डर था कि कोई दूसरा न जान जाय। पर मन में रहस्य को कहाँ तक छिपाकर रखे उसका स्वास्थ्य अभी बिगडता जा रहा था। उसे देखते ही लोग सदेह भी कर सकते हैं। पता नही शाता बुआ क्या सोचेंगी? 'इतना क्या उतर गई हो?' पूछ बैठें ता। बस बात निबटी ही समझो। शाता न देखा और सोचा, लडकी अच्छी बढ रही है। वह सरस्वती को देखकर मुस्कराती। परन्तु वह तो यही सोचती, 'कल से दाना जून पेट भर खाना खाऊँगी।' बेचारी! उसे केवल इतना ही पता था कि उसमे परिवर्तन आ रहा है। पर यह कैसा परिवर्तन है इसकी कल्पना तक उसे न थी।

सुब्बक्का को इस बात की कल्पना अवश्य थी कि बेटी बढ रही है पर उसकी बेटी इस प्रकार निखर आएगी इसकी उसे कल्पना न थी। लडकी जात बढेगी ही। बढने से पहले ही शादी हो जानी चाहिए, यह सोचकर कुछ किया तो, कुछ-का कुछ हो गया। बेटी की सुदरता को देखकर माँ का हृदय काँप उठा बदनसीब ऐसे क्या बढ रही है?' वह यह देखकर उस पर गुस्सा भी करती। साथ ही सुब्बक्का को डर लगता कि लडकी ने गृहस्थी का मुह भी नही देखा। लेकिन इस तरह बढ रही है, लोग क्या कहेंगे। खाना-पीना कम करने की बात कहे तो खाना ही कितना खाती है? इत्ता सा यह कौन-सा पूर्व जन्म का पाप है? यह सोचकर हताश सुब्बक्का भाग्य को ही कोसती। तभी उसने शाता को देखा। शाता और शामण्णा की शादी हो जाती तो कितना अच्छा था। पता नही, क्यो नहीं हुई? शायद हो भी गई हो। किसी रजिस्ट्री शादी की बात कहते है अगर वैसी ही कर ली हो तो? यानी सरसी की भी दुबारा शादी—यह विचार आते ही सुब्बक्का चौंक उठती। वह अपने को कोसने लगती—पूर्व जन्म की राक्षसी तो नही वह? नही तो उसे ऐसे बुरे विचार क्यों आते? वैसे देखा जाय तो सुब्बक्का की समझ मे कुछ भी न आता। बेटी को देखकर एक लबी सास छोडती। उसके बढते रूप को देखकर डरती थी। सृष्टि को पाल सकने और और प्रसन्न कर पानेवाले उसके उभरे उरोज देखकर वह काँप उठती और शरमा जाती। अत मे उसे कुछ भी समझ मे न आता। 'यह भगवान की कैसी लीला है?' कहकर बेटी की ओर आख भर कर देखती और सोचती, किसने सोचा था कि इत्ती सी बच्ची इतनी बडी हो जाएगी।'

"पैदा हाने के बाद बढना ही होता है। जिसमे बढने की शक्ति नही उसे समझना चाहिए पदा ही नही हुआ। उसे नष्ट कर देना ही बेहतर है।"

'यानी ? तुम्हारे कहन का क्या मतलब है ?"

"तुम ता पागल हो रागण्णा। समाज के माने क्या है ? इस ससार मे जन्म लन वाले को बढना चाहिए। उसम परिवतन आना चाहिए। सदा एक जसा रहन वाला समाज मरा हुआ समझो।"

'सीनू मैं यह नही कहता कि समाज सदा एक जसा रहना चाहिए।'

"तो इस बात से क्यो घबराते हा कि बहन की दूसरी शादी कसे की जाय ?"

'ठीक है ? मतलब यह है, पुराने जमाने म यह प्रथा नहीं थी, इस कारण मैं यह नही कहता कि पुर्नाववाह नहीं होना चाहिए।"

"इसका मतलब ? अगले जमाने मे भी नही हो सकेगा, इसलिए कह रहे हो ?"

"क्या कहा ?'

सीनू न कहकहा लगाया।

"अरे ! सीनू मेरी बात तो सुनो। मैं और तुम जब बहस करते है तो मान लेते हैं पर कायरूप मे परिणत करने की बात आते ही पीछे हट जाते हैं।"

"यह क्या ? मुझे पर टीका है क्या ?"

रागण्णा का दुख हुआ, 'छि ! छि ! सीनू ऐसी बात ।'

शायद सीनू चिढ गया। अब उसम इतनी सहन शक्ति भी न रही थी कि वह रागण्णा को बोलने देता।

"अगर मुझ पर टीका कर रहे हो तो सुनो बताता हूँ। हम यहा बात करते है घर जाकर डर जात है। तुम्हारा यह कहना है, तुम्हे धमकाने वाला घर म कोई नही। शायद तुम्हें यह घमड हा। पर मैं अपनी कहता हू सुना जब तक मुझे अपने विचार पर पक्का भरोसा नही हा जाता तब तक बडो की बात मानकर चलना गलत नही समझता। अब मुझे अपने विचारो पर भरोसा हो गया है। पर अभी मेरे सामने कुछ और भी बातें

हैं। विधवा विवाह उचित है, यह मानने ही दुनिया भर की विधवाओं को इकट्ठा करके कलियुग में कृष्ण से स्पर्धा करने का मेरा विचार नहीं ।"

"अरे सीनू, इतने गुस्से में आने की क्या बात है? क्या मैंने तुमसे ऐसा करने को कहा?"

"मुझसे—मुझसे कहने वाले तुम कौन हो? तुम्हारा इसमें क्या संबंध है? तुमसे पूछूं भी क्या? जिससे इस बात का संबंध है, पहले वह तो माने ?"

रागण्णा हैरान हो गया, 'अरे सीनू, अरे सीनू! तुम क्या कह रहे हो? क्या तुम अपने आप "

"शट अप! तुम्हारा इससे कोई संबंध नहीं।' इस प्रकार चिल्लाकर सीनू वहाँ से चला गया।

रागण्णा ने यह सोचा कि इस बात की सूचना शामण्णा को देनी चाहिए। दुनिया में तो परिवर्तन हो रहा है पर उसे पता नहीं था कि सीनू में इतना बड़ा परिवर्तन हो गया है। शामण्णा को लिखे पत्र में उसने मजाक में यह जोड़ दिया था कि सीनू में हुए परिवर्तन का वह स्वागत करने को तैयार है।

शामण्णा ने अपने उत्तर में यह व्यक्त कर दिया कि केवल परिवर्तन की दृष्टि से इस बात का स्वागत नहीं किया जा सकता। इतने में दुनिया को ही बदलने वाली घटना घट गई। शामण्णा ने पूछा था कि तुम क्या इस परिवर्तन का स्वागत करने को तैयार हो? सीनू और रागण्णा दोनों का अभिप्राय था कि वे स्वागत ही नहीं अपितु संघर्ष को तैयार हैं। हिटलर के द्वारा शुरू किये हत्याकांड के कारण दुनिया तो बदल जाएगी, पर उस परिवर्तन की खातिर हिटलर का स्वागत कैसे किया जाए?"

सीनू ने कहा 'रागण्णा, यह समझो कि इस युद्ध से यूरोप की उन्नति मिट्टी में मिल जाएगी।

रागण्णा ने पूछा, "यानी इससे क्या ऐसा समय आएगा कि हम भी उन्नति करने का अवसर पा सकेंगे?'

उन्नति और अवनति इन शब्दों का कोई अर्थ नहीं है। हाँ, पुराना जमाना जरूर चला गया। यह हमारे लिए अच्छा हुआ।' सीनू ने दृढ़ता से यह बात कही।

रामाचारी ने भी कहा 'मेरे लिए वह हरामजादा मर गया।' बाद म गुस्से को रोकते हुए उसने कहा, "पुराने जमाने मे ऐसा होता ।

# 13

'पुराना जमाना चला गया, इस बात का गंगी को प्रत्यक्ष अनुभव था। जीवन मे अधिक से अधिक सुख प्राप्त करने के प्रयत्न करके उसमे विफल होने के कारण अब वह दार्शनिक बन गई थी। दिन बीतने के साथ-साथ उसकी आसक्ति भी कम होती जा रही थी। सुख क्या है? यह जानने की बुद्धि और संस्कारो के अभाव के कारण बचपन म अकस्मात् प्राप्त अनुभवो से, उन्ही को सुख का साधन मान बैठी, तो इसम आश्चर्य की कोई बात न थी। जवानी म मनचाहे शारीरिक सुख को ही उसने सब कुछ समझा था कि उसी से उसे जो चाहे मिल सकता है। यह बात उसने पहले गुडण्णा के और बाद म रामप्पा के द्वारा महसूस की। उसी अनुभव के कारण उसमे एक ओर अपने लिए अहकार और दूसरी ओर पुरुष के प्रति तिरस्कार की भावना पैदा हो गई थी। यह उसके स्वभाव के अंग बन चुके थे। उसके मन म इस कारण अहकार था कि लोग उसकी ओर देखते हैं और उसे चाहते हैं। इसका कारण जानने का मंत्र उसके पास जवानी की धुंध म था ही नही। बाद मे केवल इस बात के लिए कैसे-कैसे पुरुष भी कठपुतली की तरह नाचने लगते है, यह सोचकर पुरुष के प्रति उनके मन मे तिरस्कार की भावना घर कर गई थी। गुडण्णा की हत्या हो गई, रामप्पा फरार हो गया। तब गंगी का मद उतरा। उसके मन म धीरे धीरे यह संदेह सिर उठाने लगा कि लोग यह समझते है कि वह आंख मारते ही गले पड़ने वाली औरत है। यही नहीं उसे आसानी से मिल सकने वाली वेश्या समझकर पुरुषो की आसक्ति उसमे कम होती जा रही है। यह अनुभव होने के बाद उसका घमंड टूटने लगा। अब उसम पुरुष के प्रति तिरस्कार की जगह द्वेष पैदा होने लगा। उस स्थिति मे उसका अंतिम प्रयत्न था शामण्णा को वश मे करना। उसम असफल होने पर 'यह मन है

भी या नही' कोस कर उसने अपन को तसल्ली दी। पर वह जानती थी कि यह तसल्ली झूठी है। उसन सोचा, शामण्णा और शाता मे कुछ गड-मड तो जरूर है। उसन पता लगान का पूरा प्रयास किया। शामण्णा और शाता अलग अलग कमरो म सात थ। उसन सोचा, 'अरे! यह खेल मुझे नही आता? अलग-अलग कमरो म बिस्तर बिछान स क्या होता है?' रोशनी हाते ही दौडकर आकर दखती, दोना बिस्तरो का बारीकी से निरीक्षण करती। किसी भी बात के सशय का अवकाश न पाकर भीतर ही भीतर कोसती 'इससे क्या हुआ? बाद म अपन अपने बिस्तर पर आकर सा सकते है।' इस प्रकार वह सरकारी वकील की भाँति अपने म जिरह करती। उसने पूरा पता लगान की जिद पकड ली। उसका तक और सिद्धात यह था कि स्त्री और पुरुष रात के समय कही इकटठे मिलें ता—'उसके अलावा' और क्या हो सकता है? कभी-कभी युक्ति से पता लगान का प्रयास करती।

वह कई बार इशारे से पूछती,"क्या मालकिन, तबीयत ठीक नही क्या?"

क्यो? मुझे क्या हो गया, गगी।'

"नही, मुह उतरा सा है इसलिए पूछा।"

"कुछ नही, कल रात सोन म देर हो गई।"

अच्छा।" गगी कहती।

'बात यह है कि वे एक किताब पढकर सुना रहे थे।'

अच्छा।' कहकर गगी जरा स्वर खेंचकर चुप हो जाती। फिर अपन मन म सोचती, 'किताब पढकर सुना रहे थे! मुझे क्या इसने दूध पीती बच्ची समझ रखा है। किताब किताब की बात कर रही है। इसकी आख ही बता रही हैं। कसी किताब थी। मुह पर थकान होने पर भी खुश दीखती है। मैं समझती नही क्या ?

गगी को शाता की बात पर विश्वास ही नही होता। स्त्री पुरुष का इतनी दर तक रात गये एकात म रहना और सिफ किताब पढना यह उसके लिए एक मजाक की बात थी। कभी कभी जरा और साहस करके वह एक और युक्ति का प्रयाग करके देखती।

एक बार एक मौके पर उसन पूछा, क्या पित्त हो गया है क्या मालकिन?'

अनुभव नही की। उसकी सिफ यही इच्छा थी कि कालिया का सहारा होता तो अच्छा होता। वह सोचती, 'औरत का जीवन ही विचित्र है।' अपने आप खाना-पीना सो रहना मद के लिए आसान है। अगर मद पास न हा तो औरत के लिए न खाना रहता है, न बिस्तर।'

गगी के इस सिद्धात का मानो सिद्ध करने के लिए ही इस समय सरस्वती विवाह के तीन दिन बाद विधवा हो गई।

'इस घराने की औरतें पति को खा जाने वाली जाति की हैं क्या?' यह सोचकर गगी हैरान रह गई। वह बेचारी सरस्वती को लाल लाल आँखा से ऐसे ताकती मानो वही अपने पति की मत्यु का कारण हो।

परन्तु गगी का गुस्सा भी अधिक दिन नही चला। अधिक दिन चलना सभव भी न था। सरस्वती का मुग्ध स्वभाव देखकर गगी को उस पर दया आन लगी। पति के गुजर जाने का दुख या उसका महत्त्व भी महसूस न कर पाने वाली सरस्वती को दखकर गगी का मन दया से और भी पिघल उठा। शुरू-शुरू मे घर के दूसरे बडे लोग सरस्वती से बात नही करते थ। तब अनिवाय रूप से गगी को सरस्वती का सपक प्राप्त हुआ। बाकी सब क्या उमसे ज्यादा बात नही करते यह गगी जानती थी। पर किसी न किसी को उस लडकी से बात करके चार बातें तसल्ली की कहनी चाहिएँ, यह गगी का विचार था। उसने इसी विचार से सरस्वती स बात करनी शुरू की थी।

उसन सरस्वती को चार बातें तसल्ली की कही भी। एक दिन गगी ने अपना वडप्पन दिखाते हुए कहा, 'औरत के जीवन मे सुख नहीं सदा, बहिन।"

सरस्वती मे इस बात को स्वीकार करने योग्य स्त्री जीवन का अनुभव था ही नही। उसने कोई बात नही की। फिर भी उसके मुख पर दुख की झलक दिखाई पडी। वह यह जानती थी कि उसके कारण सभी दुखी है, और सब उस दुखी ही दखना चाहते हैं। गगी का सरस्वती के दुख की अपक्षा अपना मन खोलने का अवकाश मिला। बिना कुछ जवाब दिये सुनने वाली सरस्वती को देखकर उसे तसल्ली हुई।

उसने हठपूवक फिर से कहा, मैं कहती हू औरत के जन्म म भगवान ने सुख लिखा ही नही। फूल जसी बच्ची को मानो छुरी स ही काट

डाला।' और इस प्रकार उसने सरस्वती के प्रति अपनी सहानुभूति व्यक्त की।

"उस किनारे पहुँच गये थे क्या ?"

'नही।'

'अरे बहिन ! उस छोटे से नाले मे बाढ कैसे आ गई ? अर—किसी को खौफ-ख्याल भी नही हुआ ?"

"नही।"

'अगर वर्षा हो गई थी तो उसका भी कोई लक्षण दिखाई नही दिया ?"

सरस्वती ने मुह उठाकर देखा। यह क्या ? गगी को ऐसा लगा मानो बचपन की मुस्कान उसके मुख पर अब भी छाई है। 'अरे ! बेचारी बच्ची ही तो है। बाढ आने की बात मज़ेदार लगी होगी। लाशो का वह जाना भूल गई होगी।'

"बारिश के थमन के बाद भी ।"

'अरे बारिश ही नही थी गगव्वा, सूरज चमक रहा था। धूप चढने से पहले वे गाव पहुँच जाना चाहते थे। वहा तो बादल तक नही थे। ज़रा आगे चलते ही सूई-सूई की आवाज सुनाई दी। किसी ने कहा 'यह क्या ? लगता है नाले मे बाढ आ रही है।' सब उसकी बात पर हँस पडे। किसी दूसरे ने मज़ाक किया, *'कही ज्यादा तो नही खा गये ?'* परन्तु इतने मे सूई-सूई की आवाज़ और पास आने लगी। वह नाला सीधा भी नही था। टेढ़ा और तिरछा होने से कुछ दिखाई भी नही देता था। सबकी हँसी रुक गई। सब चुप हो गये। आवाज पास ही आती गई। तब कोई बोला, 'लो बाढ आ ही गई। ऊपर कही बारिश हो गई होगी।' अब क्या था, बच्चे रोने लगे, औरतें चिल्लाने लगी। मर्द कोई उस किनारे, कोई इस किनारे भागने की बात सोचने लगे। किसी की समझ मे कुछ न आया, सब तरफ हलचल मच गई। गगव्वा क्या बताऊ, बाढ आ ही गई।'

सरस्वती एकदम बिलख पडी, ज़बान से बात करना मुश्किल हो गया।

"जाने दो बहिन।" कहते हुए गगी ने सरस्वती की पीठ पर हाथ फेरा। तुरत दोनो ने चकित होकर चारो ओर देखा। आश्रम म अस्पृश्यता नही

थी। साथ ही यह भी अनिवार्य नहीं था कि छुआ ही जाय। सुब्बक्का की दृष्टि में तो गंगी अब भी अस्पृश्य थी। इसी कारण उसने तुरन्त चारों ओर देखा, वहीं आसपास ही सुब्बक्का तो नहीं। सरस्वती का शरीर भी गंगी के स्पर्श से ऐंठ सा गया। क्योंकि अस्पृश्य गंगी का उसके लिए यह पहला स्पर्श था। पर सरस्वती की यह स्थिति एक मिनट से ज्यादा न रही। "जाने दो बहिन " इस बात में और पीठ पर फिरने वाले हाथ में जो सहानुभूति व्यक्त हो रही थी उसने हृदय में बसी अस्पृश्यता को ताड़कर फेंक दिया। रोती हुई सरस्वती का मन जरा हल्का हुआ, रोने में जरा तसल्ली हुई। तब सरस्वती को ऐसा महसूस हुआ कि गंगी के स्पर्श से ही उसे जरा शांति मिली।

गंगी ने लंबी-सी साँस ली, और बोली, "लोग कहते हैं बदकिस्मती में छाया भी साथ छोड़ देती है। यह बात झूठ नहीं। वक्त खराब हो तो बुरे समय में वर्षा न होने पर बाढ़ आती है।

कुछ ही दिनों में उनका परस्पर मेलजोल मन खोल कर एक दूसरे से बात करने के योग्य हो गया। गंगी जब कपड़े धोने जाती तब सरस्वती भी उसके पीछे पीछे जाती। गंगी का काम खत्म होने तक दोनों खूब बतियाती। कपड़े सुखाने के समय उन्हें रहस्य की बातें करने का मौका मिलता। दोनों तरह तरह की बातें करतीं और कभी-कभी उनकी बातें तो जारी रहतीं पर यह पता ही न लगता कि वे एक दूसरे की समझ में भी आ रही हैं या नहीं। गंगी कई बार बातों में अपना बड़प्पन प्रदर्शित करती। एक दिन एकदम कपड़े धोना रोककर और यह सोचकर कि घर में कोई बड़ी बात हुई है, उसने मुस्करा कर सरस्वती की ओर देखा और बोली तुम्हारा समय नहीं कटता, सरस्वती बहिन?

सरस्वती को इस बात की कल्पना तक न थी कि गंगी की बात में कोई पेंच हो सकता है। 'समय नहीं कटता' के माने? अपने लोग पहले ही की तरह तो साथ हैं। आश्रम का खुला मैदान और खुली हवा है। माँ अब दूसरों के घर काम करने नहीं जाती। अब घर में झगड़ा करने को भी कोई नहीं। आश्रम में कुछ न-कुछ लगा ही रहता है। इसके अलावा भइया के पत्रों को अकेली बैठकर पढ़ने का अवकाश है। यह सब रहते समय न कटने के माने?

"अरे ! छोडो भी, जैसे मैं जानती ही नही। मुझसे मत छिपाओ।"

'इसमे छिपाने की क्या बात है गगव्वा ?"

'पहले छिपाने स ही बाद म घोटाला हो जाता है।" कहकर गगी ने एकदम बात को बहुत आगे पहुँचा कर अपना तत्त्वज्ञान दिखाया।

'घाटाला, छिपाना ? यानी ? मरे वार म उसे कोई सदेह है क्या ? म क्या छिपाकर रखती हूँ ? मरा पत्र पढना उसने कही छिपकर देखा हागा ? यह सोचकर सरस्वती को शम-सी महसूस हुई। जहा डरना चाहिए था वहाँ शम ही आई।

गगी विजेता की भाति बोली, "देखा, कुछ भी छिपाया नही जा सकता ?'

छिपाने की क्या बात है री ? बेकार म ही बात किये जा रही है।" गगी की वात का सन्दभ समझ म न आने के कारण सरस्वती के स्वर मे क्रोध था।

"गुस्सा दिखाकर बात छिपाना चाहती हो क्या ? बाप रे ! मेरी बात सुनकर पहले शरमा गइ। मुह लाल हो गया। अब क्या यह दिखाना चाहती हो कि गुस्से म लाल हो गई।"

गगी ने दिल खोलकर बात करनी शुरू की। उसन हाथ क कपडा का धोन के पत्थर पर रख दिया। दोना हाथो को कमर से पोछकर उन्ही हाथा से सिर के वाल सँवारते हुए उसन सरस्वती को गौर स दखा। 'एसी लडकी को कही नजर न लग जाय। कसी जवानी उमड पडी है ! भगवान का भी क्या खेल है ! यह कहना झूठ नही कि पुरुष का जन्म सुखी है। ऐसी लडकी के सुख का वठे वैठे भोगना पुरुष के सिवा और किसके नसीब म है।' गगी को एक के वाद एक पुरानी यादें सताने लगी, वह भी दखन वालो को ऐसी ही लगी होगी ? गगी का तब अकड कर चलन की इच्छा क्यो होती थी, यह रहस्य अब समझ म आया। छाती तो खिल फूल के समान होती है। ऐसा फूल किसी के हाथ को मिले तो वह बिना मसला रह जाएगा ? सब पुरुप धोखेबाज है। ऐसी लडकी को सिंहासन पर बिठा कर उसकी पूजा करनी चाहिए।' पर क्या गगी स्त्री की स्थिति से परिचित थी ? वही अवस्था कभी सरस्वती को नही छोडेगी। यह सोचत ही उसकी आखें भीग गइ। कमर म खोसा पल्लू खालकर उसने पसीना पाछने

का बहाना किया।"

उसने लंबी साँस लेकर कहा, "तुम्हें गुस्सा आना वाजिब ही है, और शर्म आना भी वाजिब है। औरत बनकर पैदा होने के बाद यह छूटते नहीं।

सरस्वती बोली नहीं। उसकी समझ में यह न आया कि क्या बात करे। इसके अलावा गंगी की ध्वनि और बातों में उसे डर लगा कि ऐसी कोई गंभीर बात है जिसे वह समझ नहीं पा रही। पर पता नहीं क्या, उसकी आँखों में आँसू भर आए। तब उसे ऐसा लगा कि गंगी उसे ऐसे ही ताकती जाएगी तो वह जरूर रो पड़ेगी।

गंगी देखती खड़ी रही।

सरस्वती को रोना अनिवार्य हो गया। वह सिसक पड़ी।

"क्या रोती हो बहिन, छोड़ो। औरत का जन्म ही ऐसा होता है।" यह कहकर तसल्ली देते हुए उसे अपने सुख-दुख याद आ गए। 'मर्द की चाह औरत का कर्म है। पूर्व जन्म का पाप है। पाप के अलावा और क्या है। उसी ने कौन-सा सुख देखा है? यह लड़की यह रहस्य नहीं जानती' यह सोच कर गंगी को हँसी आ गई।

'तुम जैसी जवान लड़की का सुख-दुख समझने वाला यहाँ कौन है? इसलिए कहा, तुम्हारी समझ में नहीं आएगा। अच्छा बताओ सीनप्पा की चिट्ठी आई क्या?"

सरस्वती घबराई। बात गंगी के मुँह से जितनी अचानक निकली थी उतनी ही अर्थपूर्ण भी थी। पता नहीं इसे क्या-क्या मालूम हो गया है और इसने क्या का क्या समझ रखा है!' यह सोचकर सरस्वती घबराई।

'तुम घबराओ मत। इस बार सीनप्पा आया तो मैं सब प्रबंध कर दूँगी।'

'नहीं-नहीं। पता नहीं तुमने क्या समझ रखा है, वे ऐसे नहीं।'

"अरे जाने दो, मेरी पागल बहिन! सब ऐसे ही होते हैं। मर्द मर्द ही होते हैं। क्या मैं इस जात को जानती नहीं।

गंगी की ध्वनि में बड़प्पन की अपेक्षा तिरस्कार अधिक था। "मर्दों की जात को मैं अच्छी तरह पहचानती हूँ।' यह कहने में गंगी का अभिप्राय

शुरू मे यही था कि मर्दों की जात स्वार्थी होती है। इस बारे मे उसका आरोप यही था कि भगवान ने ही इसमे अन्याय किया है। पुरुष का सारा व्यवहार ही ऐसा होता है कि मानो ससार का सुख केवल उसी के लिए है। गगी का यह तर्क था कि स्त्री को मा बनने के लिए भगवान ने जन्म दिया है। यही भगवान के घर का सबसे बडा अन्याय है। चाहे साहूकार गुडण्णा हो, चाहे रामी। वे अपनी इच्छा की पूर्ति के लिए ही इसे चाहते थे। पुरुष की एक बार तसल्ली हो गयी तो बस मेले मे आये व्यापारी के समान अपना डेरा सँभाल कर चल पडता है। क्या इस जाति को वह नही जानती? इस पुरुष जाति के प्रति अनादर भाव रखने वाली गगी को सीनू पर भी विश्वास नही था—और सहानुभूति भी न थी। अपने पिता रामाचारी के कोप भाजन बनने के कारण वह छुट्टिया बिताने के लिए मोहन आश्रम की शरण लेता था। जब भी वह आश्रम आता तब गगी ऐसा व्यवहार करती मानो सरस्वती की सुरक्षा का भार उसी के कधो पर हो। उन्ही दिनो युद्ध शुरू हो गया था। उसकी चर्चा वह बराबर सुन रही थी। कई बार वह उस चर्चा करने वालो की मूर्खता पर मन-ही मन हसती। पुरुष जाति हर जगह एक ही जैसी होती है। घर मे हो तो स्त्री चाहिए, बाहर हो तो युद्ध। यह भइया सीनू इतने जोश से बात करता है, पर उसी के बीच-बीच सरस्वती को ऐसे देखता है जैसे भूखा साँप मेढक को। अत मे इस सिद्धात को मान लेने पर भी कि साप मेढक को निगल ही जाएगा। मेढक को तालाब की ओर भगाने के लिए 'हुश' करने का हठ भी उसमे था। गगी को हँसी क्यो न आए?

युद्ध शुरू हो गया। जमाना बदल गया। कहने वाला मद जब से दुनिया बनी तब से अब तक एक ही जसा है। जवानो को देखकर ऐसा लगता [illegible] कि जमाना बदला नही है। फिर भी गगी के मन मे एक बात उठी। [illegible] भी एक बार लडाई हुई थी न? तब वह (मुह से [illegible] ले सकनी) लाम पर गया था। तब यह इसी उमर [illegible] क्या जमाना बदल गया? गगी काँप उठी? [illegible] जवानो की दृष्टि मे अधेड है। पर [illegible] तैयार नही। नही वह बदली नही। [illegible] साथ रहने से ऐसी हो गई है। [illegible]

कहलाएगी। थू ! आग लग इह।' यह कर गगी एक निश्चय पर पहुँच गई।

गगी के इस निश्चय का कारण दश की राजनीति भी थी। यह कोई कहता तो गगी उस पागल ही मानती। यह नहीं कि उस बात का कोई अथ न था। पर वह अथ बना पाने म समथ न थी। परतु उसकी दृष्टि म महत्त्व की चीज सरस्वती थी। सरस्वती को देखने पर ही उस तसल्ली होती थी। कम स कम उसन तो काफी सुख दखा है। इस लडकी की भांति एसा सुख न दख पाने वाली ठूठ तो नहीं। इसक अतिरिक्त उसक सारे अनुभवो का सुनन क लिए सरस्वती सदा तैयार रहती थी। उन अनुभवो के कथन के समय गगी अपन तारुण्य का पुन अनुभव करती। 'मैंने सब देखा है बहिन, स्त्री क जीवन म कोई सुख नहीं है।' इस प्रकार वह अपने अनुभवो को सरस्वती के सामन एक उपदश के रूप मे व्यक्त करती। वह कहती, 'औरत की चार दिन की जिंदगी है जो केले के पेड क समान होती है। अगर औरत खराब हो गई तो उसकी जिंदगी खत्म समझो, औरत की जिंदगी भी कोई जिंदगी होती है!'' पता नहीं य बातें सरस्वती की समझ म आती भी थी या नहीं। इस प्रकार की बातो क बीच जब गगी पूछती, है कि नहीं बहिन ?' तब सरस्वती चौंक कर पूछती 'क्या कहा गगवा ? तब गगी ''जवान लडकी का जीवन खाली खाली दिखाई देता है। कहकर दया से वह अपनी बात का सिलसिला ही बदल देती है। खर, यदि सरस्वती सामने रहती तो गगी का वाक प्रवाह रुकता ही न था। कभी कभी जब एसा लगता कि सरस्वती अपनी ही किसी धुन म मग्न है तो गगी अपनी बात रोक कर सरस्वती का कधा थपथपा कर मजाक से जगाने का नाटक करती। एस मौका पर गगी स्वय चौंक पडती। सरस्वती के कधे क स्पश स उसके मन म कई विचार उठते। वह दिग्भ्रात हो उठती अब तक मेरे स्पश स जो शरीर ऐंठ जाता था, अब कोमल हो उठा है। देखने मे गोल मटोल, हट्टी कट्टी दिखती है पर छूने पर मक्खन जसी है न ? इस कुछ चाहिए ? गगी अपने अनुभव के आधार पर मन ही मन कहती, पता नहीं भगवान की क्या लीला है ! कहकर लबी सास लेकर सरस्वती से प्यार से बात करती। जो भी हो। सरस्वती की वजह स गगी के जीवन म एक सात्वना सी थी।

ऐसे म ही एक दिन अचानक सीनू और सरस्वती का विवाह होना था। गाँव के लोगा न नाक भौंह सिकोडी। वह पिता ? वह उस ओर फटका तक नही। सुब्बक्का उस दिन आश्रम छोडकर चली गई थी। तब गगी ने 'सरस्वती के साथ मेरा दुख सुख बाँट लेना इन कमबख्तो मे रखा नही गया। इन लोगा को एसी शादी क्या करनी चाहिए थी ? कहकर अपना दुख कई रूपो म व्यक्त करने का प्रयास किया। 'बामना और बनिया के घरो की लडकियाँ भी मद मर जान के बाद दूसरा ब्याह करने लग गई तो हम मे और उनमे क्या फक रह गया ? शामण्णा को मैंन भला आदमी समझा था। पर उसी ने अगुआ बनकर यह ब्याह कराया। अब दुनिया म बडप्पन कहाँ बचा ? कहकर उसन अपने को तसल्ली दी। अब जमाना बदल गया है, यह कहना गलत नही।' कहते हुए उसने अपना अगला निश्चय भी कर लिया।

जब सब यह कहते थे कि जमाना बदल रहा है तब शाता म जमाने को बदल डालन की हठ पैदा हुई। सरस्वती के विधवा होकर आने के बाद से ही शाता का मन अस्थिर हो गया। शुरू शुरू म उसे इसका अथ स्पष्ट न था। कई बार वह गुस्से म आकर सुब्बक्का म बहस करती। शायद सुब्बक्का को भी उसका अथ समझ म न आता होगा। अब याद करन पर शाता का हसी आती। समझ मे क्या नही आता ? समझ मे आ गया था। उसके चिढाने का सुब्बक्का न कुछ और ही अर्थ लिया था। एक दिन कैसी मजेदार बात हुई। उसन कहा 'क्या नही होना चाहिए ? तब सुब्बक्का न जो पूछा उसका प्रसग ही कुछ और था वह कुछ और ही सोच रही थी। बेचारी सुब्बक्का एकदम उनसे कहने को तैयार हो गई थी। खर सरस्वती की समस्या के मुकाबले मे उसकी समस्या कौन बडी थी ? उसन सावजनिक काम म लगकर उनके सामीप्य का आनन्द तो लिया। उस लडकी म कौन सी आशा जगाई जा सकती है ? पर उसके लिए कितनी यातना सहनी पडी ? उसने सोचा, सरस्वती के लिए यह रास्ता नही है। इसके अतिरिक्त यह सरस्वती के मन को समझ गई थी और शामण्णा को लिखे सीनू के पत्रा को भी पढ चुकी थी। अत मे उसने एक दिन निश्चय करके शामण्णा से पूछा, "पुनर्विवाह से आप सहमत है क्या ?" यह प्रश्न

तब वे बोले, "तो बेट के भरोस ही चलना पडेगा ?"

शाता की तब समझ मे आया कि इसके पक्ष मे होकर भी अब तक शामण्णा ने इस बारे मे बात क्या नही उठाई थी।

'मुझे उसकी चिता नही पर आपके घराने के गौरव की दष्टि से दखें तो ।'

'घरान का गौरव !—इस बात पर उसका शरीर काप उठा था। कौन-सा गौरव ? कैमा गौरव ? इसकी सगी बुआ, भाभी और स्वय इसका इस बच्ची का विधवा होकर सडना इस घर का गौरव है ?

शामण्णा ने बात आगे बढाते हुए कहा, 'पता नही सुब्बक्का क्या कहे ?'

'सुब्बक्का की बात मुझ पर छोड दीजिए।"

इसके इतने धय से यह बात कहन पर शायद, उन्ह आश्चय हुआ होगा। 'उन्होने' जरा घबराकर उसकी ओर देखा तब उसे हँसी नही आई। सुब्बक्का किसकी किसके साथ शादी करना चाहती थी— इन्ह' क्या पता। यह मन म सोचकर वह हँसी।"

उ होने उसे छेडत हुए कहा था, 'तो तुम मुझे पागल समझती हो। औरत को समझ पाना सभव नही लोगो का यह कहना शायद ठीक ही होगा। खैर, जो भी हो, जमाना बदल गया।'

इसने जरा जोश ही से कहा, "जमाना नही बदला, हमे उसे बदलना पडेगा।"

विवाह करने का निश्चय हो गया। शाता को इससे बडी तसल्ली हुई।

परतु सुब्बक्का को मनाना इतना आसान न था जितना उसने सोचा था पर उतना कठिन भी न था कि मनाया ही न जा सके। यह जानने मे दर न लगी कि सुब्बक्का का मन तो है पर उसमे साहस नही।

सुब्बक्का न कहा था, "अरे ! यह कसी बात ? चुप भी रहो।'

'मुझ पर विश्वास है कि नही ?'

"यह कसी बात पूछ रही हो शाता ?'

'यदि मैं कर लेती तो वह गलत नही था ! यदि वही सरस्वती करे तो ?"

बेचारी सुब्बक्का। उसने हैरान होकर उसकी ओर देखा था। तब उस दृष्टि मे केवल मातत्व ही नही समस्त स्त्रीत्व की अनादि अनत यातनाओ का ताडव उसके मुख पर दीख पडा। परतु एक क्षण को। दूसरे क्षण ही सुब्बक्का बिलख बिलख कर रो पडी।

"आप पढे लिखे लोग हो जो चाहो सो करो।' सुब्बक्का की इस बात मे प्रकृति ने मातत्व को जो समझदारी सिखाई है वह छिपी थी। वह बात शाता की समझ मे आ गई। पता नही क्यो उसके याद आने पर उसे हँसी आती।

"तुम लोग जो चाहो सो करो। मैं आँख खोलकर नही देखूगी।" सुब्बक्का की यह बात सुनकर उसे अनिवार्य रूप से हँसी आई थी। 'आँख खोलकर नही देखूगी' इस स्वर मे असहमति की धमकी न थी अपितु समाधान का निर्णय था।

कई कारणो से शामण्णा को भी तसल्ली थी। उसे यह भी महसूस हुआ कि सरस्वती का पुनर्विवाह कराने से शाता के जीवन म एक स्थिरता आ गई है। इसके अतिरिक्त उसे इस बात की भी तसल्ली हुई कि राय साहब की सौंपी हुई धरोहर को उसने बढाया। सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह रही कि अब उसका रास्ता सुगम हो गया। द्वितीय महायुद्ध आरभ हो जाने से वह महात्मा जी के आदेश की प्रतीक्षा मे था। महात्माजी ने वयक्तिक सत्याग्रह की स्वीकृति दी थी। अब वह भी बाहर नही रह सकता था। परतु सुब्बक्का के परिवार को इस स्थिति म छोड भी नही सकता था। अब सरस्वती का विवाह हो जाने से वह समझने लगा कि वह ऋण मुक्त हो गया। पर सीनू और रागण्णा ने एक समस्या खडी कर दी। जवानी का जोश है। क्या वह स्वय भी वैसा ही नही था ? अब यदि वे दोनो सत्याग्रह के लिए उत्सुक हो तो इसम आश्चर्य क्या है ? पता नही फिर क्या उसे वह ठीक नही जँचा। बढने से पहले पौधे को काट डालना बुद्धिमत्ता नही। अत म उसने सीनू से कहा था, "जेल जाने का जोश हो तो तुम्हे ससार की जेल म डाल दूगा। बिना कवायद किए सैनिक युद्ध मे नही जा सकता, यह भी ऐसा ही है। दोनो ने उसकी बात मान ली थी। विवाह सपन्न हो गया। "मैं कभी नही देखूगी।' कहकर सुब्बक्का वहाँ से चली

है।' बडबडाता कालिया अपना काम करता रहा। क्या किया जाय? बेटे के अलावा उसके पेट भरने का कोई और सहारा न था। कालिया अब पहले जैसा न था। युद्ध शुरू हुए दो साल हो जाने पर उसे सेना मे जाने का बुलावा नहीं आया। इसलिए वह गुस्से से और ज्यादा पीने लगा। वह यह सोचकर अपने को तसल्ली देता—जो गये हैं उनके खेत रहने के बाद शायद इसकी बारी आ जाय। मित्र राष्ट्रों की सेनाओं के पीछे हटने का समाचार सुनकर वह खुश होता। पीने के बाद वह यह स्वप्न देखता कि यदि वह सेना मे होता तो यह अवस्था कभी न होती। 'बाद मे बुलावा आने दो, हवलदार का पद देने पर ही मैं भरती हूँगा।' यह बडबडाकर वह माना सरकार को धमकी देता। परन्तु उसके लिए बुलावा नहीं आया। उसका पीना और बढ गया।

आजकल भरमा की राशनिंग विभाग मे नौकरी थी। शहर के एक कोने मे स्थित कार्यालय मे वह बडा अधिकारी था। उससे बहुत से लोग मिलने आते। वह दरवाजे बद करके उन लोगो से घटो बातें किया करता। कई बार लडकियाँ भी आतीं। कालिया का उस ओर विशेष ध्यान न था। पर लडकियो के आने पर उनकी बातें सुनने का प्रयास करता लेकिन अवकाश ही न मिलता क्योंकि भरमा उसे बाहर निकाल देता। परन्तु एक दिन वह अपने आप ही बाहर जा रहा था तो बेटे के कमरे से यह आवाज सुनाई दी, 'इस कमरे मे कोई आ रहा लगता है।' कालिया को आश्चर्य हुआ। बेटे के अलावा उस कमरे मे और भी कोई था। बेटे की आवाज सुनकर वह रुक गया। "कौन कमरे मे आ रहा है?" यह डाँटते हुए भरमा बाहर आया। कालिया बिना कुछ कहे बाहर जाने लगा। बेटे ने आवाज दी

'ऐसे चोरी से क्या जा रहे हो?'

बेटे के प्रश्न पर कालिया रुक गया।

'तुम्हीं से पूछ रहा हूँ! अब चोरी करना भी शुरू कर दिया क्या?"

कालिया अब समझा कि बेटा उसी से प्रश्न कर रहा है। वह चकित होकर उसकी ओर देखने लगा।

'ऐसे टुकुर-टुकुर क्या देख रहे हो? कुछ बको मुह से।'

एक मिनट को कालिया की समझ मे कुछ भी न आया। एकदम कई

वर्षों का दबा आक्रोश आधी की तरह फूट पडा। उसका शरीर काप उठा।

पिता के रग ढग देखकर भरमा का स्वर बदल गया। उसने कहा, "मैंने तुमसे कहा था कि मेरे कमरे म कदम मत रखना ?"

तुम्हारे कमरे मे—तुम जसे क कमर मे मैं पाव रखूगा, थू !" यह कहकर वह मुह फेरकर चलने लगा।

भरमा ने दौडकर आडे आकर पिता का रोका। उसका हाथ पकड कर पूछा, "बताते हो कि नही—कदम क्या रखा ?"

'मेरा हाथ छोडो," पिता के अनपेक्षित आवेश के कारण भरमा की पकड ढीली पड गई। क्षण भर को भरमा हक्का बक्का रह गया।

"तुम जसे के कमरे म मैं पाँव नही रखता, मैंने कहा न !"

' क्या कहा—मेरे जस ? तुम क्या कहना चाहते हो ?"

"तुम जसे।" कालिया ने अपने को एकदम रोका, "मुझे रोको मत, छोड दो।" कहकर वह बेटे को धक्का देकर चल पडा।

बाहर निकलते ही कालिया को कुछ नही सूझा। 'मुझसे सवाल जवाब कर रहा है, बेटे ? यह पता नही मैं कौन हूँ।" यह बडबडाता हुआ वह चल पडा। पता नही कितनी दूर तक चलता रहा। एकदम धरती पर ढह-सा पडा। मानो सारी शक्ति ही खत्म हो गई हो। उसने लबी-सी साँस ली, मानो किसी मुसीबत स पार हो गया हो। ' बाप रे ! ऐसा लगता है जान ही निकल जाएगी। कहता हुआ धीरे से उठा। बाद म उसने सोचा, गुस्से म मैं अगर और भी बोलता तो पता नही क्या हो जाता ? यह क्या, क्या कोई मुझे बुला रहा है ? या मुझे देखकर कोई ऐसा कर रहा है ? ऐसा लगा मानो कालिया को किसी ने गोली मार दी है। वह एकदम खडा हो गया। यदि वह बुलावा ही हो ? तो यह विचार आते ही उसका रहा-सहा धैर्य भी जाता रहा। उसने बार-बार अपने स पूछा। बाद म वह भूल जाने के लिए खूब पीकर घर लौटा।

रात होने पर भी भीतर कोई आहट न थी। कालिया को आश्चर्य हुआ। घर के पास पहुँचते पहुँचे उसे डर लगा। मालूम नहीं बेटा क्या करेगा। डर से नशा जरा कम हुआ। पर यह भरोसा होने पर कि वह घर पर नही है उसे जरा हिम्मत बँधी। बत्ती जला कर उसने जरा इधर-

उधर दखा। वेटे के कमरे की ओर भी उसा नजर दौडाई। क्षण भर को घबराहट हुई। भरमा के कमर म ताला नही लगा था। 'यह क्या ? कही भरमा बिना बताए चला ता नही गया ? कहा गया होगा ? आगे क्या होगा ? अब मरा क्या बनेगा ? या कुछ और तो नहीं हुआ ?' सोचकर कालिया दरवाजे क पास आया। बाहर मे कुडी लगी हुई थी। भीतर कोई न था। एक क्षण का वह हरान रह गया। तुरत पता नही क्या विचार उठा। पजा क बल तजी स जाकर उसन बाहर वाला दरवाजा भीतर म बन्द कर लिया। और बटे के कमरे के सामने जा खडा हुआ। उसके मुख पर मुस्कराहट छाई हुई थी।

अब इसक कमरे म ऐसा क्या होता रहा है जरा देख ही डालू कहता हुआ बहादुरी से कदम रखता हुआ दरवाजे के पास आ गया। फिर एक-दम इधर उधर देखकर धीरे से कुडी खोली और बत्ती जलाई। उसने चारा ओर नजर दौडाई।

बाप र ! यह बेटा ऐसा है।' यह कह कर कालिया ने अपने को राका। बाद म उस खूब रोना आया। वह रोता रोता कुर्सी पर बैठ गया। यह राना कैसा था ? कई वर्षों का असहनीय अपमान द्वेष सब धुल गये। अब फिर कालिया का मुह खिल उठा। वहाँ आनद था अभिमान था। बटा सुखी है जा भी हा उसके उठाए कष्टा का अच्छा फल निकला। नम-नम बिस्तर है। पाव पसारकर बठन को कुर्सियाँ हैं। देखा ता सफेद बगुले के पख जस उजल कपडे है। अरे ! यहाँ तो सिगरेट की डिब्बी भी है।' कालिया हर चीज को छूकर एस खुश हुआ जैसे कोई दादा पहली बार अपन पात का छूकर नाच उठता है। 'यह क्या ? उसन भौंह चढाकर देखा जनान कपडे। त्योरियाँ क्षण भर का चढी फिर वह हँस पडा, जवान लडका है। हम सब न भी तो यही कुछ करके दुनिया म पाँव रखा है। शादी क बाद यह सब कुछ होता ही है। यह सोचकर उसके हृदय ने भरमा क अनन अपराधा को क्षमा कर दिया। 'अरे ! इस अलमारी मे क्या है ? कालिया को आश्चय हुआ 'अलमारी ता बोतला से भरी है।' उसन हरेक को सूघकर दखा। अत म एक का खोलकर सूघा और थाडा चखा। अरे थू ! यह तो इलायती शराब है। करले स बनी लगती है।' कहकर उसन बातल वापस रख दी।

कालिया का एकदम डर-सा लगा। वह पास की कुर्सी से टकरा गया। 'यह क्या ? क्या मैं बूढ़ा हो गया? बेटे का मुख देखना चाहता था सो देख लिया। अब क्या धरा है मेरा इस घर मे ? अगर कही इसी समय बेटा आ जाय तो मुझे जान से ही मार डालेगा। मार डालने दो अब मरने म कोई रुकावट नही। अरे ! इस बेटे से डरकर मैं मरूँ ? अभी तो मुझे लाम पर जाना है। मजा करूँगा। यह सोचता हुआ कालिया उठा और फिर से बोतल निकाल कर एक घूट पी। धीरे धीरे शायद उसम स्वाद आने लगा होगा। उसने दुबारा एक घूट पी। हवा के झोके से दरवाजा हिला। कालिया का मुख काफूर हो गया। वह एकदम डर गया। उसने बोतल रख दी। कमरे को ठीक कर दिया ताकि उसके आने का किसी को पता न चले। फिर वह बाहर निकल आया।

कमरे से बाहर आते ही एक और विचार आया। और वह जल्दी-जल्दी फिर से भीतर गया। मेज के दराज खोले। एक दराज का ताला लगा था। जरा आगे देखा तो निचली दराज मे चाबी लटकी थी। धीरे-धीरे से ताला खोलकर दराज खीचा। साँप दिख जाने की भाँति चौंककर पीछे हट गया।

रुपये और नोटो का ढेर लगा था। विचार आया कि क्यो न मुट्ठीभर उठा ले जाए। पर साथ ही यह भी ख्याल आया, 'इतने क्यो दो चार नोट बहुत हैं। उसने दराज बंद कर दिया और कमरे से बाहर निकल आया। जरा इधर उधर देखकर अपने दो चार कपडे लत्ते समेट घर से बाहर निकल गया। कुछ दूर जाने के बाद फिर लौट आया। 'एक बार फिर से भरम्या की सूरत देखकर जाऊँगा। इसके बाद हम लोगो का संबंध खत्म ही है।' यह सोचकर वह घर लौट आया।

पता नही पिता के मन की हूक ने बेटे को छू लिया होगा। अभी भरमा आ गया। उसे आख भरकर देखने के लिए वह उसकी तरफ जा ही रहा था कि बेटे के साथ एक और आदमी दिखाई पडा। कालिया उछलकर दीवार की ओट मे हो गया। भरमा के साथ एक पुलिस अधिकारी था।

यह क्या आया है ? वह इसका दोस्त होगा। खैर, इससे मुझे किस बात का डर 'यह सोचते हुए कालिया को एकदम याद आई कि वह दो

नोट उठा लाया है 'अरे ! जो भी हो, मैं उसका बाप हूँ। मैं क्या करूँ ?

तभी उस अधिकारी ने भरमा से पूछा, "आपको कब संदेह हुआ ?"

भरमा ने उत्तर दिया, "संदेह क्या, आज आपको सबूत ही दिखा दूँगा।"

संदेह ! सबूत क्या हो सकता है ? कहीं भरमा को किसी ने मारने पीटने की धमकी तो नहीं दी ? चीनी नहीं मिलती, गेहूँ नहीं मिलता, इस कारण बहुत से लोग भरमा से चिढ़े हैं। अगर ऐसी कोई बात हुई तो मुझे कुछ दिन यहाँ रहना होगा।' यह सोचकर कालिया वहाँ से आगे बढ़ने को ही था।

'सबूत देंगे तो बात ही खत्म समझिए।" अधिकारी की इस बात से सचेत होकर कालिया जहाँ-का-तहाँ खड़ा रहा।

'आज मैंने जानबूझकर दरवाजा खुला रखा था। टेबल पर दस-दस रुपये के दो नोट रखे थे।"

बेटे की बात सुनते ही कालिया का हाथ तुरत जेब पर गया, 'अरे ! टेबल पर रखने की बात कह रहा है टेबल पर तो नोट थे ही नहीं, तो कोई आकर कमरे में खोजबीन करता रहता है क्या ? उसे पकड़ने के लिए यह जाल फैलाया गया होगा ?

तभी अधिकारी का यह प्रश्न सुनाई दिया "आपके घर में और कौन कौन हैं ?'

'कोई नहीं मैं अकेला और वह ?'

यानी ?' कालिया को पसीना आ गया, 'मुझपर संदेह है ?'

वह आपके घर में कितने दिन से काम कर रहा है ?

भरमा ठहाका लगाकर हँसा काम क्या ? खाक !"

यानी इतने दिन से आप यूँ ही उसे अपने घर में रखे हैं ?

वही मेरी गलती है। हमारे गाँव से आया है। कोई सहारा नहीं, कोई पेट भरने का साधन नहीं। इसलिए चुप था। बहुत से लोगों ने टोका भी था।'

तो यूँ कहिए लोगों को पता था कि वह क्रिमिनल है।'

क्रिमिनल नहीं थोड़ा पगला है।

कालिया का सिर भन्ना गया। सारा प्रसंग उसकी समझ में आ

गया। यह भी समझ मे आ गया कि किसके बारे म बातें हो रही है और कौतूहल से वह जहाँ का-तहाँ खडा रह गया। उटा और अधि दरवाजा खोलने को ही थे। तब वह पीछे से जाकर उनकी बातें लगा।

"थोडा पगला है तो आपने पहले क्या नहीं बताया ?"

"पगला मान ऐसा पगला नही ।"

"यानी ?"

"आन जाने वालो को वह अपना का मरा बाप बताता है।"

अधिकारी के कहकहे मे पूरी बात सुनाई नहीं दी। तब तक व दरवाजा खोल भीतर पहुँच गए थ। पर कालिया को लग रहा था। दरवाजो के भीतर से आने वाली हँसी उसके अन्दर गूँज रही है। अक्ल हँस रही है। उसका तिरस्कार करके हँस रही है।

'सुना बेटा कालिया ? तू उस अपना बेटा बताता है ?'

उसका अपना भरमा ही उस पर सन्देह करता है ? छि । धत्

'छि !' कहकर खडा दबता रहा, 'तेरा बेटा ही तुझे जेल देगा। ह ह ह।'

'जेल ! जेल ?'

कालिया का हृदय जोर से धडकने लगा। वह कहकहाता होगा को बचाने के लिए गलियो म छिपता छिपाता भाग निकला।

उस रात कालिया ने निश्चय कर लिया, 'भले ही रास्ते काम क्यो न मिले पर लाम पर जरूर जाना चाहिए। अब इस वापस नही आना। लेकिन भरम्या का क्या होगा ? उसकी चिंता करेगा ? मेरे सामने तो इतनी उछलकूद करता है। पर वह सा आदमियो के सामने कैसे चलेगा ? जो होना था हो गया। लड़के अगर हो जाती तो ? वह सुअर मेरी याद की लड़की को जाएगा। फिर इसम क्या रखा है ? बहुत से लोग इसे कोशिश कर सकते हैं। इस विरिस्तान लडकी की बात था। जवान लडका को देखते ही निगल जाने वाली जाति को पाल-पोसकर बडा कर दिया, ऐसे लडके को कौन

हर जाति की लड़की 'हाँ' कर सकती है। लेकिन यह ठीक नहा। हमार लिए अपनी जाति ही ठीक है। क्या करूँ ? पता नहीं, इस लड़के का क्या होन वाला है ? एक शादी भर हो जाती ? धत ! मैं क्या सोच-सोचकर मरूँ पागल की तरह। यह बेटा तो बाप ही को जेल भेजना चाहता है। बाप को ? यह सब मैं ही तो सोच रहा हूँ पर वह बेटा तो बाप को बाप ही मानने को तयार नहीं। मैं क्यों चिंता करूँ ? जब पेड़ आँधी और पानी का मुकाबला करके अपने आप बढ़ जाता है तब उस पर कोई कितने दिन तक बाड़ लगा सकता है। यह तो बाढ़ का ही खा जाने वाली जाति है। वाह रे बेटे ! मुझे ही जेल भेजना चाहते थे न ? देख दूँगा एक हाथ। बिना माँ का बेटा समझकर 'कालिया ने अपनी विचारधारा को रोका। यह सब विचार क्या अब ? या मैं एक बार गाँव जाऊँ ? धत ! वहाँ अब है ही कौन ? यदि बापू हो या शामण्णाजी से भेंट हो जाय तो उनसे यह क्या न कहूँ कि मैं लाम पर जा रहा हूँ भरमा का जरा ध्यान रखिएगा, 'यह बात कालिया के मन को भाई। पर लड़का उन्हें जवाब दे दे तो ? तब तो मेरी इज्जत ही मिट्टी में मिल जाएगी। नहीं, ऐसे नहीं। इस बेटे को यहीं अक्ल सिखानी पड़ेगी। उसे ठीक करके ही मुझे लाम पर जाना होगा । उसे मेरा बेटा कहलाने में शरम आती है न ? उसे दिखा देना पड़ेगा कि मैं भी ऐसा-वैसा आदमी नहीं। दिखा ही दूँगा।'

कालिया को होश आया उसकी आँखें खुलीं। अब तक वह शायद अँधेरे में ही चला जा रहा था। प्रकाश से उसकी आँखें चौंधिया गईं।

हा हा हा !

औरतों की ध्वनि ! 'अरे मैं कहाँ पहुँच गया ?' कालिया ने चारों ओर देखा। जहाँ से हँसी आ रही थी उसने उस ओर धीरे से देखा। वहाँ दो औरतें दिखाई पड़ीं। उसके उस ओर देखते ही वे एक दूसरे को कुहनी मारते हुए जोर से हँसने लगीं। कालिया ने वहाँ से पाँव घसीटे। उन ... औरतें बड़े तिरस्कार से हँसी। वह हँ... ... मानो कोई ... में चुभ गया हो। उसने वहाँ से तेजी ...

माली रंडियाँ हँस रही हैं।

कालिया अब समझ गया कि ... , ...

इन औरतों ने यह समझ लिया ... को

आया, 'शायद इन्हें मालूम नहीं कि मैं लाम पर जा रहा हूँ। नहीं तो ये गले पड़ जातीं ! ह ह ' कालिया को तसल्ली हुई। उसे अपने पुराने दिन याद आए। पिछली लड़ाई याद आई 'तब मेरी उठती जवानी थी। बाहर निकलते ही लड़कियाँ ऐसे देखती थीं मानो खा जाएँगी, वह भी कैसी कैसी ! सब जाति की ! क्या मजे के दिन थे। अपने देश लौटने पर काले मुहों से छुटकारा नहीं, अब क्या उस तरफ देखा जाए ? जरा गोरी औरतों को देखेंगे। जैसा कि तब साथी कहा करते थे ।' कालिया ने दोनों ओर देखा, पिनरे में बद मैना जैसी लगती है। थू ! बकवास ! अरे ! फिर मेरी तरफ देखकर हँस रही है। क्या उसने अपने को रंभा समझ लिया है ? बाप रे ! उसकी हँसी तो ऐसी लग रही है जैसे शीशे पर पत्थर रगड़ खा गया हो। हँसी सुनते ही रोंगटे खड़े होते हैं फिर उसने इधर-उधर देखा। सरकस के शेर और चीते के बच्चों को जैसे पकड़कर रखा जाता है उसी तरह उन्हें यहाँ लाकर रखा होगा। ये जवान हैं वाह ! मुझे देखकर मुँह फेर लिया। बाप रे ! हाँ, हाँ, मुँह चिढ़ा रही है। अरे तेरी सूरत एक बार देख ही लूँगा।

कालिया के अभिमान को चुनौती-सी महसूस हुई। उसने तेजी से चलकर चारों ओर देखा। उसे कुछ तसल्ली हुई। उसने लंबी साँस ली। वहाँ है जरा ठहरकर दिखा देता हूँ। उसने मुझे बूढ़ा समझा है। कैसी औरत है ? मेरी तरफ इशारा कर रही है। क्या मैं बूढ़ा हूँ ? पैसे देने वाले के सामने नाचने वाली जाती है। ऊपर से शान दिखा रही है जरा ठहर।'

कालिया पहले दिखी जगह पर पहुँचा। वह तो शराब की दुकान थी। 'बिना पीये उसका मजा नहीं आता।" पिछली लड़ाई में सीखी बात उसे याद आई। वह दुकान में घुसा, जेब टटोलकर ठिठका।

जेब में नोट थे, 'अब क्या होगा ? कोई यहीं आकर घेर ले तो ? धत तेरी की ! इतना डरपोक हो जाने से ही तो वे हँस पड़ी थीं। क्यों हँसती ? कौन पकड़ेगा ? किसी की हिम्मत है जो मुझे पकड़े ? भरमा भले ही मुझे बाप न कहे, पर वह मेरा बेटा है। क्या यह झूठ हो सकता है ? उसकी कमाई पर मेरा हक है। देखता हूँ, कौन मुझे पकड़ता है ?

कालिया ने इसी गुस्से में जाकर दुकानदार के सामने दस रुपये का नोट रख दिया। वह नोट देखकर या कालिया के मुख का आवेश देखकर

उसने जो मागा वह दे दिया। कालिया ने उसे एक कोने में ले जाकर घूट भरने शुरु किए और मन ही मन बोल पडा, 'अब मैं दिखाता हूँ जरा ठहरो।'

'उस चुडल से मेरी क्या ज़िद ? कमबख्त हँस रही थी। औरत की जात जो ठहरी। अपनी इज्जत तो घोलकर पी गई दूसरे की छोडेगी क्या ? खैर अब किस बात की ज़िद ? पर जब यहा तक आ गया तो लौट कर क्यो जाऊँ? कल को अगर लाम पर गया और गोली लग गई तो काम खत्म ही समझो। तो यह सुख जरा भोगकर ही क्यो न जाऊँ यह बात गलत नही । उस जमाने की जवानी अब कहा, मुझे पसद करके अब कोई मुझ पर थोडे गिरेगी ? जेब मे पसे है, जरा ठनकाओ न।'

कालिया उठ खडा हुआ। अब दढता स कदम बढाने लगा। जानवरो की मडी म जानवरो की जाच करने वाले अनुभवी के समान देखता हुआ कदम रखने लगा। शराब ने उसे इच्छा के साथ साथ धय भी प्रदान किया था। हरएक के सामने खडा होकर जरा मुस्कराता हुआ आगे बढा 'देखो, वह मूरख समझ रही है कि मैं उसे देखकर खुश हो रहा हूँ। रग पोता तेरा मुह चूना पुती टूटी मटकी जैसा दिख रहा है। इसी से तो हँस रहा हूँ। तुझे क्या पता कि मैं क्या कर रहा हूँ । अरे वह देखो बाप रे ! बबई आकर यह औरत कितनी तेज हो गई है। कसी तरकीब लडा रखी है। मुह फेरकर शीशे के सामने बठी है। मुझे तो शीशे वाला मुह दिख रहा है। मुह ऊबड-खाबड है तो भी दिखाई नही पडता। मैं भी दिखाई नही पडता। मैं भी समझता हूँ ये सब बातें। मैं कसे बढिया जमाने म लाम पर होकर आया हूँ।'

कालिया अब सिपाही की तरह कदम रखता आगे बढा। अपनी भावनाओ का तीव्र करने मे उसे मजा आया। नाटक देख आया बालक जिस प्रकार पात्रो का अभिनय करता है, उसी तरह वह बात किए जा रहा था किसे समझ म आएगा ? ह ह ह !'

'हाँ यह अच्छा है । कालिया रुका उसके सामने कोठरी की सलाखो के पीछे दो औरतें सडक की तरफ देखती हुई बठी थी। उनमे एक की उम्र सोलह या अठारह होगी। अभी वह मुग्धा ही थी। उसे अब भी अपनी अवस्था ही मालूम न थी। वह खडी मुस्करा रही थी। उसने

रग वग भी नही लगा रखा था। जवानी का सौदय उसके अग-अग मे भरा हुआ था, रग की आवश्यकता ही नही। शायद वह यह बात तो समझ नही रही थी। उसी कोठरी म एक और औरत भी थी। उसका मुह इस तरफ न था। जरूरत भी न थी। उसका गदराया हुआ बदन ही यह घोषणा कर रहा था कि वह सर्वांग सुदरी है। कालिया रुका, बाद म कोठरी की तरफ गया। उसका हाथ जेब म गया। बाद म दृढ कदम रखता कोठरी की ओर गया। उस आर देखते ही लडकी की मुस्कराहट उस एक फन्दे की तरह अपनी तरफ खीच रही थी ? अब कालिया उस खिडकी के जगले के पास पहुँच गया। हाठो पर जबान फेरकर मुस्कराता हुआ छेडने वाले बच्चे क समान उसकी आर देखन लगा।

भूख लगी है। खाना खिलाए कितने दिन हो गए।" यह कहकर वह हँस पडा। उस लडकी न त्योरी चढाकर उसकी ओर देखा। तब वह बोला, "मैं पूछता हूँ खाना खिलाए कितने दिन हा गए ?'

अगर पसद हो तो भीतर आकर कीमत की बात कर लो।"

हाँ।' कहकर कालिया जरा पीछे हट गया। अब तक उसे इस बात का सतोष था कि उसकी छेडखानी को कोई समझ नही पा रहा। पर जब एक न उसकी भाषा मे उत्तर दिया तो वह चौक उठा।

"अरे ! देखने म तो मद-सा दिखाई देता है। पर बात करते ही पीछे हट गया।'

कालिया जरा हिम्मत स आगे आया। जेब पर हाथ रखा। जगले की सलाखें दाना हाथा से थामकर मुँह आगे किया।

वह लडकी बोली, 'हाय राम ! मुह ही दिखाकर चले जाना चाहते हो क्या ? कुछ और चाहिए तो रास्ता बगल म ही है। उधर से होकर दरवाजे क पास आओ।

बिना कुछ कहे कालिया न बगल की ओर देखा, छोटा गलियारा था उसन जरा डरते-डरते ही आगे कदम रखे। अँधेरा है जरा धीरे से जाना चाहिए। यहाँ आया ही क्या ? कही गिरगिराकर कमर ही टूट जाय तो ? यह सोचकर कालिया को हँसी आ गई। बाइ आर दरवाजा था। जरा धकेलते ही खुल गया। वह भीतर गया। धुधला-सा प्रकाश था। एक ही लाइन म कई दरवाजे थ। उसन एक क्षण खडे होकर देखा। यह अन्दाज

लगाया कि उसने बाहर से जो कोठरी देखी थी वह कौन सी होगी। दरवाजा खटखटाया, दरवाजा खुल गया। उसके भीतर जाते ही दरवाज़ा अपने आप बंद हो गया। उसने कमरे के भीतर देखा। रोशनी और भी धीमी थी। कुछ ठीक से दिखाई नहीं दे रहा था। तब यह सोचकर कि पिछला कमरा होगा वह रुक गया। तभी किसी से टकराया।

"धत तेरी की, पैसा देता हूं। बत्ती क्यों नहीं जलाती ? कुछ दीखता ही नहीं।"

"खाना खाने वाले हाथ को मुंह तक जाने के लिए रोशनी चाहिए क्या ?'

आ ?

कालिया को अचरज हुआ। यह आवाज़ तो दूसरी है। बाहर से उसने जिससे बात की थी वह नहीं। 'अरे, पैसा देता हूँ। जो माल मुझे चाहिए, वह लूंगा।

तब उसने पूछा, 'तुम कौन हो ?

"क्यों ?

'वह लड़की कहां गई ?

'हम दोनों एक ही हैं।'

एक हो माने ? तब उसके स्वर में पैसे वाले का दर्प था।

"एक का मतलब एक ही। तुम्हें जो चाहिए, वह मिल जाय तो काफी है न ?"

"यह कैसे ?'

'पैसे के मुताबिक माल मिलता है। मांगने वाले को दुकान का हर सामान उठाकर दे दिया जाता है क्या ?'

'यानी ?'

अब जो पैसे लाये हो उनसे अब तुम मेरे साथ चलो। दूसरी बार पचास रुपये लाना।"

हां पचास रुपये ?"

हां पचास रुपये। दो बीस, एक दस। किस गांव से आये हो ?'

'जाने दो। अरे, तुम अपना मुंह दिखाओगी या नहीं ?"

'अरे ! ऐसा लगता है तुम सिर्फ मुंह ही देखने आये हो। बेकार में देर

मत करो वरना । चले जाओ।"

"अरे ! इधर देख, मैं तो इसी इरादे से आया हूँ। थोडी देर बाद तुम्ह भी पता चल जाएगा। मैं यू ही नही। दख मुझे भी बहुत दिन हो गये। जरा मुह दिखा इधर देख चाहे एक रुपया ज्यादा ले लेना ?"

'तो दो।"

कालिया का उत्साह कम हो गया। उसने लबी सास ली।

"अरे ! तुम तो ऐसे कर रही हो जसे मेरी बात पे इसबास ही न हो। मैं तो मजा करने आया हूँ। लो।'

उसने रुपया झपट लिया और कोने म जाकर वहा रखे बतन मे छिपाकर लौटी।

"जरा दिया जलाओगी ?"

"जरा दियासलाई हो तो देना।'

कालिया ने दियासलाई दी और उसके पीछे पीछे चल दिया। दूसर कोने मे एक ढिबरी धरी थी। दियासलाई रगडकर उसन ढिबरी जलाई। कालिया न ढिबरी हाथ म लेकर उसका मुँह देखा। एक मिनट को एक दूसर का मुह दिखाई दिया।

कालिया चिल्ला पडा, "अरे तुम !"

गगी के मुह से निकल पडा, "हाय राम।'

कालिया के हाथ स ढिबरी छुट गई। एक मिनट म कालिया ने निश्चय कर लिया। वह तुरत दरवाजे की ओर भागा। दरवाजा खुला नही एसा लगता था। दरवाजा किसी न बाहर से बद कर दिया था।

अत म पहले गगी के मुह स आवाज निकली। कालिया दरवाजे के पास ज्यो का त्यू खडा। सारा नशा एकदम उतर गया था। उसके प्रतिक्रियास्वरूप पाँव की शक्ति भी चली गई थी। वह खेत म खडे नकली गुडडे सरीखा खडा था। गगी न तसल्ली से ढिबरी सँभाली और जलाई। उसके प्रकाश मे कालिया को देखा ! कालिया न फिर स दरवाजा खोलने का प्रयास किया पर दरवाजा न खुला। गगी हँसी पडी। वह बोली वह धधे का रास्ता है। काम निबटने तक बद रहता है। बाद म अपने आप खुल जाता है। कालिया गरज पडा, "चुपचाप दरवाजा खोलेगी या नहीं ?'

"नही तो क्या करोगे ?"

"थू। रंडी कहीं की।"

"खैर, जो हूँ, सो हूँ। ढूढ़ते आ ही गये न?" अब आ ही गये हो तो बता दो। भरम्या कहाँ है?"

"भरमा? भरमा का नाम अपनी गंदी जबान पर "

"गंदी हो या साफ। भरम्या को जन्म देने वाली मैं हूँ। अगर वह मुझे पालता तो मैं क्यों यह ?"

"मैं कहता हूँ दरवाजा खोल।"

"यह बताओ कि भरम्या कहाँ है? नहीं तो मुझे साथ ले चलो।"

"भरमा से तुम्हारा कोई संबंध नहीं। दरवाजा खोलती है या नहीं?"

'संबंध नहीं? अरे पागल! वह मेरा बेटा है।"

"वह तुम्हारा बेटा नहीं।"

"तो क्या तुमने उसे अपना बेटा समझा है?

"क्या कहा? कालिया के हाथ पाँव काप रहे थे। "क्या कहा?"

"अपने को भरम्या का बाप समझकर शेखी मार रहा है।'

"एँ। एँ?'

'अरे चिल्लाते क्यों हो? मुझे छोडो। दरवाजा खुलने का वक्त हो गया, छोडो। भरम्या गुडण्णा का ।'

गंगी आगे बोली नहीं। कालिया ने उसको बोलने ही नहीं दिया। दरवाजा खुलने का समय सुनते ही आगे बढकर गंगी की गरदन दबाकर उसकी आवाज रोक दी थी। तभी दरवाजा खुला। कालिया तुरंत भाग लिया। तब उसे कोई होश न था। लोग पीछे-पीछे 'पकडो, पकडो।" चीख रहे थे। पर उसके होश हवास ही नहीं थे। वह बदहवास भागा जा रहा था। 'खून। खून!' की आवाज भी उसके कान में न पडी।

कालिया के कानों में सिर्फ यही शब्द गूंज रहे थे, 'तुमने उसे अपना बेटा समझा है क्या? । अपने भरम्या का बाप समझकर शेखी मार रहा है भरम्या गुडण्णा का ।" पर कालिया ने गंगी को आगे बोलने ही नहीं दिया था, उसका गला दबा दिया था। लेकिन उससे क्या हुआ? अब बंबई की गलियों में भागते जाने पर भी वही शब्द उसके कानों में प्रति-

ध्वनित हो रहे थे । उसने खडे होकर सिर झटका । पर वे शब्द घटने के बजाय और जोर से गूजने लगे । वह गूज नही उसके अपने दिल की धडकन ही थी। गगी के शब्दो से डरा हुआ उसका दिल मानो उछल रहा था । अब कालिया को डर नही था । भरमा के डर की अपेक्षा गगी के डर ने उसमे हिम्मत भर दी थी । गगी का डर आधी बनकर भरमा के डर के बादलो को उडा ले गया । कालिया फिर भागने लगा । कौन जाने ? वह चुडैल किसी न किसी तरह भरमा का पता लगा ले । ऐसा कभी होने नही देना चाहिए । कालिया हाफता हुआ एक जगह खडा हो गया रात को भी उसके माथे से पसीना बह रहा था उसके मुह से निकला, अरे हरामजादी !' तुरत उसे विचार आया, उसने मुझे डराने के लिए ऐसा कहा होगा । हाँ और क्या ? भरमा गुडण्णा का बेटा कैसे हो सकता है ? मुझे याद नही । तब मैं लडाई म लौटा ही था । उस दिन हाँ उस दिन गगी के पास गया था । जोर से एक थप्पड लगाया था । हरामजादी ! धरती पर लुढक गई थी । खून की धार बहने लगी थी । हरामजादी कही की ! बात वही खत्म हो गई थी । पाप का खून बह गया था । मुझे मालूम नही ।' अब कालिया के मुह पर मुस्कराहट आ गई । 'तुम्ह तभी मार डालता अगर मुझे शक होता तो तो क्या तुमने उसे अपना बेटा समझा ? ऐसा लगा कि गगी का यह वाक्य आकार धारण करके उसके सामने आ खडा हो गया । कालिया फिर डर गया । अपने को भरम्या का बाप समझकर शेखी मार रहा है । 'अरे अरे ! शेखी कौन मार रहा है अगर यह याद करे कि भरमा ने उसके साथ कैसा व्यवहार किया तो इसमे शेखी मारने की क्या बात है ? सच होने दो, इसमे थोडा भी सच होने दो । पहले भरमा को ठिकाने लगाकर बाद मे उस रडी की खबर लूगा ।' कहता हुआ कालिया घर की ओर चल पडा ।

इसके बाद कालिया ने गगी को नही देखा । देखने की इच्छा करता तो भी उसमे सफलता न मिलती । पर वह सब कालिया को मालूम होना सभव भी न था । वेश्याओ के मोहल्ले म खून, यह खबर [illegible] अखबारो के किसी कोने म छपी थी । पर उसकी निगाह [illegible] पडा । कालिया भरमा का भी खून नही कर सका । रात की [illegible] बाहर न रही । वह एक-दो दिन घर के आस-पास [illegible]

घर पर पहुँचा तो वहा कोई और रहने लगा था।

उसने सोचा किसी का भी बेटा होने से क्या होता है जब तक पता न चले।'

उसने निश्चय किया, अब हिटलर के साथ ही लडाई करनी है। बाद मे वह जगह-जगह पर खडा दिखाई देता। पुलिस ने पूछताछ की, 'तुम कौन हो?" तब उसने कहा, "मेरा बेटा आफिसर है।" तब पुलिस के यह पूछने पर कि तुम्हारा बेटा कौन है? हसकर उसने कहा, 'पगले कहीं के! मेरा बेटा कहा? वह तो गुडण्णा का बेटा है!"

पुलिस ने "आओ गुडण्णा से मिलाता हूँ।" कहकर उसे ठीक जगह पर पहुँचा दिया। कालिया आमरण यही बडबडाता रहा, "गुडण्णा, भरमा मेरा बेटा नही।"

# 15

भरमा खुशी-खुशी आराम-कुर्सी पर हाथ पैर फलाये पडा स्मृति जगत म खोया हुआ था। उसके मुख पर ऐसी मुस्कराहट खेल रही थी जसी कि शरारती बच्चे के मुख पर शरारत करने के बाद आ जाती है।

तुम्हारा नाम क्या है?

जी?

तुम्हारा नाम?

भरमा।

तुम्हारे पिता का नाम?

कालप्पा।

तुम्हारी क्या जाति है?

हरिजन।

लेकिन यहाँ तो बी० राम० लिखा है?

जी हाँ।

'मैं जाति म विश्वास नहीं रखता। उसका लाभ मुझे नही चाहिए।

हमारे लिए आज देश मुख्य है। इसलिए मैंने अपना नाम बी० राम रखा है। चाहें तो आप मुझे भारत राम कह सकते हैं।"

"ओह हाँ! भारत और रामायण दोनों मिलाकर एक आधुनिक नाम रखा गया है। यही बात है न? अच्छी बात है। धन्यवाद।'

धन्यवाद। वह मन ही मन मूरख कहीं के।' कहकर उठ आया था।

यह पन्द्रह दिन पहले की बात थी। भरमा यानी बी० राम आज उसे याद कर रहा था। उस दिन के इण्टरव्यू के फलस्वरूप आज उसे सेक्रेटेरियट में एक ऊँचा पद मिल गया एक दो दिन में वह उस पद पर जाने वाला था। अब अकेला बैठा उस दिन के इण्टरव्यू की बात याद कर रहा था।

साथ ही और भी कई बातों की याद आने लगी। पिता का नाम कालप्पा बताते समय उसे ऐसा महसूस हुआ था मानो किसी ने उसे चिकोटी काटी हो। पता नहीं वह नासमझ आदमी कहाँ चला गया? कौन जाने? जब मैं इण्टरव्यू देकर बाहर आया तब वह कहीं शराब पीकर पुलिस के हाथ पड़ गया होता तो? अगर वह कहीं मेरा पता बता देता तो? मैंने जो यह जगह बदल ली यह अच्छा ही हुआ। जगह बदलने से क्या हुआ? मैं भरमा का बाप हूँ कहकर पता खोजकर आ जाने वाला आदमी है वह। यह नाम भी बदल लेने से फायदा ही हुआ। इससे मेरा नाम खराब नहीं होगा। यह सोचकर उसने लम्बी साँस ली। फिर भी उसे इस बात का डर ही था कि कहीं वह आ न जाय।

दो, तीन, सात, यहाँ तक कि दस दिन हो गए कालिया का नाम निशान न था। अब भरमा को कुछ अजीब सा लगने लगा। अब भरमा को उसके आने का डर नहीं था। कहीं पीकर नशे में कुछ करके मेरा भी सत्यानाश न कर बैठे। पर ज्यों ज्यों दिन बीतने लगे, उसके मन में दूसरे ही विचार उठने लगे 'शायद पीकर नशे में कहीं गिर गया हो कुछ हो गया हो! थू! ऐसे जंगली आदमी मैंने कहीं नहीं देखे। उसे पिता पर एक प्रकार का गुस्सा भी आया। उस गुस्से के पीछे एक और भी कारण था। उसके साथ पास हुए एक दो मित्र छुट्टी बिताने बम्बई से जा चुके थे। भरमा ने कहा था 'इस नई नौकरी पर जाने से पहले एक बार सब मिलकर मजा करेंगे।" तब उन्होंने कहा था, 'नहीं-नहीं, नौकरी ज्वाइन करने से पहले हम अपने

'पेरेण्टस' से मिलकर आएँगे। बहुत दिन हो गए। वी हैव नाट गोन होम। "पैरेण्टस, होम" य शब्द सुनकर भरमा को उन पर बहुत खीझ हुई थी। बाद मे जाने-आजाने उनसे ईर्ष्या होने लगी। पता नही, वहाँ जाकर क्या मरते हैं ? यहा के मजे छोडकर ? वह यह कहना चाहता था। पर कह नही सका। वह कहा जाय ? किसके साथ ? घर पैरण्टस, माँ-बाप, इन सब का मतलब क्या है ? मित्रा मे से एक ने कहा था 'डू यू ना, हाऊ ग्लड माई ओल्डमन विल फील ?" उसने बाप को 'ओल्डमैन' कहा था। उसम कितना प्यार था। उसके बाप को बेटे को नौकरी मिलने की इतनी खुशी हुई होगी ? ओह ! इसमे क्या रखा है। मेरे पिता को भी बहुत खुशी है। धत ! पता नही वह पीकर कहा धुत पडा होगा ? यह सोचते ही भरमा को बाप पर बडा गुस्सा आया। कसा भाग्यहीन है वह ? उसे एसे मौके पर घर नही आ जाना चाहिए। शायद अकस्मात आ भी सकता है। यह सोचकर भरमा उसकी प्रतीक्षा करने लगा। पर कालिया न आया।

भरमा खीझ सा गया। पहले दो चार दिन बडी नौकरी मिलन की खुशी हुई पर बाद मे वही गले म अटकने-सी लगी। अकेले अकेले मिठाई खाने से उल्टी आने की सी दशा हो गई। 'बाप आए या न आए, अगर वह बदकिस्मत है तो मैं क्या रोऊँ ? मैं तो मौज करूँगा। मेरे भी अपन हैं। मेरी इस उन्नति पर उसे भी आनन्द हागा। पिता का पता न चला यह एक तरह से अच्छा ही हुआ। नही तो उस किरिस्तान लडकी क साथ रिश्ता कैसे हो सकता है ? कहकर रुकावट डाल सकता था। हाँ यह अच्छा मौका है। अब मुझे हिम्मत करनी चाहिए। उससे शादी कर लनी चाहिए अगर मैं जाकर उसे यह बताऊँ तो वह नाच उठेगी। यह शादी तो कभी की हो जाती पर वह स्वय ही तयार न थी। इसका कारण भी बापही था। तब कालिया ने कहा था किरिस्तान अब कहा के किरिस्तान है ? य लोग उसके दादा या परदादा के ज़मान मे व भी हमारी ही जाति के थ। इनकी कौन जाति है। तभी से वह हिचकिचा रहा था। इतन परिश्रम म अपने जीवन को साफ सुथरा रखने पर जातिभ्रष्ट अस्पश्य रक्त वाली के साथ ही शादी करने का उसका मन न था। भाड मे जायें य बातें। अब क्यो ये बातें साची जायें ? शादी के लिए मन मुख्य होता है। आई लाइक हर शी लव्ज मी।' क्या यह काफी नहीं ! ज्यादा सोच मे नहीं पडना चाहिए।

जरा लोगो का भी पता चले कि मरे भी कोई अपने है। 'घर घर की रट लगाकर हमारे वेतन पर दात गडाए बूढा की अपेक्षा कदम कदम पर हम हीरो मानन वाली लडकिया अच्छी है। 'अब सोच-विचार बहुत हो गया मिस्टर राम। अब आप कायमेंत म उतरिए।' कहकर उमा अपने को उत्साह दिया।

भरमा अब वास्तव म भास्त राम बन चुका था। उसने जो निणय लिया था उसके बार म वह सोच रहा कि वह बडा प्रगतिशील है। अपने मित्रा के लिए उसके मन म दया की भावना उत्पन्न हुई उन बचारा को क्या मालूम देश का उद्धार कैसे होगा ? पढे लिखे भी अपना घर, अपन माता पिता, अपनी जाति कहकर आगे न आये तो देश प्रगति कस करेगा ?

इसीलिए तो उसने इण्टरव्यू मे जब तक उन्होन नही पूछा तब तक पिता का नाम और जाति का नाम नही बताया। क्या यह आश्चय की बात नही ? दूसरे लोग बिना कुछ सोचे समझे उस पिछडी जाति का कह सकते है। फिर भी उसमे जितनी प्रगतिशीलता है उतनी दूसरा म नही। मरी वह क्रिरिस्तान रानी मेरे इस विचार के कारण मुझे कितना प्यार करेगी ? कौन जाने ? भरमा के विचारा को झटका सा लगा और वह रुका। 'थू ! यह क्या ? अपशकुन तो नही। अगर वह घर म न हो तो फजीहत ही होगी। कौन जाने ? प्रगति की बात पिछडे लोगा का पहले क्यों नही बताई गई ? पिछडे लोगा के कष्ट हम मालूम है। प्रगति की आवश्यकता हम महसूस करते हैं। जो भी हो आज नही तो कल जब भी हिन्दुस्तान का प्रगति के पथ पर चलना होगा तो हमसे ही होगा। धत ! अरे यह क्या ? मैं भी हमसे' कहता हूँ। हम कौन ? यह क्रिरिस्तान कौन ? मैं कौन ? सब एक ही है न। उसे ऐसा लगा होगा कि मैं जाति मे डरकर अब तक शादी के लिए तयार नहीं हुआ था। अब वह हैरान हो सकती है। तब उसका वह मुख देखन लायक होगा ह ह

चौंककर भरमा न चारो ओर देखा क्या ? जरा घबराहट हुई। हाँ ठीक है। बम्बई जसी नगरी म आज के जमाने म भी एसा क्या होना है वह मुह उठाकर दोना तरफ देखता हुआ चला। हमारा ही दुभाग्य है अब भी एक एक गली म एक ही जाति के लोग रहते है। यहाँ ना हर

मे क्रिश्चियन हैं । हैलो ! वह देखा। वहाँ उस ऊपर वाली मजिल म मेरी किरिस्तानी उसन ताली बजाई। दुबारा बजाई। उसन हाथ के इशारे से बताया, मैं वही आती हूँ।' ओह हो वही, उतरकर आ रही है। अच्छी बात है। वह चहलकदमी करन लगा। एक-दो, तीन, धत ! उसन घडी देखी। पाँच मिनट हो गए। अब भी उसका कोई नाम निशान नही। खैर, अभी उस मालूम नही कि मुझे बडा पद मिल गया है। अब पचास की गिनती गिनन तक वह न आई तो मैं चल दूगा एक, दो, इकतीस छियालीम छी ! बीच म कही गलती हो गई। एक बार फिर से गिनता हूँ। पचास गिनन तक अगर न आई तो—खैर, ऐसी बात नही सोचनी चाहिए। उसके साथ मेरी शादी होगी। इसलिए पचास तक गिनना नही चाहिए हलो ! लो आ ही गई, अवश्य ही यह एक शुभ शकुन है।

भरमा न बडे आत्मविश्वास से उससे हाथ मिलाया।

भरमा अवाक् बैठा सामने बैठी किरिस्तान लडकी की ओर घूर रहा था। वह उसकी ओर आश्चय और सदेह भरी ऐसी नजरो से देख रहा था मानो उसका उससे कभी परिचय भी न था। मुह म लगी सिगरेट जलती चली जा रही थी। सिगरेट के आगे अटकी राख मानो उसकी आशाओ आकाक्षाओ की तरह अटकी हुई थी। एक क्षण मे शायद हवा मे उड जाय।

उसन मुस्कराकर पूछा, 'क्यो एच०के०बी० ? क्या तुमन यह समझा था कि मैं आखिर तक तुम्हारे साथ एसे ही रहूँगी ?'

भरमा के मुह से कोई उत्तर न निकला। उसकी आशा और आकाक्षाएँ चूर चूर हो गई थी। सिगरेट की राख झडकर नीचे गिर गई।

वह खिलखिलाकर हँस पडी।

बाप रे ! यह हँसी तो रोगटे खडे कर रही है। सृष्टि के प्रारम्भ से ही स्त्री म चला आया वेश्यापन और उसकी विजय के गीत के समान उसके शरीर को रोमाचित कर देनी वाली है।

भरमा का शरीर अनजाने म काप उठा।

माई पूअर डार्लिंग !' कहते हुए उसन उसके हाथ पर हाथ रख

दिया तो वह सिकुड सा गया। इस पर वह बोली "निराश न हो डियर, मैंने कहा न ?"

क्या कहा ?"

उसका यह अपना स्वर उसे ऐसा लगा मानो अनेक वर्षों से इससे पहले मुख से कभी शब्द ही न निकला हो। उसे स्वयं अपना स्वर अपरिचित सा लगा। खँखारकर गला साफ करके उसने फिर से पूछा, क्या कहा ?'

'मेरी बिट्रोअल हो चुकी है।'

'कब ?'

एक साल हो गया।"

"फिर भी मेरे साथ आ रही थी।"

शी शी कहते हुए उसने नजाकत से उसके होठों पर उँगली रख दी और बोली, "तुम्हें ऐसे नही कहना चाहिए। तुम मेरे बॉय फ्रेण्ड हो। शादी हो गई तो क्या ?'

भरमा ने थूक सटकते हुए पूछा, 'यानी ?'

वह फिर से खिलखलाकर हँस पडी और बोली, "क्या तुम मेरे बॉय-फ्रेण्ड बनकर रहना पसन्द नही करते ? अगर तुम छोड दोगे तो मुझे बड़ी निराशा होगी।"

'बाय फ्रेण्ड माने ?"

तुम कैसे सिली हो। बॉय फ्रेण्ड माने बॉय फ्रेण्ड। अब जैसे हो वैसे रहना। और यह कहकर वह फिर से खिलखिला पडी।

उसने मन-ही मन सोचा 'बाप रे ! यह ध्वनि प्यारी तो है पर इसे सुनकर मेरे रोंगटे क्यों खडे हो रहे हैं ?

तुम खुश हो न ? अब तुम्हें तसल्ली हो गई।" कहते हुए उसने मेज पर रखे भरमा के हाथ पर अपना हाथ रख दिया।

उस स्पर्श से भरमा का शरीर काँप उठा। उसने सामने रख कप और सामने का दरवाजा। चाय वैसी की वैसी पडी थी। यह क्या ? मैंने चाय ही नहीं पी। ठंडी हो गई होगी। ठीक है भीतर की गर्मी से यह अपने आप गर्म हो जाएगी। यह सोचकर उसने एक घूट में प्याली खत्म कर दी और बोला, "अब चलो।"

"कहा डियर ?"

'मने जगह बदल ली है। तुमने देखी भी नही। तुम मेरा नया घर देख भी लेना। वही बात करेंगे।"

"आह !" उसने कनखियो से भरमा की ओर देखा और "नटखट कहीं के !' कहकर खिलखिलाती हुई वह उसके पीछे चल पडी।

बाहर आते ही भरमा ने इधर-उधर देखकर टैक्सी बुलाई।

टक्सी म कोई न बोला। भरमा अपने विचारो म खोया हुआ था। 'क्या न हो जाय सोचकर उसने उस लडकी की ओर कनखियो से दखा। तब वह अपने पस मे से छोटा-सा शीशा निकालकर उसम देखकर अपने बाल सँवार रही थी। भरमा न अपना निचला होठ दातो म दबाकर अपने आपको धमकाने वाले की भाति कहा, क्या न हो जाय, 'शादी नही करूँगी' कहती है। खैर, कोई बात नही, मुझे भी क्या चाहिए। उसके लिए वह तयार भी है। उसकी वैरवृत्ति पर मैं क्या कर सकता हूँ। यह सोचकर उसने लम्बी सास ली। अच्छा ही हुआ। मुझसे शादी करके यह ऐस ही किसी और के साथ । जान से ही मार डालता साली को। अब भी क्या हो गया ? मन ही मन मे बडबडाते हुए उसने अपने को रोकने के लिए मुट्ठिया जोर से कस ली।

भरमा के लबी सास लेने से उस लडकी को शायद भरमा की मानसिक स्थिति का भास हो गया। वह उसकी ओर देखकर हस पडी। शायद उस हँसी मे कुछ डर भी रहा होगा। इससे भरमा को हल्कापन महसूस हुआ। उसने मन ही म कहा, 'ऐसे ही डरती रहो। अभी देखना क्या होने वाला है।' टैक्सी रुकते ही वह आवेश म उसका हाथ पकडकर बाहर निकला। टैक्सी वाले को पैसे चुकाकर बाकी चिल्लर भी न लेते हुए सीधा घर के भीतर घुस गया। घर देखकर उस लडकी ने, "ओह, कितनी सुदर जगह।' कहा और उल्लास से ताली बजाई।

तब वह हँसकर बोला, "इसीलिए तो कहता हूँ, तुम मुख हो।

'क्या, मैं क्या मूख हूँ ?'

"यह सब मेरा तुम्हारा भी हो सकता था।'

अब भी मेरा ही है।'

यह देखकर वह क्रिश्चियन लड़की हैरान हो गई। उसकी समझ म न आया कि मारे स्त्रीत्व का ही समाप्त कर दने का आवश भरमा म भर गया था।

भरमा निस्तेज होकर बठा था। गुस्सा, ईर्ष्या, सताप आवश सब पसीने के समान बाहर निकल जान से अब वह ठडा पड गया था। आशा तो तृप्त हो गई, पर वह हताश होकर बैठा था।

क्या यही मरे जीवन का रास्ता है? 'यह पुरुष का वेश्यापन है।' कहकर वह अपने आप को कोस रहा था। पिता नही, उसन अपन पिता को दूर रखने का इस कारण प्रयास किया था कि लोग उसकी जाति न जान जायें। अब पिता की छाया तक नही पर जाति का भूत पीछा नही छाड रहा।

भरमा को अब कोई सदह न रहा। इस क्रिश्चियन लडकी ने उससे शादी करन से क्या इन्कार कर दिया इस बात म उस कोई सदह न था।

'वह हरिजन है, पिछडी जाति का। इस बात का छिपान का उसन कितना प्रयास नही किया?'

उसन अपने को 'हूँ! मूख, मैं महामूख हूँ।' कहा अब उसकी समझ म आ गया कि उसके सब प्रयत्न विफल हो गये।

अब उसका गुस्सा एकदम सरकार की ओर गया। हूँ! कमा मूख हूँ मैं! बापू ने कहा था कि गाधी हमारे लिए प्रयास कर रहे है। तब उस वह बात झूठी लगी थी। अब भी यह बात झूठी लगी। हमारे लिए प्रयास करने वाल सब हमारे शत्रु हैं। अरे! यह कैसा विचार मेरे मन म आया, 'हमारे लिए प्रयास करने वाले, हा, यह सब हमारे शत्रु है। उस पर यह अग्रेज़ सरकार तो दुश्मन नबर एक है। थू!' भरमा अब अपने विचारो के प्रवाह को रोक न सका। यादें एक के बाद एक आने लगी। उसन सिर झटका। तब भी विचार न रुके मैं भी कसा पागल हूँ। ब्रिटिश सरकार को मैंने अपना भाग्य देवता समझ रखा था। मार डाला न? उसन हमारा सत्यानाश कर दिया। आज नही तो कल वे हिन्दुस्तान छाडकर जाएँगे। मेरी समस्त जाति की अवस्था मेरी जसी ही होगी। मेरे अपन और हमारे अपन कोई बाकी न रहेगा।'

उसके मन मे फिर विचार आया। उनकी भी क्या गलती है। भरमा को फिर पुरानी स्मृतिया सताने लगी। क्या मैने स्वय नही देखा ? उस दिन की बात है क्लास के सब लोगो को एक निबध लिखना था। उसमे एक लडका प्रथम आया था। कौन था वह ? बी० डी० या बी० के० ? भाड मे जाय मै तो उसका नाम भी भूल गया। वह हमेशा फस्ट आता था। पर उस बार के निबध म प्रथम स्थान उसे मिला था। सबको आश्चय हुआ। क्यो ? क्या अनहोनी हो गई थी ? सब लडके दग होकर देख रह थे। अकस्मात कुछ लडको की आपस की बाते इसे सुनाई दे गइ थी।

एक कह रहा था, "यह सरप्राइज है।'

तब दूसरा बोला, इसमे सरप्राइज क्या है हमारी इक्नामिक कडीशन का एक लक्षण है।'

वाह रे बेटे ! एस्से और इक्नामिक कडीशन का सबध जाट रहा ह ? कहकर तीसरा कहकहा लगाकर हँस दिया। एक मिनट बाद सब उस हँसी म शामिल हो गय।

पहले न जरा गुस्स स जवाब दिया, ' इसमे हँसन की क्या बात है ? टक्स्ट बुक मे इक्नॉमिक कडीशन क बारे म क्या लिखा है, पता है ?

क्या मतलब ? तो तुम्हारा कहना है कि एच० क० बी० को एस्से लिखन म इक्नामिक कडीशन से सुविधा मिली।

उनके मुह से अपना नाम सुनकर वह जरा पीछे हट गया। ओह हो ! इन लोगो को मेरा प्रथम आना अच्छा नही लगा। जरा दखें तो सही क्या-क्या कहते है।'

सुविधा कसे नही ? टम की फीस दनी हो तो किताब गिरवी रखनी पड जाती है हमे। बाद म सकण्ड हैड किताबें लेने के लिए भी हम पाट टाइम काम करना पडता है। तुम्हारे एच० के० बी० के लिए क्या ? घर मे बैठे-बठे सरकार से गिन गिनाए पस आ जात है। बस दखें तो उसे पास करने की जल्दी भी नहीं। फेल होन पर भी तो स्कालरशिप मिलती रहती है।"

तब कोई बोला, 'हाँ, यह मानना पडेगा कि उस पढन का शौक है।"

इस बात पर सब हँस पडे।

तब भरमा न सोचा, ये मूख लोग है। 'नाच न जान आँगन टढा ।

बात है। इस पर भरमा के मन म उनके बारे म तिरस्कार और अपने पर अभिमान बढा वह स्वय पागल था। तभी उसे समझ जाना चाहिए था। उसे और उस जैसो को सरकार न स्कॉलरशिप देकर दूसरा से अलग कर दिया था। इससे लोगो म हरिजना के बारे मे स्नेह के स्थान पर तिरस्कार बढने लगा। दया की जगह द्वेष बढने लगा। उसके समाज म घुल मिल जान पर भी उसकी स्थिति चावल म पडे पत्थर जैसी थी। जसे चावला को बीन फटककर साफ करते समय पत्थर को बाहर फेंक दिया जाता है यदि भूल चूक म कोई पत्थर रह भी जाय तो खान वाला थाली से निकालकर गुस्से से दूर फेंक देता है। उसी प्रकार आज थाली से फेंके पत्थर की तरह लोग उसे दूर फेंक रहे हैं

अब सब कुछ भरमा की समझ मे आने लगा। 'जो भी हो, जाति छोडने मे सुख नही' यह बात कालिया अक्सर कहा करता था। इस बात को सुनकर तब वह आगबबूला हो उठता था। वह सोचता और गुस्से मे आता, ऐसे मूख हमारी इस स्थिति के कारण ही हैं। मूख कौन हैं ? आज भरमा दिल मे कुढने पर भी हँस पडा। उसका पिता मूख न था। बुद्धिमानो की मूखता को समझ जान वाला उसका बाप ज्यादा बुद्धिमान था। यह लोग बुद्धिमान हो सकते हैं। पता नही, किसी-न किसी कारण से मेरी जाति की बात उठाकर मुझे पीछे धकेलने वाले ये लोग बुद्धिमान हैं ? कालेज के पढे लिखे लोग ही जब ऐसा व्यवहार करते हैं तो उस बेचारी क्रिश्चियन लडकी का क्या दोष है ? सच है, पिता का कहना सच ही होगा। ये क्रिश्चियन लोग किसी न किसी जमाने मे हमारी तरह हरिजन ही थे। हरिजन क्या होलय, मादिग जाति के थे। बाद मे ईसाई हो गये। अपने पुराने कष्टो को याद करके अब ये कहते होंग, अब हि दुओ का सपक नही चाहिए।' इसी कारण उसने मुझसे विवाह करने को मना किया होगा। जो भी हो, हम हिन्दू नही। दूसरी जाति के लोग भी हमे नही छूते। यह सब इन्ही की मेहरबानी है। भरमा भीतर के गुस्से का रोक न पाकर तकिये को हाथो से ऐसे पीटने लगा मानो बरसो का छिपा शत्रु एकदम उसके हाथ लग गया हो। अत मे थककर बिस्तर से उठ गया।

उसने सोचा, हम समस्त ससार के लिए अस्पश्य हैं।

अस्पृश्य ! अस्पश्य ! हम कोई छूना नही चाहता।

असमथ रहने मे अपमान के कारण क्रोध, क्रोध से अधिक निष्फल प्रयास, और प्रयत्ना के निष्फल होने से और अधिक क्रोध और अधिक हठ। हठ से पिंजरे से निकलने का प्रयास और पिंजरे की मजबूती देखकर फिर अपमान।

'हाय, इससे कोई छुटकारा नही।' कहकर उसने अपने हाथो म जोर से अपना सिर थाम लिया और कुर्सी पर धम स द मारा।

'थू! देह और मन म कोई तालमल ही नहीं। मन इतना थक जाने पर भी देह को भूख लगी है?' भरमा को ध्यान आया कि उसने सुबह से अब तक खाना नही खाया। अब कोई चारा नही। भले ही कितना चक्कर लगाये, पहरेदार जब पिंजरे के बाहर खाना लाकर रखता तब पिंजरे म बद जानवर को खाना ही पडता है।

वह खाना खाने जाने के लिए उठ खडा हुआ। 'कहाँ जाया जाय?' उसकी टाँगें काँपने लगी। थकान से या डर से? बाप रे! भरमा फिर से कुर्सी पर बैठ गया। शरीर पसीना पसीना हो गया था। मैं डर गया हूँ? इतना प्रयत्न करने पर भी मैं अस्पृश्य ही रह गया। अब मेरा क्या होगा? क्या मैं यह सोचकर डर गया? हत्‌! यह कहाँ का पागलपन है? खाना खाना ही चाहिए। थकान और भूख के कारण पागल की तरह मैं न जाने क्या क्या सोचता रहा, ह ह!' कहकर वह हँस पडा। पर तभी उसे डर लगा। क्योंकि इतना थककर चूर हो गया था कि एक ही दिन म हँसी भी खो बैठा। 'क्या म अपने लिए भी अस्पृश्य हो गया?'

अपने आपको 'पागल, पागल कहीं का!' कहकर उठा। उसने चारो ओर देखा। बाहर जाकर खाना खाकर आने के लिए तैयारी करनी चाही। वहा सूट धरा है, कुरता भी रखा है, यही नही लबा वाला कोट भी है। अरे! वह जोधपुरी भी तो है। जो चाहे तो पहनकर बाहर जा सकता है। जिस होटल म चाहे खा सकता है। जिसके साथ चाहे बैठ सकता है। इतने दिन से बैठता चला नहीं आ रहा है? इस वेश म मुझे कौन अस्पृश्य समझ सकता है?

भरमा ने हाथ मुह धोकर अच्छे से कपडे पहने और शाम का खाना खाने के लिए बाहर निकला। मानसिक अतद्वन्द्व स मुक्त हो जाने के कारण मुख पर एक काति आ गई थी। भरी जवानी और उसे निखार देने वाली

दिन की अशान्ति समाप्त हो गई। पिता, बेचारा! जब वह उसके पास था, तब उसने उसके साथ कैसा व्यवहार किया? 'जब था' माने—अब? छि! छि! अब मेरे पिता को कुछ नही हुआ। मुझ पर गुस्सा करके कही चला गया है। वह जरूर आएगा। मुझे छोडकर रहना उसके लिए सम्भव नही। धत! मूख की भाति मैंने ही घर बदल डाला। बेचारा! उस घर के सामने दो चार दिन जरूर खडा रहा होगा। मैं कैसा दुष्ट हूँ अब जाकर जहा भी हो उसे बुला लाना चाहिए। अभी निकल पडू रात का समय है। जाने से फायदा भी नही। यह सोचकर वडा हताश हुआ। सुबह होते ही ढूढना चाहिए। जहा भी हो, उसे बुलाकर ले आना चाहिए, चाहे जो हो जाय। उसने यह निश्चय किया। बाहर से खाना खाकर और रात बिताने को पड रहा।

पर रात बीत ही नही रही थी। नीद न आने पर भी मन में तसल्ली थी। स्मतियो के कारण आसू बहने पर भी मुख पर एक क्रांति थी। भरमा ने सोचा, मै पागल हूँ।' मैं बेकार में ही सोच रहा था कि मेरा कोई अपना नही। बापू को ले आकर —ऊँह, इसमे क्या रखा है? माफी माग लूगा। भरमा को हँसी आ गई। एक पुरानी बात याद आई। तब उसे अपने पिता के साथ बम्बई आये कुछ ही दिन बीते थे। बापू को काम करते देख उसे बुरा लगा था। तब वह बहुत छोटा था फिर भी उसका हाथ बटाने की इच्छा हुई। मजदूरी करने की इच्छा हुई। किसी का सामान ढोकर ले गया था। दो या तीन आने मिले थे। तब भी कमाई का अभिमान था।

बापू ने डाँटकर पूछा, "कहाँ गया था रे भरम्या?"

उसने गर्व से पैसे दिखाते हुए कहा था, 'वहाँ किसी का बक्सा उठाकर ले गया था। उसने दो आने दिए।"

तब बापू ने बडबडाकर कहा, 'थू तेरी जाति पर! तेरी जाति का रक्त तेरे रोम रोम में है।"

तब वह समझ न पाया था।

पिता ने गुस्से से कहा था, 'तेरा सिर! मैं इसलिए खप रहा हूँ ताकि तू बैठकर पढे लिखे, पर तू कदम-कदम पर मजदूरी करने को भागता है।'

तब उसने पूछा था 'बापू तुम्ही क्यो खपते हो ?'

'पगला कहीं का ! मैं इसलिए खटता हूँ ताकि तुझे पढने म सहूलियत हो।"

वह बात याद करके भरमा ने एक लम्बी सास ली। उसके पिता ने उसे ऐसे पढाया। पर क्या हुआ ? अब भी वह हरिजन ही रहा। थू! अब फिर वही विचार। उसके पिता ने उसे क्या पढाया, ताकि मैं बडा आदमी बनू ? पसा कमाऊँ सुख से रहूँ है कि नहीं ? तो अब जो नौकरी मिली है उसम यह सब प्राप्त होगा कि नहीं ? तो अब यह रोना धोना क्या ? मैं सुख से रहूँ तो मेरे पिता को खुशी होगी कि नहीं ? क्या ऐसा कोई नियम है कि जो हरिजन होता है उस सुखी होने पर रोना चाहिए। [illegible] तो हँसना चाहिए ? अब क्या किया जाय ? उसने तब [illegible], 'रे भरम्या अब यह चिता क्या ? आराम स सो जा।'

पर उसे नीद न आई। पता नहीं मन [illegible] । [illegible] । कल सुबह होते ही पिता को ढूढकर [illegible] [illegible] । फिर ख्याल आया। जब वह पिता [illegible] है न ? भरमा की आखो से आँसू बह निकले। [illegible] पाछे हुए अँधेरे म ही दखने का प्रयास [illegible] धन ? मा अवश्य होगी। जब वह [illegible], [illegible] नहीं तब मा बाप की याद आने [illegible] आई। कितने दिन पुरानी [illegible] मे 'बठे बठे गाव की [illegible] था कहा था।

दादा, बहुत से साथी और भी बहुत से लोग थे न ? हाँ थे, सब थे। यह सब स्वप्न के समान लगा।

एकदम भरमा के मुख पर मुस्कान आ गई।

'हाँ, हाँ। कल आने दो बापू को। उसकी खूब फजीहत करूँगा।' उसने मन में सोचा।

उस दिन उसने पिता से पूछा था न ? बम्बई में बिट्टूर अच्छा था। तब पिता की कही बात याद आई।

तब बापू ने मजाक से कहा था, "अच्छा ! तो यह पूछ रहा है ? शाबाश बेटा। अच्छा था यह मुझ से पूछ रहा। इत्ती जल्दी भूल गया ?"

"आने दो, कल उसे आने दो। उसकी खूब फजीहत करूँगा। मुझे सब याद है यह भी बताऊँगा।"

बाप रे ! पता नहीं जब तुम बड़े हो जाओगे तब मुझे याद रखोगे भी कि नहीं ?" अपने बापू की यह बात याद आते ही भरमा का गला भर आया।

चाहे जो हो जाय, कल सुबह उठते ही बापू का पता लगाना है। मुझे याद भी रखोगे, कहा न ? बता दूंगा कि मैं कैसा अच्छा लड़का हूँ। उसे दिखा दूंगा कि मैंने उसे ढूंढने में कितना कष्ट उठाया।' यह सोचते ही उसे लगा कि भीतर से कुछ चुभ गया हो। भरमा ने एक लंबी सांस ली। इतने दिन ऐसा व्यवहार करने के कारण अब वह कुछ भी करने को तैयार था। घर लाने के बाद उसके लिए पहले अच्छे से कपड़े बनवाऊँगा। 'बढ़िया नरम गद्दी वाली कुर्सी पर चुपचाप बैठे रहो' कहूँगा। तब वह कहेगा, 'अरे भरम्या ! इतना पढ़ लिख जाने के बाद भी तू मेरी ही जैसी बातें करता है। तब हम दोनों खूब हँसेंगे। खैर, वह आ तो जाय।

भरमा का मन डर गया, 'आ तो जाय के माने उसे कुछ हो तो नहीं गया! पी पाकर कहीं 'धत ! अगर मैं ऐसा बर्ताव न करता तो वह पीना ही नहीं शुरू करता। अब मेरा विश्वास है कि वह पीएगा नहीं। उसे कुछ नहीं हुआ होगा ? हे भगवान ! मेरा बापू सुरक्षित हो, उसका बाल भी बांका न हो। चाहे तो बिट्टूर ही चला जाय। घर बनवा दूंगा। खेत खरीद दूंगा। बस और क्या चाहिए। उसे ? वह अपने को सुखी समझे, ऐसा हर काम मैं करूँगा। हे भगवान, हे भगवान !' लेटे-लेटे भरमा सिसकियाँ

भरने लगा और छोटे बच्चे की तरह रो उठा। और बोला, 'कसम खाकर कहता हूँ। वह जो चाहेगा दिला दूगा।'

बस कल वह मिल भर जाय। सुबह उठते ही ढूढन जाऊँगा। अखबार म निकलवाऊँगा। उसे ढूँढकर लाने वाले को इनाम दगा। हाँ, यह साफ-साफ छपवा दूँगा कि वह मेरा पिता है। यानी लोगो को पता चलना आवश्यक है कि वह मेरा पिता है। यह बात मैं खुशी खुशी कहूँगा। हे भगवान, वह मिल भर जाय!

कल मिल जाय। मेरा कोई अपना नहीं। उसके सिवा मेरा और कोई नहीं। वह अकेला मेरे साथ रहे तो सबके रहने के बराबर है। हे भगवान! कल मेरा बापू मुझे मिल जाय! जैसा वह कहेगा जिस दिन कहेगा और जिस अपनी जाति की लडकी से कहेगा, मैं उसी से शादी कर लूगा। उसन एकाग्र मन से भगवान से प्राथना की। तभी उसे नीद न घेर लिया। वह स्वप्न म बापू का हाथ पकडकर कह रहा है, 'विट्टूर का मुझे पता है चलो वहीं चलें।'

# 16

"कम से कम अपनी ही जाति म शादी करेगा या नहीं?

सुब्बक्का के इस प्रश्न का उत्तर किसी ने न दिया।

शरारती निगाहो से सीनू स रागण्णा की ओर देखा। शामण्णा ने मुस्कराते हुए रागण्णा की आर देखा। शाता ने एक बार सरस्वती की ओर देखकर सुब्बक्का पर निगाह डालते हुए तसल्ली भरी आखो से रागण्णा की ओर दखा।

अपन प्रश्न का कोई उत्तर न मिलने के कारण सुब्बक्का चिढकर बोली

"मेरे मरने के बाद क्या होगा, यह मैं नही जानती। पर मै चाहती हूँ कि जब तक मैं जीती हूँ तब तक कम-से कम जाति और धम तो बचे रहे।'

रागण्णा बैठा आसमान की ओर देखता रहा।

शाता बोली, "बेटे का सुख देखकर मरना, तुम्हे इतनी जल्दी क्या पड गई, सुब्बक्का ?"

"अरे कैसा सुख ? कैसी खाक !"

"गर जात की बहू को घर ले आये ता ?" कहकर सीनू ने ऐसे दिखाया माना वह सुब्बक्का के पक्ष में हो।

सुब्बक्का के अलावा सब खिलखिला पडे। शायद उसन अब तक दबे उद्वेग को छेड दिया था। सुब्बक्का का हृदय शब्दा के रूप म फूटकर बाहर निकलने लगा।

"पता नही, तुम लागा को किस बात पर हँसी आ रही है। जन्म से ही देख रही हूँ—घर घराना, पैसा सुख शाति सब एक एक करके किनारा कर गए। भले ही सब कुछ चला गया पर यह समझ म नही आया कि पूव जन्म का कौन सा पाप था जा अब तक पकडे बैठा है। मैं चाहती हूँ कि आगे भगवान की कृपा से धरम करम तो बचा रहे। मेरी ता गुजर गई, मैं तो सुख अपने नसीब म लिखाकर लाई नही। मेरे बच्चे तो सुखी रहें मैं तो यही चाहती हूँ कि बच्चे कुल की मान मर्यादा बिगाडें नही। पर इसका किसे ध्यान है ?' सुब्बक्का के शब्द मानो मुह स न निकलकर आँखो से टपकने लग थे। वह जार जार रोने लगी। किसे ध्यान है ? कैसा घर था ! कैसा वैभव था ! अब उसी घर मे दिया जलाने वाला भी नही। दिन म बारह घण्टे आन जान वाला का खाना पीना चलता था। पर अब ता अपने लिए ही खाना भी मयस्सर नही। और अभी पता नही भाग्य मे और क्या क्या देखना बदा है ? मेरे पाव के लच्छन से ही इस घरान का एसा हाल हुआ। मैं ही अपना मुह काला करके कही चली जाऊँगी। बस एक आस थी कि वश बढता देखू। अगर ये आसार रहे तो मिल चुका वह सुख। मेरी समझ मे नही आता कि क्या करूँ। शाता, मैं मरना चाहती हूँ पर इस लालसा ने मुझे बाँध रखा है। भगवान मेरी आँखें बन्द कर देता तो मैं निश्चित हो जाती।"

अब सुब्बक्का वहाँ ठहर न सकी। सिसकती सिमटती वह भीतर चली गई। उसके पीछे जान का तयार सरस्वती को रोक कर शाता बाली, 'सरसू तुम खान की तैयारी करन चलो, मैं भी आती हूँ।' एक मिनट

होगी। मर गिजा उस बच्चे का और कौन है ? इतने दिन तक तो बहिन थी। जो भी हो जसी भी हो, उसकी शादी हो गई। अब उसके लिए अपना घरबार है पति है कल को बच्चे भी हो जाएँगे। भाई के लिए वह कहाँ तक कर पाएगी। अब रागण्णा का मर सिवा है कौन ? अब मैं एसी हूँ, पता नहीं लडके के मन को कितनी ठेस लगी होगी ! मरे मुह स भी क्या एसी बातें निकल गई ?'

अब मैं भी क्या करूँ ? यह सब कुछ सहकर मैंने बच्चे बडे किए। मैं ता यही चाहती थी कि य सुख से बस जाएँ। और पोते-पोतियाँ गोद खिलाने की इच्छा करूँ तो इसम कोई दोष है क्या ? अब तक इतना कष्ट सहन पर भी क्या मुझे इतनी आशा रखने का अधिकार भी नही ?

पर इसमे क्या ? राग्या ने यह कह दिया न कि आश्रम की एक हरिजन लडकी स शादी करूँगा। यह बात सुनकर सुब्बक्का को एसा लगा था मानो सिर पर गाज गिर पडी हो। 'इस घराने का पता नही कौन-सा शाप लगा है। हरिजन माने और क्या है ? होलेय जात की लडकी। आश्रम म बडी हो जाने स क्या हो गया ? उसका होलेय होना झूठा हो गया क्या ? रागण्णा की वह बात सुनकर सब चुप बठे थे न ? क्या व सब पहले स ही जानते थ ? सुब्बक्का को यह सोचकर गुस्सा आया कि उन सबने जानबूझकर यह योजना बनाई होगी।'

वह बात सुनते ही सुब्बक्का चिल्ला पडी थी, "क्या ? किसके साथ शादी करने की बात कही तुमने ?' तब रागण्णा ने कहा था 'वरना मैं शादी ही नही करूँगा ?

तब उसने गुस्से स पूछा, 'मैं पूछती हूँ, तुम किससे शादी करने की बात कह रहे हो ?'

तब परिस्थिति को जरा शात करने के लिए शामण्णा बीच म बोला, 'सुब्बक्का वह कह रहा है न अगर आप नही चाहती तो वह जरूर छोड देगा।

मीनू भी बीच म कहने लगा, 'जब वह खुद कह रहा है कि वह आप की बात टालेगा नही तो बात खत्म हो गई।"

उसी समय शाता भी बोली 'अब बात खत्म ही हो गई न !"

सरसू भी बोली 'फिलहाल तो वह बात ही नही, माँ।"

"बाप रे ! हरएक ने कसे राग्या की तरफ से बात की। बात खत्म हो गइ कह रहे थे। बात कैसे खत्म हो गई ? क्या उसने यह नही कहा कि उस लडकी के अलावा किसी दूसरी मे मैं शादी नही करूँगा ? और वह सीनू—मरा दामाद—वह कह रहा था आपकी बात नही टालेगा।'

सुब्बक्का ने साचा, मेरी ही गलती थी। सरसी की शादी के लिए मानना नही चाहिए था। एक हा दिन मे लडकी कैसी हो गई थी। तब मुझे भी एसा लगा था कि मेरे मरने पर इसका क्या बनेगा ? इसलिए मैंने हा कर दी थी। अब इन सबने यह सोचा होगा कि तब मैंने उसके लिए 'हा' कर दी थी। अब इसके लिए भी मान जाऊँगी। इन सबने मिलकर मुझे ठगने की ठानी होगी। इसीलिए तो मुझे इतना गुस्सा आया।

तब वह गुस्से म चिल्लाकर बोली, "बहुत हो गया, तुम सबका बडप्पन ! तुम सबने मिलकर मेरी जिंदगी बरबाद कर दी।"

अब यह सब याद करके सुब्बक्का मन ही-मन पूछ रही थी, 'अब कोई आकर उसम बात करे तो उससे आखे कसे मिलाएगी ? इस डर से वह अकेली सिर नीचा किए बठी थी।

वह सोच रही थी 'यह ठीक है, मरी जिंदगी तो बरबाद हो गई पर दूसरो का क्या कोसू ? यह सब मेरे भाग्य मे लिखा था। इसके लिए कोई क्या कर सकता है ?' वसे देखा जाय ता उसकी वजह से ही बच्चो का ऐसे दिन दखन पडे। यह काफी नही ? अब इसे क्या चाहिए ? बच्चा के सुख के लिए उसने कष्ट सहे। बटा पढ लिखकर बडा हा गया। बटी की समस्या भी हल हो गई। बेटे को अब नौकरी मिल सकती है। अब उसे और क्या चाहिए ?

अब सुब्बक्का को इसी बात का दुख है। एक तरफ बच्चे सुख से है ! दूसरी तरफ उसके मन की आशा ! वह भी क्या ? पात पोतियो को देख-कर मरने की आशा ! उसे यही इच्छा सता रही है कि तभी उसका कष्ट-मय जीवन सार्थक हागा। उसकी तो जबान ही खराब है। सब बैठे आराम से बातें कर रह थे। रामण्णा अच्छे नबरा से पास हा गया है। तब वह बोली थी "अब एक अच्छी नौकरी और मिल जाय।"

इस पर शामण्णा बोला था "इसी बारे मे हम सोच रहे हैं।'

तब वह बोली, 'बस अब शादी भी हो जाय ता मैं खुशी-खुशी आँखें

मूंद मानी हूँ।"

तब मीनू बोला, "उसका भी निश्चय हो चुका पर रागण्णा ने इसी लिए स्थगित कर रखा है कि आप जल्दी आँखें बन्द करने की बात न सोचें।"

तब शामण्णा की ओर देखकर उसने पूछा था "क्या निश्चय हो गया? कहाँ?"

इस पर सरसी ने कहा, 'उनकी बातों पर तुम क्या विश्वास करती हो माँ?"

मीनू बोला "शादी जैसे विषयों के बारे में मैं झूठ नहीं बोलता।'

नाना ने कहा 'इसमें छिपाने की बात नहीं? अब वह बात ही नहीं।'

मीनू ने फिर से मजाक में कहा "बहू ऐसी वैसी नहीं अम्माजी छून हो मैली हो जाएगी। इसलिए सन्देह है कि आप छूएँगी कि नहीं?'

सब हँस पडे। रागण्णा ने चिढ़कर कहा, "चुप रहो।

तब उसे सन्देह हुआ था कि कोई खिचडी पक रही है। उसे कुछ भी बताए बिना ही ये लोग कुछ कर रहे हैं। इस पर वह बोली

'मैं इस घर की कौन होती हूँ? मुझे कुछ बताने की जरूरत भी नहीं है।

शामण्णा ने समझाया, "सुब्बक्का, यह तो सीनू की शरारत है। आप ऐसे क्यों कह रही हैं? आप हम सबकी बड़ी हैं।'

आग लगे ऐसे बडप्पन को। दूसरों के मुह से सुन रही हूँ कि लडके की शादी पक्की हो गई।

'दूसरों से क्या, मैं ही बता रहा हूँ माँ। मैंने निश्चय कर लिया है।"

तब वह चिढ़कर बोली थी 'किससे रे?' इतनी जिद से क्या पूछा था। इसीलिए तो कह रही है। यह मेरा भाग्य है। पता नहीं वह लोग बैठे क्या बातें कर रहे थे? मैंने जाकर मजा किरकिरा कर दिया। अगर मैं जिद न करती तो पता नहीं रागण्णा बताता भी या नहीं, बताना क्या था? जिद करने पर बता दिया।

सुब्बक्का को डर लगा। सबने मिलकर उसे चिढ़ाने के लिए ऐसा

किया हो तो ? वह सीनू भी एक नम्बर का शैतान है । यह उसी की शैतानी तो नहीं, रागण्णा की शादी एक हरिजन लड़की के साथ' कहने से मैं गुस्से में आ जाऊँगी । यह सोचकर सबने शरारत की हो ? चीखने चिल्लाने से इसी की तो फजीहत हुई ।

होने दो, सब कुछ झूठा ही होने दो । मेरी फजीहत भले हो गई पर हे भगवान ! सब झूठ ही हो ।' उसने भगवान से मन ही मन विनती की । साथ ही एक सन्देह मन में उठा और एक डर भी । कुछ ऐसा जरूर होना भी चाहिए था । बेटी की तो जैसे-तैसे शादी हो गई । लड़का भी अच्छा मिल गया । बेटा अच्छे नम्बरों से पास हो गया । इसलिए वह निश्चिंत हो गई थी । शायद यही अपशकुन होगा । निश्चिंत होकर जीने का भाग्य उसका कहाँ ? उसका सुख से जीना तो एक तरफ, निश्चित होकर रहने की बात तक सोच भी नहीं सकती । मेरा यह सोचना ही गलत था । रागण्णा की बात सच ही होगी । इसमें किसी की भी शरारत नहीं, मजाक नहीं । यह उसी के पूर्व जन्मों के पाप का फल है । यह शादी अवश्य हो जाएगी । उन लोगों का ऐसा विचार है । इसमें कोई सन्देह नहीं । ऐसी शादी के लिए सहमत हो जाना मेरे लिए असंभव है । रागण्णा ने तो कह दिया अगर मैं नहीं मानूं तो वह शादी ही नहीं करेगा । कौन जाने ? अब तक पता नहीं यह बात कहाँ तक पहुँच गई है ! रागण्णा की शादी अवश्य होगी । मैं उसके लिए कभी तैयार न होऊँगी । इसके लिए एक ही उपाय है । अब उसे अपने प्राण दे देने चाहिए । बच्चों के सुख के लिए क्या उसने कष्ट नहीं उठाए ? तो मरना उसके लिए कौन बड़ा कष्ट है ? जीवन में ऐसा कौनसा सुख देख लिया जिससे मरने में दुख होगा । ऐसे जीवन को छोड़ देने में ही परम सुख है । जिसने अपने बच्चों के सुख के लिए कष्ट उठाया हो उसे हो सके तो बच्चों के सुख के लिए जान देकर खुश क्या न होना चाहिए ? इस घर में जब तक उसकी सांस चलती रहेगी तब तक इस घराने को सुख नहीं । ये लोग कुल छोड़कर सुखी होना चाहते हैं । मेरे भाग्य में सुख नहीं । मैं कुल भी नहीं छोड़ सकती । मुझमें सुख न मिलने के कारण ही कुल भ्रष्ट हुआ । अब कुल छोड़कर सुख की इच्छा बेटा कर रहा है । मैं उसके रास्ते का रोड़ा क्या बनूं ? बीस वर्ष से रुका दुख सुब्बक्का के शरीर को ... । बाहर निकला । वह माँ के मन का दुख था । सारे जगत के

दुख था वह । दुनिया मे जहा जहा मातृत्व है, वहा व्याप्त हो जान वाला दुख था वह ।

इम दुख ने रागण्णा को बुरी तरह स घेर लिया । मा न कहा था न, 'कम स कम बच्चे तो कुलभ्रष्ट न हो ।' रागण्णा को यह मालूम था, अपने दुख से दूसरो मे दुख उत्प न करन की स्थिति कितनी करुणाजनक होती है । उम पता था कि उसके इस निश्चय से मा को कितनी ठेस पहुँची है । वह वेदना दुधारी तलवार की तरह उसके मन को काट रही है । इससे दोनो हृदयो से खून छलछला रहा था न ? क्या मा ने जानबूझकर यह बात कही कि बच्चे तो कम से कम कुलभ्रष्ट न हो । भले ही पिता की बात को लेकर आज तक किसी ने उस कुछ न कहा हो, पर उसका इतिहास ? किसी स्त्री से उसके सबध थे । पर उस बात म और आज के इसके निणय मे कोई फक नही क्या ?

क्या इसम कोई फक नही ? उसका हृदय काप उठा, शरीर के रागटे खडे हो गये । उसके बारे मे बात करते समय सीनू के स्वर म मजाक था । सब लोग हँस पडे थे । जो बात उसके लिए इतनी महत्त्वपूण थी । क्या वह दूसरो के लिए मजाक की चीज थी ? क्या उस भी उन्होने पुरुषो की एक साधारण वासना-तप्ति समझा है ? उसका प्रेम सच्चा है ? नि स्वाथ है । हजारो वर्षो से जातियो मे एक दूसरे के प्रति पूर्वाग्रह रहित पवित्र प्रेम । तो इन लोगो को बुरा लगा ? जब मा न बच्चे कुलभ्रष्ट न हो कहा, तो क्या उन्होने मेरे इस प्रेम की तुलना पिता की वासना से की ? क्या यह ठीक है ?

रागण्णा न सोचा, वह किसी को अपना मुह नही दिखा सकता, अगर उन लोगो क उसके बारे म ऐसे विचार हो तो ? सत्यानाश हो इस घराने की मर्यादा का ! घरान की मर्यादा ! कमबख्त घराने की मयादा क प्रश्न को लेकर सबने, यहाँ तक कि मा ने भी मुझे गलत समझा न ? घरान के गुण-दोष आनुवंशिक रूप से चले जाते है । इस विचार के कारण ही इन लोगो न मुझे भी पिता के ममान विलासी समझा ? यदि नदी का पानी हिल जाय तो वह गँदला हो जाता है । पर कुछ समय तक बरतन म भर कर रख दिया जाय तो मिटटी नीचे बठ जाती है और पानी इस्तमाल

के लिए साफ हो जाता है। पिता का चचल स्वभाव बेटे म न दिखाई देना सहज नही ?

रागण्णा के लिए एक बात साफ थी, वह थी कि उसकी शादी नही हो सकती। उसके विवाह की बात से ही माँ को इतना दुख हुआ। उसम भी बढकर उन्हे पुराने दुख याद हो आये। उसने कह दिया, "मैं शादी ही नही करूँगा। पिता के पाप के लिए पुत्र को प्रायश्चित्त करना होगा। जब उसने यह कहा कि मैं शादी ही नही करूँगा। तब वह गुस्से म न था। तब उसे यह पक्का विश्वास हो गया था कि उसकी शादी होना असभव है।

रागण्णा पेड के नीचे से उठा। और आगे चला मानो वहा स दूर जाने से ही उसका दुख चला जाएगा। वह कहा जाय ? क्या जाय ? माँ की बात फिर से याद आई, 'कम-से-कम बच्चे तो कुलभ्रष्ट न हो।' उसने सिर झटका।

'मेरे हृदय के शुद्ध प्रेम को माँ कुलभ्रष्ट होना कहती है न ?

तेजी स कदम रखता हुआ आगे बढा। उसके मन म प्रश्न उठा, 'क्या, क्यो ?

क्या का अर्थ स्पष्ट है। वह अपने बाप का बेटा है इसलिए। जब पिता एसा था तब उसे भी एसा ही होना चाहिए। पिता हरिजन स्त्री पर आसक्त था, तो पुत्र को भी एसा ही होना चाहिए। यह कम छूटता नही। आनुवशिक गुण है। रक्त म आया प्रकृति प्रवाह।

अ ह-हा ! कैसा उदात्त सिद्धात है यह !

ब्राह्मण का बेटा ब्राह्मण।

लफगे का बेटा लफगा !

बाप रे ! किस तरह जाति का यह सिद्धात हमे निचोडकर सत्त्वहीन बना रहा है। निसर्ग सहज प्रकृति को भी खोखला बना करके उडाय दे रहा है।

लफगे का बेटा लफगा। मैं लफगा नही यह बताने के लिए यह दिखाना पडेगा कि मेरा बाप लफगा नही था, हा मुझे यह सिद्ध करना पडेगा। यह मेरी जिम्मेदारी है नही तो दुनिया के लिए मैं एक लफगे का बेटा हूँ। इसलिए मैं भी लफगा हूँ।

रागण्णा अधी गली म फँसे शिकार के समान सहम गया। कही भी

जाने में क्या होगा ? जो ध्यान में आया वह पीछा करता ही जाएगा। वह गलत है या झूठ है। यह यहा पर कोई विश्वास न करेगा। चाहे मैं अपने व्यवहार में, बर्ताव में कितना ही बड़प्पन क्यों न दिखाऊँ फिर भी लोग मजाक उड़ाकर कहेंगे, यह गुड्ण्णा का बेटा है।"

गुड्ण्णा का स्वभाव तो आप जानते ही थे। पता नहीं यह सब कैसे दिमाग में। क्या ख्याल है आपका ?'

आग लगे इस मनुष्यत्व को।"

क्या आदमी इतना असहाय होता है ? अपने काबू से बाहर की परिस्थिति में जबरन फँस जाने पर भी क्या उससे वह जीत नहीं सकता ? केवल उस प्रवाह में वह जाएगा ?

आह ! दादा जी कहा करते थे न 'यथा काष्ठ, च काष्ठम्'। मनुष्य का अर्थ है लकड़ी का एक टुकड़ा बहता आता है। कहाँ से ? जहाँ से प्रवाह ले आता है। बहता चला जाता है। कहाँ ? जहाँ प्रवाह ले जाय। यानी मानव जो समझते-बूझते हुए प्रयास करता है वह ? भाड़ में गई समझ। उस प्रयास का समझने का उपयोग अपने जीवन के लिए भी नहीं, समाज के लिए भी नहीं।

आग लगे मनुष्यत्व को ! इसे जाने बिना जो प्रयत्न हम करते हैं और जो कष्ट हम उठाते हैं उन्हें देखकर कोई कहीं बैठा हँस रहा होगा।

देखो। लफंगे का बेटा साधु बनना चाहता है।

क्षत्रिय विश्वमित्र ब्रह्मर्षि बनना चाहता है।

काले कुत्ते को सफेद करना चाहता है।

रागण्णा यह सब गलत है गलत है, कहता हुआ फिर से बैठ गया। वह जमीन पर बैठना चाहता था। उस समय उसे यह भी होश न था कि वहाँ पत्थर है। यह समझ में आने पर पहले टकरा गया। तब उसने तुरंत चारों ओर देखा। वहां किसी के न दिखाई देने से अपनी अवस्था पर अपने आप हँस पड़ा।

अब पता चला कि दोष कहाँ है। कहते हैं न, सिर पर चोट पड़ते ही अक्ल आ जाती है। पर यह बात गलत साबित हुई। यहां नीचे चोट लगने पर दर्शन समझ में आ गया। हाँ, पता लगा गलती कहाँ है।

उसने सोचा, आश्चर्य की बात है, मनुष्य का स्वभाव कितना अगम्य

है । अब तक किसी विचार के कारण उसने जीवन की आशा ही छोड रखी थी । उस एक ही विचार सता रहा था । वह भी केवल विचार-भर ही था, काय म परिणत नही हुआ था । इस पर भी अब मनोवृत्ति बदल गई थी । अब तसल्ली महसूस हो रही है कि सब समझ मे आ गया । यही नही, यह आत्मविश्वास भी पैदा हो रहा है कि प्रकृति के बधन को ही तोडकर आगे जा सकता हूँ ।

इस सब का कारण ?

पत्थर पर चूतडो का टकराना । जो समझना था वह सब साफ साफ समझ म आ गया । बाद मे शिक्षक की भाति एक थप्पड लगाकर सिखाया गया ।

' समझ मे आ गया, गलती कहा है । साफ साफ समझ मे आ गया ।"

लफगे का बेटा लफगा । यह बात एकदम गलत है ।"

' किसे मालूम ? कौन बता सकता है ? यह सच है कि मेरा पिता नीति का मार्ग छोडकर चला था । पर उसका कारण क्या हो सकता है ? अगर मेरे पिता का विवाह इतनी जल्दी न होता ? मन रहे या न रहे, पहले किसी की जल्दी शादी करा देना बाद मे उसे नीति की सान पर चढाना ! यह कौन सा न्याय है ? इस कमबख्त जाति भेद की बात न होती तो इस कृत्रिम नीति की बात ही नही उठती थी । पहले किसी के अस्पृश्य होने की घोषणा करना, बाद मे उसे छूने को अधम कहना ।

गलती ? यह सब गलती है ? लोग चाहे जो कहे, उसका पिता ऐसा था वह यह मानने के लिए तैयार नही । इसलिए उसके बारे मे भी ऐसा कहना गलत है, उसके पिता की शादी जल्दी हो गई थी । ऐसा कोई बधन नही था । इतनी जल्दी विवाह करना ही गलत है । अज्ञानी समाज परिस्थिति की अनीति का अँधेरा फलाते समय ।

खैर, छोडो उस बात को । किसके लिए वह बडी बातें सोच रहा है । स्वय उसका विवाह होना नही है । सचमुच नही होगा, वह भी माँ के रहते तक । माँ के धत् ! उसका दिमाग ही खराब है । क्या मैं इतना स्वार्थी हो गया हूँ कि माँ के बारे म बुरी बातें सोचने लग गया ?

रागण्णा ने लबी साँस ली । निराशा से अपने भविष्य के बारे मे सोचने लगा । यही मेरा भविष्य है कहकर दुखी हुआ । कौन जाने ?

दुनिया का प्रवाह ऐसे ही चला होगा। माँ के लिए मैं अपना विचार छोड दूगा, कोई और पिता के लिए अपना विचार त्याग देगा, इसी प्रकार जाति के लिए, धम के लिए कई लोग अपमे अपने विचार त्याग देंग। प्रगति की बात कहते हैं। स्नेह, दया, भय, इनके लिए हम अपने-अपन विचारा का गला क्यो घोटें ? प्रगति का भी क्या विश्वास करें ?

ह ह हरिजन लडकी से विवाह न करने की हिम्मत न हान से मैं दाशनिक बन गया। शाबाश ! दुनिया के सभी दाशनिक व्यक्तियो का जीवन चरित्र देखना चाहिए। कही वे भी अपने स्वाथ के लिए ता दाशनिक नही बन ? जब स्वाथ को रोका नही जा सकता।

मेरा भी क्या भाग्य है !

अब उसकी बात क्यो ? अब जल्दी भी क्या है। पहले पट भरने का रास्ता ढूढना चाहिए। शादी की बात बाद मे। पहले नौकरी, पता नही उसके मिलने मे कितनी देर लग ? तब तक न जाने क्या बनेगा, कौन जान ? कई बार हमारा किया नहा होता। पर समय आन पर खुद ब खुद हो जाता है। जो होता है वह होने दो। हमारी तो हालत हिजडा जसी है जो दूसरों के बाल बच्चा को देखकर खुश होता है। पता नही अपन आप क्या होन वाला है ?

ओह ! भूख अपने आप लग जाती है। इतने आवेश म मैंन कितनी बातें सोची। अब निलज्ज हाकर खाना खाना होगा।

जिस प्रकार भूख अपन आप लगती है, उसी प्रकार खाना भी अपने आप मिल जाता ता ?

ठीक है। अब सब उस सोनू का उत्पात है उसे मजा आता है। पता नही कितना चिढाएगा ?

अब जो भी हो। यह निश्चय करके एकदम हताश होकर धीर धीरे कदम रखता रागण्णा घर पहुँचा। पता नही तब बाहर का अँधेरा था या भीतर का प्रकाश—कुछ ही मिनट म वह सीटी बजाता हुआ चल पडा।

माँ के दुख से जो मन का गुबार निकला शाता स उसी की चर्चा करते हुए सरस ने कहा, 'अब क्या होगा ? किया क्या जाय ?'

शाता ने उसे तसल्ली दी। कुछ भी नही होगा। तुम इतना क्या

डरती हो ?

"यह बात नही बुआ जी, माँ न हमारे लिए इतना कष्ट उठाया। अब भी हम लोगो से उन्हे सुख नही " आगे सरस्वती के मुख स शब्द न निकले। वह सिसक पडी।

"हट पगली कही की !" कहते हुए शाता ने सरस्वती की पीठ पर हाथ फेरा।

शाता जानती थी कि सरस्वती के दुख का कारण केवल माँ के मन का गुबार ही नही। गुस्से म आकर सुब्बक्का कई बातें कह गई थी। वह उसे समझाते हुए बोली, "गुस्से मे आदमी बहुत सी बातें बक जाता है।'

"वह गुस्सा नही बुआ, मन का दुख था। पता नही उनके मन म कितना दुख और कष्ट समाया हुआ है। इसे भी समाये रख सकती थी पर अब वह और सँभाल नही पाई। यह सब हमारे कारण हुआ।" अब सरस्वती जोर से रो पडी।

"सरसू, मैंने सोचा था, वह रागण्णा ही अकेला पागल है। तुम भी वसी ही हो गइ तो ? बेचारी! तुम्हारी माँ ने इतने दिन इतना कष्ट सहा। अब रागण्णा की चिता खत्म हो गई। वैसे देखा जाय तो सुब्बक्का का बोझ हल्का हो गया। असली बात तो यह है कि सुब्बक्का यह समय नही पा रही कि यह सुख है या दुख। तुम्ही देख लेना, चार ही दिन म सब भूलकर पोते की राह देखने लगेंगी। यह सब तुम्ही अपनी आँखो स देख लोगी। कल पोता आते ही उठाकर चूम लेंगी। या उसकी माँ हरिजन समझकर दूर खडी होकर, आओ बेटा! कहेंगी।"

"पर बुआ, रागण्णा तो कह रहा है—शादी ही नही करूँगा ?

"इसलिए तो कहा, वह पागल है। उसे मा के दिल का क्या पता ? तुम भी औरत होकर उसी तरह पगली बन रही हो।'

"मतलब ? क्या आपका कहना यह है कि मा यह सब भूल जाएँगी ? एकदम सब ? क्यो बुआ !"

शाता के मुख पर मुसकान छा गई। सरस्वती इतने कौतूहल, धैर्य, आशा-निराशा से यह सब क्या पूछ रही है। इसका रहस्य शाता जानती थी। यह प्रश्न वह अवश्य पूछेगी। अगर एक बार न भी पूछे तो इसे बात ऐसे ढग से करनी पडेगी कि वह पूछे ही यह शाता पहले ही सोच चुकी थी।

अत म वह प्रश्न आ ही गया।

'बेचारी ! कितनी भोली है।' सरस्वती को देखकर शाता की मुस्कान मे दया की छाया उभरआई। बेचारी बच्ची पता नही कितनी दुखी होगी। 'कम-से-कम बच्चे तो कुलभ्रष्ट न हो' सुब्बक्का के यह कहते समय सरस्वती एक बार चौंकपडी थी। शाता को मालूम था, सरस्वती ने समझा माँ ने उसी को लक्ष्य करके यह बात कही। क्यो न हो ? ऐसा क्यो न हो ? घर मे माँ है, बुआ है, दोनो के ही पति नही रहे। क्या यह भी उन्ही की तरह रह नही सकती थी। उसकी शादी हो जाने से यह कुलभ्रष्ट हो गई। उसी की शादी के कारण इसे लक्ष्य करके यह बात कही। यह सोच-कर वह चौक पडी। उसे अत्यत दुख हुआ। एक मिनट को इस कारण उसके मन मे माँ के प्रति तिरस्कार भी हुआ। जान-बूझकर माँ उसे कोच रही है। यही बात अगर पहले कह दती तो वह शादी करने को तैयार न होती। तब चुप रही, शादी हो गई तब भी चुप रही। पहले से ही भया पर उसे मुझसे ज्यादा प्यार था। इसलिए वह तो, कुलभ्रष्ट न हो सोचकर यह कह रही है इस बात पर सरस्वती को अपने पति पर भी गुस्सा आया। इन्ही की शैतानिया के कारण ऐसा हुआ, नही तो यह बात ही न उठती। पर वह तिरस्कार, वह गुस्सा, एकदम उतर गया था ऐसा नही होगा। शायद माँ ने उसको चुभोने को यह बात नही कही होगी, वह मन के दुख का रोक न पाई। यह समझ न पाई कि क्या कहना चाहिए ? तभी यह सब कह गई होगी। तब भी सरसू के मन म सशय रह गया था। अब शाता बुआ भी यही कह रही है, वह तो समझदार है। वह माँ का स्वभाव अच्छी तरह जानती है। अब मौका है, पूछ ही लू। यह सोचकर ही सरस्वती ने यह कहा था।

'पगली लडकी ! शायद उसने यह समझा है कि उसकी शादी के कारण ही माँ न उसी को लक्ष्य करके ऐसा कह दिया।' यह सोचते हुए शाता ने अत्यत वात्सल्य से सरस्वती को अपनी गोद मे खीच लिया।

सरस्वती का सयम अब टूट गया। उसके भीतर दुख तीव्र आवग से फट पडा।

शाता दयार्द्र होकर बोली

हाँ एकदम ! मन से ! पगली सुब्बक्का कल शाम तक सब भूल

जाएगी। कल को ही वह कहेगी, मुझे काशी जाना है। जरा जल्दी मुहूर्त निकालो।"

सरस्वती न बुआ की गोद से अलग होते हुए आखें पोंछी और बोली, "पता नही क्या होगा ?"

"हाँ तुमने यह बहुत सच कह दिया।"

"आपका मजाक और सच मेरी समझ म नही आता।'

"नही री, मन से कह रही हूँ। यह कोई नही कह सकता कि क्या होगा। कभी-कभी तो जो हो गया है वह भी नही हुआ-सा लगता है। और जो नही हुआ है उसे हो गया समझना पडता है।

"फिर मजाक "

"नही मेरी सरसू बेटी। यह नही।" कहते हुए शाता ने उसे वात्सल्य स देखा और सिर पर हाथ फेरते हुए गोद मे खींचा तो सरस्वती को बडा आश्चय हुआ। 'बुआ यह मन से कह रही हैं या मुझे तसल्ली देने को ?' उसने सोचा।

'नही बुआ, मुझसे गलती हुई मैंने आपकी बात मजाक ।'

शाता के हाथ ने सरस्वती का मुह बद कर दिया।

कभी-कभी ऐसा होता है, जो हो गया है उसे भी कभी नही हुआ कहना पडता है। और जो नही हुआ है उसे हो गया कहना पडता है। शाता ये बातें ऐस कह रही थी मानो गोद मे पडी सरस्वती का उसे बोध ही न हो। उसकी दष्टि दूर बहुत दूर टिकी हुई थी। पता नही कितने वष पुरानी बात है। वह और शामण्णा—इनकी शादी हो गई, नही हुई। न होन पर भी हो गई। समझ सकते हैं न ? इतना परस्पर साि नध्य, सहृदयता, सुख दुख समझन की बात बिना विवाह के सभव है ! विवाह नही हुआ यह सच है। फिर भी हो गया, मान सकते है न ? वसे देखा जाय तो दोनो सयमी हैं यह सच है। फिर भी न हुआ मानना कोई गलत भी नही। कई बार भीतरी मन ने लक्ष्मण रेखा को सीता की भाँति कितनी बार लाँघा नही ? यह लगने पर भी कि मर्यादा की रखा को लाघना गलत है, उस सुख का अनुभव नही किया। *हुआ है या हुआ नही ?* श द छोटे है विचार बडे हैं। शब्द आसान है अथ गहन है। हुआ है या नही हुआ। यह ठीक ढग से कसे कहा जा सकता है ? बाहर जो घटता है उसे देखकर अथवा जो भीतर

होता है उसके बारे म ? बाहर जो घटता है वह बाहरी कारणा से घटता है। जैस फेंका पत्थर निशाने पर पहुँचकर ही रहता है। भीतर की घटना कौन जान ? पत्थर लगने स मारने वाले को आनदआता है, पर लगने वाल को कष्ट होता है। यही क्या ? पत्थर की मार खाकर हँसन वाले भी हाते है। क्या हुआ है क्या नही हुआ है, क्या हुआ ? क्या नही हुआ ? एसा हुआ है ऐसा नही हुआ है। इनमे किसी भी बात का अथ नही। जो होना है सो हागा ही, यही ठीक है। यही सत्य है।

"इतने बडे सत्य को कितनी आसानी से पहचान लिया सरसू ? तुम्हारी बुआ को उसके लिए कितना कष्ट उठाना पडा ? ' कहकर शाता ने लबी सास ली।

मरस्वती एकदम उठ बैठी। दो बूदें उसके मुख पर टपक पडी।

मुझे क्या देख रही हो ? 'पता नही क्या होगा' यह बात तुमने ही कही थी न ?' शाता यह तसल्ली से कहती हुई सरस्वती स मजाक करती उठ खडी हुई।

शामण्णा न कहा, ' कुछ भी नही होगा सीनू। जसा हम करत हैं वैसा ही हाता है।"

सीनू चौंक गया। उसने पूछा, "आपने क्या कहा ?" व लोग काफी देर स चुपचाप बैठे थे, सीनू अपन विचारो मे खोया हुआ था। शामण्णा के एकदम बोलने स वह चौंक पडा। उस 'अपने विचारो म खाया हुआ था' कहने की अपेक्षा यह कहना ठीक होगा कि वह अपन को कास रहा था। कहाँ की बात कहाँ पहुँच गइ। उसने अपनी आदत के मुताबिक बात की थी। पर बात इतनी बढ जाएगी यह वह न जानता था। मुख्यवक्ता की बातें सुनकर वह घबरा गया। वह साध्वी वास्तव म दुखी हो गई। आज तक दबाए दुख को अब निकाल बठी। यह सोचकर उसके रागटे खडे हो गए कि उसम वह भी एक कारण है। जो भी हा, उनकी बटी के पुर्नविवाह का यह स्वय ही एक कारण था न ? 'बच्चे तो कुलभ्रष्ट न हा' कहत समय क्या यह ध्वनि न थी कि तुमन मरी बटी को ता कुलभ्रष्ट कर दिया, अब बट का तो कुलभ्रष्ट मत करो। अच्छे जूत पडे, अच्छा प्रतिफल मिला। मूर्ख है वह महामूर्ख है। दूसरे घर के सुख-दुख म सलाह दने वाला यह कौन

था ? छि ! पर यह बात ऐसी नही ? उसके लिए यह दूसरा घर नहीं। सरस्वती से शादी करने की बात तो अलग रही उससे पहले भी रामण्णा उसका घनिष्ठ मित्र था। उसके लिए हर चीज खुशी से कर रहा था। यही क्यों ? उसे अपना घर मानकर पिता की परवाह न करके यहीं बना है। आश्रम चलाने की जिम्मेदारी भी ले रखी है। यह उसका घर है। सुब्बक्का उसके लिए माँ है उसे उसने दुखी कर दिया। मूर्ख है यह, महा-मूर्ख ! आगे क्या करे। कुछ करने चला था कुछ हो गया। यह सोचकर उसने लम्बी साँस ली।

उसने कहा था, "कुछ करने जाओ, कुछ और हो जाता है ?" इस बात के बाद दोनों कुछ देर तक चुप ही रहे। कुछ देर विचार करने के बाद रामण्णा ने निर्णय देने के स्वर में कहा, "कुछ करने चलो तो कुछ और नहीं होता मीनू। हम जैसा करते हैं वैसा ही होता है।"

मीनू को विश्वास नहीं हुआ। उसने सिर हिलाते हुए एक लंबी साँस ली।

'नहीं सीनू। पहले मुझे भी तुम्हारी ही तरह लगा करता था। कितनी ही बार मैंने अपने आपसे कहा एक काम करने जाओ तो दूसरा ही हो जाता है। यह जानते हुए भी हम क्यों छटपटाते हैं कि यह करो, वह करो। अभी तुम छोटे हो, तुम्हें मालूम नहीं, मालूम होने पर भी शायद याद रहना संभव नहीं। जब मैं यहाँ आया तब मेरी स्थिति कुछ ऐसी ही थी जैसे कि गणेश बनाने चले थे, बन गया बंदर। इसलिए यह कहना गलत है कि मैं करता हूँ। जो होना है वही होता है। समझ में आए या न आए चाहे मन में रहे या न रहे, कभी-कभी हम किसी के निमित्त रूप में उसकी आहुति हो जाते हैं।'

मुझे भी ऐसा लगता है कि यह शाश्वत सत्य है।"

'नहीं सीनू ! यह शाश्वत सत्य नहीं। मैंने भी काफी दिन तक ऐसा समझ रखा था। पर शाश्वत सत्य नहीं। यही नहीं, अब मुझे ऐसा लगता है कि वह सत्य पर आवरण डालने वाली शाश्वत माया है।'

'यह आपके मन की उदारता है। पर अनुभव से तो ऐसा ही लगता है कि मनुष्य बातों का ही वीर है, काम में पण्ड है। यही कहने को मन होता है।

शामण्णा जोर से हँस पड़ा। अपने मन के विचारो के कारण अपराधी की भाति खिन्न हुआ सीनू इस हँसी पर अपने गुस्से को रोक न पाया।

"आप हँस सकते है। शामण्णा जी, यह मजेदार लगा इसमे आश्चय नही। पर मैं यह बात भूला नही कि मजाक के लिए बात कही तो गाल पर छुरे का वार हुआ। आप मुझसे कहते है कि हम जसा करते हैं वैसा हो जाएगा। क्या मैंने यह चोट खाने की खातिर मजाक किया था ?"

"तुम्हारा यह कहना गलत नही सीनू, कि यह मजेदार बात है, वास्तव मे यह मजेदार है। इसमे सबसे मजेदार बात है कि यह जानते हुए भी कि हम करते कुछ है और होता कुछ है, फिर भी हम यह सोचते है कि जसा हम करेंगे वैसा होगा। अरे सीनू ! क्या तुम यह मानते हो कि कारण के बिना काय होता है ?'

सीनू हठी बालक के समान बोला, "अब मानना ही पडेगा। झूठी तसल्ली करनी हो तो यह कह सकते हैं कि बिना कारण के ही काय होता है।"

शामण्णा ने सिर हिलाया, उसके चेहरे की हँसी गायब हो गई और उस पर गम्भीरता छा गइ थी। उसने कहा, "सीनू, यह बहुत गहन विषय है। मैंने इसका भी भली प्रकार अनुभव प्राप्त किया है। यही मजा है देखो, शायद इसी का माया कहते होंगे। हम जैसा करते है वैसा होने पर भी वह हमारी समझ म नही आता। तुम पूछोगे, क्यो ? हम क्से करते हैं यही हमे पता नही रहता। सिर नही हिलाना। बातें मरे लिए भी नई हैं, इसलिए स्पष्ट रूप स समझा नही सकता। फिर जगत की शक्ति हम स बढकर है, कहना गलत है। क्या ? हमी तो वह शक्ति हैं तो यह कहने का क्या अथ कि वह हमारे काबू से बाहर है ? बस बात इतनी ही है कि हम यह भूल जाते है कि हमी वह शक्ति हैं।' भीतर का आदमी भी मैं हूँ, बाहर का जगत भी मैं हूँ। यही बात है न सीनू ? बाहर के आहार और अनुभव स हम बडे होते हैं। है कि नही ? इधर सुनो। इतने दिनो तक मैं यही समझ रहा था कि हमे समझ मे न आने वाली और हमस बडी एक शक्ति है। इसलिए मैं अपने का मैं कौन बडा हूँ सोचा करता था।'

यानी आपका कहना है कि ऐसी कोई शक्ति नही ?"

"है।"

"तो इसमें आपका कौन-सा बड़प्पन है।"

"यही तो मजेदार चीज है। चाह इसी को माया कहो। सीनू जब हम यह कहते हैं कि हमसे बड़ी और हमारी समझ मे न आने वाली एक शक्ति है, तो समझो कि हम असबद्ध बात कहते है। आया समझ म ?"

"समझ जाने से भी क्या फायदा ?'

"यह कैसी बात सीनू ? तुम कहते हो कि समझ जाने से भी 'क्या फ़ायदा ?' 'हम समझ मे न आने वाली शक्ति हमसे बड़ी है' ऐसा कहन से यह अपने आप स्पष्ट हो गया कि हम उसे समझते हैं ?"

"आपने क्या कहा ?"

"हाँ, देखो अब तुम्हारी समझ म आया।"

"समझ म आ गया कह लीजिए शामण्णा जी, पर ऐसे समझन म क्या फायदा ? आप देखते हैं, अनुभव करत हैं और 'यह कह कर रोते हैं कि हम कुछ करने जाते हैं, और कुछ हो जाता है। इसस तसल्ली तो नहीं होगी। इस बुद्धि की कसरत से क्या फायदा ?"

यह सुनकर शामण्णा दुत्कारे बच्चे की तरह हँसा।

"सच है। तुम्हारा कहना सच है सीनू। पर मैं जो कहता हूँ वह भी सच है। फिर भी समझो, मुझसे भी एक गलती हो गई। [illegible] इतने गुस्से म आ गई। रागण्णा ने कहा कि शादी ही नहीं करेगा। [illegible] खटाई म पड गया। तुमने ता 'ऐसे ही होना चाहिए' ऐसी कोई [illegible] की और 'तुम्ह एसा हो जाएगा' यह सदह भी नहीं था। [illegible] दी। उस पर मैंने एक पागल की तरह दर्शन बघार [illegible] कि नहीं। यही मेरी ग़लती है। यह कहन से पहले [illegible] और मेरी बात का क्या सबध है, मैंन अपनी बात [illegible] अक्लमदी ता नए लेखक जसी हो गई। [illegible] चाहिए था कि ग़लती तुम्हारी है।'

"कहिए ज़रूर कहिए। आप अकेले मे [illegible] गया था। मरी ग़लती थी मैं [illegible]।

"हाँ-हाँ, रुको, जल्दी मत करो। [illegible] सो ? तुमने जो बात कही थी वह नहीं

"क्या कहा ?"

'सीनू, मै कह रहा था, तुमने जो कहा वह गलती न थी। पर तुमने कहा 'आपकी बात समझा' वही गलती थी।"

सीनू पागल की तरह एक खोखली हँसी हँस पडा। "अब आप तसल्ली तो दीजिएगा।" यह उसने ऐसे कहा मानो अपने को कोस रहा

मीनू, पूरा सुनना हो तो सुनो। तुमने ऐसी बात कही, मालूम क्या ? तुम सुब्बक्का का मन दुखाना नही चाहते थे और रागण्णा को गुस्सा नही दिलाना चाहते थे। पर तुमने ऐसा कर दिया। जानते हो, क्य परिस्थिति न तुम्हे ऐसा करने को बाध्य कर दिया। रागण्णा हरि लडकी से शादी करना चाहता है, यह बात सुब्बक्का को पता चल गई, अच्छा हुआ। रागण्णा को भी अपनी मा के डर से हरिजन लडकी से विव की बात छोडनी नही चाहिए थी। तुमने ऐसी परिस्थिति पैदा करने के लि ही बात नही। यह तुम्हे समझ जाना चाहिए था। तुम जो कुछ कर चाहते थ वसा ही हुआ, कुछ और नही हुआ। जो काम करने की तुम्ह मन न हठ पकडी थी वैसा ही करने की बात तुम्हारी बुद्धि को मालूम थी, पर वह तुम्हारे हृदय ने कर दी। यह तुम्ह समझ लेना चाहिए थ क्या ?'

सीनू जोर से हँस पडा।

'क्यो ? क्यो हँस रहे हो ?"

'शामण्णा जी, आपने राजनीति क्यो छाड दी ? यह सोचकर मुझ बड आश्चय हाता है। अपने किये का समथन करने की इतनी बौद्धिक शक्ति ।'

"मीनू, जरा ध्यान से सुनो, अब तक के मरे सावजनिक जीवन म जं प्रश्न मैं अपन आपसे पूछकर उत्तर न द पाया, वही तुमने पूछ लिया उत्तर दता हूँ सुनो "

नही, नही शामण्णा जी, राजनीति शब्द का प्रयोग मैंने उस अर्थ म ।

'सुना पगले, मेरी बात ता पूरी सुन लो, तुम्हारा राजनीति स मतलब स्वतत्रता सग्राम से है न ? वह मैंने नही छोडा पर मैं उसे ठीक तरह से समथन क प्रयास मे हूँ। वह भी देश से सबधित विषयो म ऐसा नही

भी नही। नृत्य करना उसका स्वभाव है।"

सीन तब हँसता हुआ बोला, "मेरा स्वभाव है उसे अपने खातिर समझना।"

"ऐसा समझना एक बधन है। प्रकृति नृत्य करती है, पुरुष देखता है। जब पुरुष नही देखता, तब भी प्रकृति नाचती ही रहती है। ससार चलता रहता है। हम जीते हैं। हम जब नही भी जीते तब भी ससार चलता ही रहता है।"

"मतलब यह है कि अत मे सुब्बक्का इस शादी के लिए मान जाएगी, यह कहिए।"

"शाबाश! अब तुम तेज हो गये हो। तुम्हे इस बात का सबध सूझ गया। तुम्हारी शादी के लिए भी सुब्बक्का तयार न थी।'

सीनू ने हँसते हुए कहा, "तो अब उसे रद्द कर देंगे क्या?'

"डरो मत सीनू, तुम घर, पत्नी और परिवार को छोडकर मेरे साथ गप्प लगाने बैठे रहे तो तुम्हारी शादी अपने आप रद्द हो जाएगी।' कहते हुए शामण्णा ने उसकी पीठ ठोकी। "देखो, सीनू, शादी नही चाहिए पर बेटी चाहिए। उस समय जो हुआ, अब भी वही होगा।' कहते हुए उसका हाथ पकडकर खीचता हुआ शामण्णा भीतर गया।

शामण्णा की बात पर विश्वास रखने वाला सीनू इस प्रतीक्षा म था कि आज नही तो कल सुब्बक्का इस शादी के लिए मान जाएगी। अत म रागण्णा ने यही कहा कि पहले नौकरी बाद मे शादी हो तो ठीक रहगा। "शामण्णा जी, शादी के लिए लडकी अस्पृश्य है, लडका नौकरी के लिए अस्पश्य है!" यह बात सीनू ने एक दिन इस दुख से कही क्योकि रागण्णा का अपनी जाति के कारण ही नौकरी नही मिल पा रही थी।

फिर स एक दिन सीनू ने कहा "शामण्णा जी, लडाई खत्म हान तक शायद नौकरी मिल जाय।'

शामण्णा बोले "लडाई म मरने वालो की जगह खाली नही हागी क्या?

इस पर सीनू बोला, यमलोक म भी जाति देखकर अगर न लिया जाय ता उसके लिए नौकरी खाली हो जाएगी।

लडको की यह बात सुनकर शामण्णा दुखी हुआ। पर उसने न आशा छोडी न प्रयत्न छोडा। अत मे एक दिन इण्टरव्यू के लिए बुलावा आया।

# 17

'बेकार के लोग है। इनसे बात करने से भी क्या लाभ ? 'दिस इण्टरव्यू इज ए वेस्ट ऑफ टाइम।' भरमा ने कहा। भरमा बी० राम अब एक बडे ओहदे पर है फिर भी उसे तसल्ली नही। पिता को ढूढ-ढूढकर थक गया। अब उसके मन मे सदा दुख रहता। पिता की याद अब उसे इस तरह आती 'मैंने उसके लिए क्या किया ? मैं उसे बिट्टूर मे एक खेत दिला देता एक घर बनवा दता, और उसे वहाँ सुख से बसा देता तो तसल्ली होती चाहे जब मिले चाहे तो इसी क्षण ! वह सब कुछ करने को तैयार है। मिनट, दिन और दिन के बाद महीने बीतते चले गये। पिता की कोई खबर ही नही। धत ! इस इण्टरव्यू लेने की जिम्मेदारी मुझ पर क्यो डाली गई ? ओह, मैं बडा अफसर हूँ न ? आग लगे इस बडे ओहदे को! अब इससे किसे लाभ है ? अरे, यह क्या, आर० जी० बिट्टूर ? यह कौन है ? हमारे गाँव का ।' उसे उस आवेदन-पत्र को देखकर पिता को देखने के बराबर आनद आया। इण्टरव्यू के दिन के लिए वह बडा उत्सुक था। इण्टरव्यू के लिए आये लोगो से वह मिला, उनसे बातचीत की 'अब लडाई का जमाना है, हमे काम के लिए आदमियो की तुरत जरूरत है। आप कल से ही काम पर आ सकेंगे ? उसने यह आर० जी० बिट्टूर से अग्रेजी मे ही पूछा। तब रागण्णा ने 'जी हाँ' कहा। उसे इस बात का ध्यान ही न था कि वह कौन है और उसका नाम क्या है ? उसके मन मे केवल एक ही बात थी 'कल से काम पर आना है वेतन मिलेगा माँ को पसा भेज सकूगा। आश्रम की सहायता कर सकूगा। सीनू है, सब सँभाल लेगा। आखिर नौकरी तो मिली, फिर भी नौकरी पर हाजिर हाने के बाद ही घर खबर दूगा। कौन जाने ?'

# 18

अगले दिन रागण्णा काम पर हाजिर होने के लिए पहुँचा। किसी न कहा, 'आपको साहब बुला रहे हैं।" वह सोच ही रहा था कि कौन साहब ? अभी तो मैं हाजिर भी नही हुआ। इतने ही मे सुनाई दिया

"आर० जी० बिट्टूर आपको भीतर बुला रहे हैं।"

वह भीतर गया। सामने आराम से बैठे बडे साहब का देखकर रागण्णा का मुह खुला का-खुला रह गया, 'यह बडे साहब ? उससे पाँच छ साल ही तो बडे होग। इन्ही ने तो कल इण्टरव्यू लिया था।'

"बैठिए।"

साहब का स्वर। कन्नड के शब्द।

"बिटटूर से आये है ?'

रागण्णा का मुह और खुल गया। फिर भी उसने सिर हिलाकर जवाब दिया।

किस घराने से हैं ?"

'द द देशपाडे ?"

रघुनाथराय से आपका क्या सबध है ?"

"मैं उनका पोता हूँ।'

'तो आप गुण्डेराय के बेटे हैं ?

"जी— जी हाँ।"

तो यह बात है। मैं बिटटूर को अच्छी तरह जानता हूँ।" कहते हुए साहब ने सामने रखे कागज उठा लिये।

भरमा ने कहा था, "मैं बिटटूर को अच्छी तरह जानता हूँ।" इसका कारण यही था कि पिता की याद की वजह से बिटटूर के अनुभव याद आ रहे थे। वह भी तब का बिट्टूर !

रागण्णा न सोचा 'क्या यह बिटटूर को जानता है—उसका अर्थ यह था कि उसके अलावा बिटटूर को और कौन जान सकता है।'

बिटटूर को अच्छी तरह जानता हूँ' कहने वाले भरमा को आज का

बिट्टूर मालूम नही था।

'क्या बिट्टूर को यह जानता है ?' सोचने वाले रागण्णा को भी तब का बिट्टूर मालूम नही था।

आज—बिट्टूर है।

पहले—बिट्टूर था।

आगे—बिट्टूर अवश्य रहेगा।

अपने लिए बिट्टूर है। 'बिट्टूर मालूम है' कहने वालों का भला क्या मालूम ?

एक क्षण जी कर, दूसरे क्षण ही मर जाने वाला प्राणी सतत चलने वाली सृष्टि को भला क्या जानेगा ?

तरते हुए आकर मिल जाना और दूसरे क्षण बिछड जाने वाल लकडी क टुकडो को फिर से मिलन पर पहले की वात याद रह सकती है ?

बिट्टूर सतत है, बिट्टूर प्रवाहमय है।

अपने आपको एक बूद समझन वाले को प्रवाह का ज्ञान कस हो सकता है ?